''वर्तमान विश्व राजनीति में गाँधीजी के विचारों की प्रासंगिकता''

"Relevance of Gandhian Thoughts in Contemporary World Politics"

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

के समाज विज्ञान संकाय की पीएच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

शोध निर्देशिका

डॉ0 मंजु मालव
विभागाध्यक्ष,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय महाविद्यालय, कोटा

शोधार्थी

ओम प्रकाश शर्मा
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय महाविद्यालय, कोटा

राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय महाविद्यालय, कोटा
कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)
2015

CERTIFICATE

It is certified that the:-

1. Thesis entitled **"Relevance of Gandhian Thoughts in Contemporary World Politics",** submitted by **Mr. Om Prakash Sharma** is an original piece of research work carried out by the candidate under my supervision.
2. Literary presentation is satisfactory and the thesis is in a form suitable for publication.
3. Work evinces the capacity of the candidate for critical examination and independent judgment.
4. Candidate has put in at least 200 days of attendance every year.

Date:- Signature of supervisor

प्राक्कथन

'वर्तमान विश्व राजनीति में गाँधीजी के विचारों की प्रासंगिकता', शीर्षक पर शोध प्रबन्ध विश्व शांति की दिशा में एक प्रयास है। इस शोध कार्य द्वारा यह जानने का प्रयास किया गया है कि वर्तमान समय में गाँधीजी के विभिन्न विचार कितने प्रासंगिक सिद्ध हो सकते है ? अथवा ऐसे कौनसे प्रयास किये जाये जिससे विश्व कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया जा सके ? वर्तमान विश्व अनेक समस्याओं से त्रस्त है जिसमें हिंसा, आतंकवाद, गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, अशिक्षा आदि कई समस्याएँ विश्व राजनीति के समक्ष विद्यमान है। इन समस्याओं के कारण मानव के जीवन का लगभग प्रत्येक पक्ष प्रभावित हो रहा है। अतः मानवीयता की भावना को जीवित रखने एवं विश्व के प्रत्येक नागरिक का जीवन सुरक्षित रखने हेतु गाँधी दर्शन एक प्रभावी मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है, इसी दिशा में प्रयास किये गये है।

स्थानीय स्तर से विश्व के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करने वाला गाँधी दर्शन वर्तमान समस्याओं से किस प्रकार लड़ सकता है ? अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गाँधीजी के विचारों का विस्तार कितनी व्यापकता लिये हुए है ? आज इस ग्लोबल विश्व के समक्ष जो विश्व स्तरीय चुनौतियाँ है, उन्हें देखते हुए गाँधी दर्शन आज भी उतना ही स्वीकार्य है जितना पहले था, शायद उससे भी कहीं ज्यादा। वर्तमान समाज में लक्ष्य प्राप्ति करने एवं अन्यायपूर्ण समाज का विरोध करने के तरीके सर्वाधिक भ्रष्ट रूप ले रहे है। अतः लक्ष्य प्राप्ति हेतु साधनों की पवित्रता एवं अन्याय का विरोध करने हेतु सत्याग्रह की अवधारणा सीधे तौर पर प्रत्येक व्यक्ति के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकती है। आज गाँधी दर्शन संपूर्ण विश्व को एक नया दिशा–बोध दे रहा है। आज गाँधी दर्शन इस सदी की एक जीवन पद्धति है। आज जब विश्व एक नये ध्रुवीकरण की ओर अग्रसर है तो गाँधी दर्शन इस नयी सदी में और भी समसामयिक और प्रासंगिक हो गया है। विश्व के प्रत्येक कौने तक गाँधीजी के विचारों का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

अमेरिका, एशिया, यूरोप, अफ्रीका में कई क्रांतियाँ ऐसी हुई जिन पर गाँधीजी के विचारों का प्रभाव स्पष्ट रूप से पड़ा और जो अंततः सफल भी हुई। जिनके बाद अन्याय की स्थिति में बदलाव आया। किन्तु वर्तमान विश्व राजनीति की स्थिति को ध्यान में रखते हुए गाँधीवादी सिद्धांतों की व्यावहारिक जीवन में और अधिक उपयोगिता अनुभव की जा रही है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में प्रथम अध्याय परिचयात्मक रखा गया है। इस अध्याय के अंतर्गत सर्वप्रथम शोध विषय 'वर्तमान विश्व राजनीति मे गाँधीजी के विचारों की प्रासंगिकता' का परिचय वर्णित किया गया है। जिसमें शोध प्रबन्ध में लिखे गये सभी अध्यायों से संपर्क साधते हुए विषय परिचय को अधिक स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। तत्पश्चात् शोध के मुख्य उद्देश्यों को वर्णित किया गया है। उद्देश्यों के आधार पर शोध कार्य के महत्व का वर्णन इस अध्ययन में किया गया है। उपलब्ध साहित्य की समीक्षा भी इस अध्याय का एक भाग है। जिसमें शोध विषय 'वर्तमान विश्व राजनीति में गाँधीजी के विचारों की प्रासंगिकता' से संबंधित पुस्तकों, लेखों, विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं, अनुच्छेदों, समाचार पत्रों का अध्ययन सम्मिलित है। इस समीक्षा के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया गया है कि विषय से संबंधित वे कौनसे पहलू है जो अध्ययन से लगभग नहीं जुड़ पाये ? ताकि उसी दिशा में शोध का प्रसार किया जा सके। अन्त में अनुसंधान प्रविधि का वर्णन किया गया है।

द्वितीय अध्याय, विश्व राजनीति : हिंसा एवं आतंकवाद को विस्तार देते हुए सर्वप्रथम राजनीति से तात्पर्य, विश्व राजनीति से तात्पर्य एवं वर्तमान विश्व राजनीति की नवीन दिशाओं का वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् हिंसा की अवधारणा स्पष्ट की गई है, जिसमें हिंसा के इतिहास को विभिन्न धर्मो के संदर्भ में स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। वर्तमान विश्व समाज में संरचनात्मक हिंसा किन–किन रूपों में विद्यमान है ? इसे स्पष्ट करने के प्रयास किये गये है। गाँधी दर्शन के अनुसार हिंसा की अवधारणा को स्पष्ट किया गया है। तत्पश्चात् विश्व राजनीति एवं हिंसा में संबंध बताया गया है। आतंकवाद,

आतंकवाद का इतिहास एवं आतंकवाद की वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय स्थिति, धार्मिक कट्टरता को ध्यान में रखते हुए मुसलमानों पर उठते सवालों को भी प्रकाश में लाया गया है। विश्व राजनीति द्वारा आतंकवाद पर डाले गये प्रभाव एवं आतंकवाद के विश्व राजनीति पर प्रभाव का भी वर्णन किया गया है। गाँधी दर्शन एवं आतंकवाद बिन्दु का वर्णन इस अध्याय के अंत में किया गया है।

तृतीय अध्याय विश्व राजनीति एवं गाँधी दर्शन से संबंधित है। जिसमें गाँधी दर्शन के विभिन्न वैचारिक बिन्दुओं को विश्व राजनीति से जोड़ने का प्रयास किया गया है। उनके विश्व बंधुत्व के विचार, राजनीति का धार्मिक आधार, सत्य, सत्याग्रह, न्यासिता, सर्वोदय का दर्शन एवं शिक्षा की अवधारणा से संबंधित विभिन्न बिन्दु जो वर्तमान विश्व राजनीति का आधार बने, को इस शोध में उपयोगी तथ्यों के रूप में सम्मिलित किया गया है।

चतुर्थ अध्याय गाँधीजी का अहिंसा दर्शन है, जिसमें अहिंसा की अवधारणा को विस्तृत रूप से स्पष्ट किया गया है। अहिंसा का ऐतिहासिक परिदृश्य इस अध्याय में स्पष्ट किया गया है। अन्य प्रमुख बिन्दुओं में महात्मा गाँधी की अहिंसा की अवधारणा स्पष्ट की गई है। जिसमें गाँधीजी की व्यावहारिक अहिंसा की अवधारणा प्रकाश में लाई गई है। गाँधीवादी अहिंसा के लक्षण एवं वर्तमान संदर्भ में अहिंसा प्रशिक्षण के सूत्रों को प्रकाश में लाया गया है। अहिंसा व विश्व राजनीति, अहिंसा एवं सुरक्षा प्रहरी के रूप में एवं अहिंसा व प्रतिरोध के मार्ग को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

पंचम अध्याय गाँधीजी के सत्य अहिंसा संबंधी विचारों का अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव एवं व्यापकता से संबंधित है। इसके अंतर्गत विश्व में गाँधीजी के विचारों के विस्तार को पहचानने का प्रयास किया गया है। इसके लिये महाद्वीपवार विभाजन कर विभिन्न विश्व स्तरीय महापुरूषों का अध्ययन किया गया है। मार्टिन लूथर किंग जूनियर, नेल्सन मंडेला, बराक ओबामा, डेसमण्ड टूटू, अल्बर्ट आइंस्टीन, मदर टेरेसा, अन्ना हजारे, खॉन अब्दुल गफ्फार खॉ, दलाई लामा,

आंग सान सू की, बॉन की मून को गाँधीजी के वैचारिक एवं व्यावहारिक विस्तार के रूप में देखा गया है।

षष्ठम् अध्याय गाँधीजी की नीतियों की वर्तमान प्रासंगिकता से संबंधित है। इसके अंतर्गत गाँधीजी की विश्व दृष्टि सामाजिक चिंतन एवं कर्म के रूप में, उनकी स्वदेशी अहिंसक जीवन–दृष्टि, अहिंसा का व्यावहारिक दृष्टिकोण, सत्याग्रह की रणनीति, नीतिप्रधान राजनीति का प्रारंभ, सामाजिक व राजनैतिक परिवर्तनों में उनकी वैचारिक प्रासंगिकता, गाँधीवादी उपयोगी दृष्टि के रूप में मानवीय न्याय, अधिकार एवं कर्तव्य, गाँधी शिक्षा दर्शन, वैश्वीकरण की चुनौतियों के दौर में प्रासंगिकता, उत्तर आधुनिकता के संदर्भ में गाँधी, नागरिक जीवन की अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ में प्रासंगिकता एवं गाँधी चिन्तन की समीक्षा के रूप में वर्तमान समय में गाँधीजी की नीतियों के संबंध में उठते अप्रासंगिकता के प्रश्नों को स्पष्ट करने के प्रयास किये गये है।

शोध कार्य को अंतिम रूप प्रदान करते हुए इसके निष्कर्ष एवं सुझावों पर विचार किया गया है तत्पश्चात् अध्ययन में सहयोगी सामग्री को संदर्भ ग्रन्थ सूची के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

*****

आभार निवेदन

'वर्तमान विश्व राजनीति में गाँधीजी के विचारों की प्रासंगिकता' विषय पर शोधकार्य हेतु सर्वप्रथम मैं सिद्धि विनायक भगवान श्री गणेश एवं माँ शारदे के चरण कमलों में सादर नमन् करता हूँ। जिनके आशीर्वाद के बिना शोध जैसा जटिल कार्य सम्पन्न नहीं किया जा सकता।

प्रस्तुत शोधकार्य मेरी शोध निर्देशिका विद्वान, सरलचित्त एवं वर्चस्वी डॉ. मंजु मालव, विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय महाविद्यालय, कोटा के मार्गदर्शन की छाया एवं उत्साहवर्धन से ही पूर्ण हो सका है। अतः मैं असीम स्नेह, सहयोग एवं मार्गदर्शन के प्रति अन्तःमन से हार्दिक आभारी हूँ। साथ ही मैं आभारी हूँ गुरूदेव श्री मान जी. एल. मालव साहब का जिन्होनें जिस सहृदयता एवं उदारनीति से मुझे मार्गदर्शन दिया वह प्रेरणादायी व अविस्मरणीय है। आपका मार्गदर्शन जीवन में प्रगति के पथ पर अग्रसर करने में अग्रणी भूमिका का निर्वाह करेगा।

तदुपरांत इस अध्ययन के आधार स्तंभ, प्रेरक तथा मार्गदर्शक, परम्श्रद्धेय मेरे बड़े भ्राता श्री देवेन्द्र कुमार शर्मा जिन्होनें निराशा के क्षणों में मुझे हर पल आशीर्वाद प्रदान किया, उनकी उदारता एवं प्रोत्साहन मेरा सतत् सहयोगी रहा है।

शोध अध्ययन में जिनके प्रयासों ने मुझे नया जीवन दिया वे है मेरी धर्मपत्नी श्रीमती कीर्ति शर्मा, जिनका उत्साहवर्धन, त्याग, प्रेरणा, सहयोग एवं अद्वितीय समर्थन मुझे जीवन पर्यन्त स्मरणीय रहेगा। शोध कार्य के दौरान मुझे हमेशा सकारात्मक उर्जावान बनाये रखने में मेरे चुलबुले पुत्र वेदान्त को स्नेह प्रकट करता हूँ जिसने शोध कार्य करते समय अपनी नटखट बाल सुलभ चेष्टाओं तथा मुस्कान से हर वक्त मुझे प्रसन्न रखकर शोध में रूचि प्रदान की।

मैं हृदय के अंतर्स्थल से आभारी हूँ श्री गजेन्द्र कुमार शर्मा का जिन्होनें मेरे द्वारा हस्तलिखित शोध प्रबन्ध को तकनीकी आधार प्रदान कर मूर्त

रूप देकर प्रकाश में लाने के मेरे प्रयासों को साकार करने में अतुल्य सहयोग प्रदान किया।

इसके अतिरिक्त मेरे सभी रिश्तेदारों एवं मित्रगणों की मंगलप्रेरणा तथा सहयोग ने मेरा मार्गदर्शन करके इस शोध कार्य को सरलता प्रदान की एवं मुझमें विश्वास का संचार करते रहे है।

मै हृदय के अन्तःस्थल से इन सभी के प्रति कोटि–कोटि आभार व्यक्त करता हूँ।

दिनांकः– **(ओम प्रकाश शर्मा)**

स्थानः– **शोधार्थी**

विषय – सूची
(List of Contents)

विषय–सूची

(List of contents)

अध्याय	विषयवस्तु	पृष्ठ संख्या
प्रमाण–पत्र		
प्राक्कथन		I-IV
आभार निवेदन		V-VI
प्रथम अध्याय	परिचयात्मक	1–26
द्वितीय अध्याय	विश्व राजनीति : हिंसा एवं आतंकवाद	27–62
तृतीय अध्याय	विश्व राजनीति एव गाँधी दर्शन	63–94
चतुर्थ अध्याय	गाँधीजी का अहिंसा दर्शन	95–144
पंचम अध्याय	गाँधीजी के सत्य–अहिंसा संबंधी विचारों का अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव एवं व्यापकता	145–210
षष्ठम् अध्याय	गाँधीजी की नीतियों की वर्तमान प्रासंगिकता	211–266
निष्कर्ष एवं सुझाव		267–290
संदर्भ ग्रन्थ सूची		291–304

प्रथम अध्याय

परिचयात्मक

प्रथम अध्याय

परिचयात्मक

अध्ययन की प्रकृति

वर्तमान विश्व राजनीति के बदलते परिप्रेक्ष्य में मानव जाति आशा एवं आकांक्षा के संयुक्त भाव से भविष्य की ओर देख रही है। एक ओर वैज्ञानिक और तकनीकी क्रांति का अपार वैभव एवं तिलिस्म है, वही दूसरी ओर व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्तर पर बढती हिंसा एवं प्रतिस्पर्धा ने नैतिक एवं मानवीय मूल्यों को विस्मृत कर जीवन को अस्थिर एवं असुरक्षित बना दिया है। आज उत्तरजीविता का भयावह संकट विश्वव्यापी चिंता का विषय बन गया है।

वैज्ञानिक प्रौद्योगिकीय विकास, राजनैतिक संगठन एवं प्रक्रिया, अर्थव्यवस्था, संस्कृति, सामाजिक अंतर्सम्बन्ध एवं व्यक्ति की मानवीयता सभी क्षैत्रों में निरंतर बदलाव दिखाई देता है। इस परिवर्तन का क्षैत्र एवं प्रभाव इतना व्यापक है कि कभी 'इतिहास के अन्त' की चर्चा होती है, तो कभी 'सामाजिकता की समाप्ति' की तथा कभी औद्योगिक व्यवस्था एवं प्रबन्धन के विरासत की समाप्ति की। बढता हुआ भूमण्डलीकरण राज्य की संप्रभुता, सामाजिक–सांस्कृतिक बहुलता एवं व्यक्ति की स्वायत्तता के संदर्भो में अब तक की संभवतः सबसे गम्भीर चुनौती प्रस्तुत कर रहा है। सदी के अंतिम दशक में समाजवादी राजव्यवस्थाओं के विघटन के बाद यह धारणा बलवती हुई है कि अब विश्व में मात्र पूँजीवादी–उदारवादी विकल्प ही शेष है तथा यही श्रेष्ठतम विकल्प भी है। यह धारणा नितांत भ्रामक है।

ज्ञातव्य है कि विश्व में ये परिवर्तन अनायास नहीं हुए है। ये सभी एक दीर्घकालिक ऐतिहासिक प्रक्रिया के परिणाम है। यह प्रक्रिया औद्योगिक क्रांति के उद्भव के साथ ही प्रारंभ हो गई थी तथा निरंतर विकसित एवं बलवती होती रही है। इसकी दिशा का पूर्व अनुमान तीन शताब्दियों पहले ही स्पष्ट होने लगा था तथा इस दिशा में परिवर्तन की संभावनाएँ निकट भविष्य में नगण्य ही प्रतीत

होती है। परिवर्तन की इस दिशा ने भौतिक सुख–समृद्धि की असीम संभावनाएँ प्रस्तुत की है किन्तु उसके लाभ का दायरा संकुचित से अधिक संकुचित होता गया है। वैज्ञानिक–प्रौद्योगिक उपलब्धियों ने मानवीय रचनात्मकता के उल्लेखनीय क्षितिज हासिल किये है किंतु इस प्रक्रिया में विकसित पर्यावरणीय संकट से स्वयं मानवता का अस्तित्व खतरे में है।

आज विश्व के समक्ष कई समस्याएँ सिर उठाये खडी है जिनमें आतंकवाद एवं हिंसात्मक गतिविधियाँ विश्व शांति के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। विश्व में राजनीतिक गतिविधियों को आतंकवाद अपने क्रियाकलापों द्वारा निरंतर प्रभावित कर रहा है। जिसके कारण उचित एवं न्यायपूर्ण कार्यप्रणाली का अस्तित्व ही खतरे में है।

बीसवी सदी के प्रारम्भ में ही गाँधी ने परिवर्तन की इस दिशा का सशक्त प्रतिवाद किया था। राज्य का दमनात्मक संयंत्र हो अथवा सामाजिक संरचना की प्रतिबंधित संस्थाएँ, सांस्कृतिक विरासत की वर्चस्ववादी मूल्य व्यवस्थाएँ हो अथवा आधुनिक विकास की अवधारणा द्वारा शोषण की वैधता–गाँधी का प्रतिवाद बुनियादी था, सम्पूर्ण था। वस्तुतः गाँधी का प्रतिवाद जिन मानवीय एवं सामाजिक सरोकारों से संपृक्त था वे आज भी उतने ही महत्वपूर्ण एवं समाधान की प्रतीक्षा में है, जितने गाँधी के स्वयं के काल में थे। संभवतः आगामी सदी में भी रहेंगे, क्योंकि फिलहाल परिवर्तन की उक्त दिशा परिवर्तित होती नही दिखाई देती। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि गाँधी ने मात्र प्रतिवाद के लिये प्रतिवाद नहीं किया, प्रत्युत वैकल्पिक दिशा भी प्रस्तुत की– व्यक्ति, संरचना, इतिहास सभी स्तरों पर और उनके विकल्प भी, उनके प्रतिवाद की तरह उनके संदर्भ की सामयिकता से बहुत आगे, नवीन संदर्भो के लिये प्रासंगिकता की संभावनाएँ समाहित किये हुए है।

विश्व पटल पर महात्मा गाँधी का अभ्युदय एक महान घटना है। गाँधीजी को दो रूपों में जाना जाता है– राजनेता एवं अध्यात्मवेत्ता। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में प्रमुखतः दो बातों की भूमिका होती है– अन्तःचेतना एवं

प्रवर्तित परिस्थितियाँ। अन्तःचेतना स्वतः स्फूर्त होती है। इस आधार पर होने वाले व्यक्तित्व निर्माण के लिये पृथक प्रयासों की आवश्यकता नहीं होती। इसका निर्माण पेड़ों पर पत्तियाँ आने के सदृश स्वाभाविक होता है। इस कारण इसमें कृत्रिमता नहीं होती यह शाश्वत होता है। दूसरी ओर देश काल की विद्यमान परिस्थितियाँ व्यक्ति को कुछ विशिष्ट आचरण हेतु प्रेरित/विवश करती है। इसके लिये व्यक्ति कुछ खास प्रयास करता है, संभव है इस निमित्त किया गया आचरण व्यक्ति के मौलिक स्वभाव से कुछ विचलित हो सकता है। वैशिष्ट्य एवं संस्कारित होने के कारण इसमें कृत्रिमता रहती है और इस कारण यह चिरन्तन हो, ऐसा आवश्यक नहीं। किन्तु महापुरूषों में यह सामान्य लक्षण होता है कि वे परिस्थितिवश उठाये गये कदमों में भी भरपूर संयम का बर्ताव करते है, इस कारण ऐसे आचरण में भी वे किसी सीमा तक अपने स्वाभाविक गुणों की छाप छोड़नें में सफल रहते है। गाँधीजी के संदर्भ में इसे देखा जाये तो सत्य, अहिंसा संबंधी मौलिक सद्गुण उनमें स्वाभाविक रूप से विद्यमान थे। इन मौलिक सद्गुणों का प्रयोग उन्होनें कृत्रिम रूप से स्वदेशी, असहयोग, सविनय अवज्ञा, नमक कानून को भंग करना, भारत छोडो आंदोलन, करो या मरो का नारा एवं स्वतंत्रता के समय गाँधीजी का आचरण के रूप में किया। गाँधीजी ने अपने लंबे राजनीतिक जीवनकाल में अपने चरित्र के मौलिक गुणों पर सामान्यतः प्रवर्तित परिस्थितियों को हावी नहीं होने दिया और राजनीतिक स्वतंत्रता आंदोलन को अपने अन्तर्मन की आवाज के अनुरूप चलाने का सफल प्रयोग किया। यह गुण उनकी महात्मा की उपाधि को चरितार्थ कर देता है।

गाँधी चिंतन की मूल प्रत्ययात्मक स्थापनाएँ उन्नीसवी सदी के उत्तरार्ध से बीसवी सदी के मध्य तक उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद तथा दमन के विरूद्ध संघर्ष में विकसित हुई। स्वाधीनता संग्राम की दीर्घावधि में अनेक स्तरों पर संशोधन, परिमार्जन एवं पुनर्व्याख्या भी प्रस्तुत की गई, किंतु मूल प्रत्ययात्मक मान्यताओं पर गाँधी जीवनपर्यन्त अडिग रहे। मूलभूत मूल्यों के प्रश्न पर उन्होनें समझौता नहीं किया। साथ ही, राजनैतिक रणनीति के स्तर पर उन्होनें अपने

प्रत्ययों को पर्याप्त लचीलापन एवं खुलापन दिया। संभवतः इसीलिये वे विपरीत परिस्थितियों में भी सर्ववर्गीय सर्वजातीय राष्ट्रीय जन–आंदोलन विकसित करने में सफल रहे।

इस नयी सदी में गाँधीजी के दर्शन की नयी परिभाषा की आवश्यकता है। आज प्रश्न यह भी उठाया जा रहा है कि क्या गाँधीजी के दर्शन की इस नयी सदी के बदलते हुए परिदृश्य में उतनी ही प्रासंगिकता है, जितनी पहले थी। आज इस ग्लोबल विश्व के समक्ष जो विश्व स्तरीय चुनौतियां है, उन्हें देखते हुए गाँधी दर्शन आज भी उतना ही स्वीकार्य है जितना पहले था, शायद उससे भी कहीं ज्यादा। वर्तमान राजनीतिक समाज में गाँधीवादी वैचारिक चिंतन एक प्रभावी मार्गदर्शक साबित होगा। गाँधीजी की साध्य–साधन की अवधारणा लक्ष्य एवं लक्ष्य प्राप्ति के साधनों की पवित्रता पर बल देती है, जो कि मानव के लिये सद्मार्ग का रास्ता निश्चित करती है। अन्यायपूर्ण समाज का विरोध किस प्रकार किया जाये, इस दृष्टि से सत्याग्रह की अवधारणा अत्यंत प्रभावी उपाय है।

आज गाँधीवादी दर्शन संपूर्ण विश्व को एक नया दिशा–बोध दे रहा है। गाँधी दर्शन की नयी व्याख्या हमारे सामने है। हिंसा, आतंक, गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, बिखराव और दहशत आदि समस्याओं से जूझते हुए इस विश्व को इन दिनों में गाँधी दर्शन और उनका अहिंसा का प्रयोग–सूत्र ही एकमात्र चिराग है, जो इसे नया रास्ता दिखा सकता है। वर्तमान में विश्व में कई आतंकवादी संगठन विद्यमान है जो अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिये विभिन्न राष्ट्रो के राजनीतिक नेतृत्व पर दबाव बनाने में कसर बाकी नहीं छोड़ रहे है। आतंकवादी संगठन आई. एस. इसका ज्वलंत उदाहरण है, जिसने अपनी सैनिक शक्ति किसी राष्ट्र की सैनिक शक्ति से अधिक मजबूत कर संपूर्ण विश्व की नाक मे दम कर रखा है। आई. एस. ने अपने को न केवल लीबिया, सीरिया, ईराक तक सीमित रखा वरन् इसकी इच्छा अब यूरोप व एशिया में भी अपना दबदबा साबित करने की है। अपनी इच्छाओं को साकार रूप देने के लिये ये संगठन

अमानवीय हथकंडे अपनाने से भी नहीं चूकते। प्रवासी नागरिक भी इनके अत्याचारों का शिकार बनते जा रहे है। आज समाचार पत्रों की प्रमुख खबरें इन्ही घटनाओं से संबंधित होती है।

आतंकवाद के साथ हिंसा का भी घनिष्ठ संबंध है। बिना हिंसा के आतंकवाद अधूरा है। हिंसा शब्द से हमें इसके विभिन्न प्रतिरूपों का बोध होता है। जिनमें दिनोंदिन नये–नये प्रतिरूप हमें दिखाई देते है। जैसै– सांप्रदायिक हिंसा, राजनीतिक हिंसा, सांस्कृतिक हिंसा, घरेलू हिंसा आदि। इनका अन्त हमें दिखाई नहीं देता। एक प्रकार की हिंसा से दो या तीन नयी हिंसा के उत्पन्न होने की संभावना निरंतर बनी रहती है।

गाँधीजी से पूर्व विश्व में अहिंसा की पारंपरिक धारणा प्रचलित थी जिसका तात्पर्य था केवल हिंसा न करना। गाँधीजी ने अपने चिंतन में अहिंसा को एक अलग अर्थ में प्रस्तुत किया। उनके अनुसार अहिंसा एक प्रचंड एवं अमोघ शस्त्र है। जहां दया नहीं है वहां अहिंसा नहीं हो सकती। जिसमें जितनी दया है उतनी हीं अहिंसा है। हिंसा की शिक्षा में मारना सीखना पड़ता है, जबकि अहिंसा की शिक्षा में मरना सीखना पड़ता है। उनके द्वारा अहिंसा को एक शक्ति के रूप में पहचाना गया, जिसे सत्य का सहयोग लेकर प्रयोग में लाया जाता है। गाँधीजी की सत्याग्रह संबंधी विचारधारा में विरोध के अहिंसक साधनों को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया है। इन साधनों का प्रयोग व्यक्ति द्वारा तभी किया जा सकता है जब वह प्रशिक्षित हो। इसलिये अहिंसा प्रशिक्षण के सूत्रों को प्रकाश में लाना अवश्यंभावी है, जिसमें व्यक्ति की मानसिक स्थिति व हृदय परिवर्तन को आधार बनाकर व्यक्ति को प्रशिक्षित किया जाता है तत्पश्यात् उससे सत्य व अहिंसा की राह पर चलने की अपेक्षा की जाती है।

गाँधी के मत में आधुनिक पश्चिमी औद्योगिक सभ्यता के मूल में सम्पत्ति की असीम चाह एवं भौतिक सुखों के पीछे अंधी दौड है, जो व्यक्ति की संपूर्ण क्षमता को भौतिक साधनों के संवर्धन में ही लिप्त कर देती है। सीमित साधनों के संदर्भ में यह प्रवृति व्यक्तिगत एवं सामूहिक स्तरों पर हिंसा तथा प्रतिहिंसा

को जन्म देती है, क्योंकि कतिपय व्यक्तियों द्वारा आवश्यकता से अधिक संचय का अर्थ है अधिक व्यक्तियों का साधन विपन्न होना। ये स्थिति वैयक्तिक स्तर पर तो अनैतिक है ही, साथ हीं ऐसी सामाजिक व्यवस्था की रचना भी करती है जिसमें दमन, अन्याय, असमानता पनपते है। राजनैतिक स्तर पर, कालांतर में यह स्थिति साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, प्रत्यक्ष एवं परोक्ष सामरिक कुचक्रों को बढावा देती है। गाँधी ने स्पष्ट कहा है कि यह सभ्यता हर स्तर पर हिंसा पर आधारित है तथा संपूर्ण जीवन का सम्मान नहीं करती।

गाँधी की दृष्टि में औद्योगीकृत आधुनिक सभ्यता ने सुखवाद पर बल देकर वैयक्तिक विलासिता को वांछनीय मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित किया है। यह अंधभौतिकवाद है। गाँधी के अनुसार भौतिक सुख की तृष्णा एवं तृप्ति, दोनों ही व्यक्ति को स्वधर्म एवं नैतिकता से विमुख करते है। यहां प्रौद्योगिकी का प्रश्न भी महत्वपूर्ण है जो आज के संदर्भ में जटिल एवं बहुआयामी है। गाँधी की दृष्टि में प्रौद्योगिकी साधारण तकनीक से भिन्न है क्योकि औद्योगीकृत ढांचें में इसकी प्रकृति तटस्थ, संयंत्रात्मक न होकर आधिपत्यवादी बन जाती है तथा दमन को पोषित करती है। गाँधी के लिये प्राथमिक प्रौद्योगिकी जैसै– चरखा, करघा, सिलाई मशीन आदि स्वीकार्य है, क्योंकि यह मानवश्रम को सुविधाजनक बनाती है एवं सामाजिक स्तर पर शोषण नहीं करती, न ही व्यक्ति में श्रम से विलग्नता अथवा दासत्व का भाव उत्पन्न करती है। गाँधी के अनुसार अमर्यादित प्रौद्योगिकी त्याज्य है क्योंकि उसकी विहंगमता में मानवीय व्यक्ति की अंतर्निहित स्वायत्ता का हनन होता है। यहां यह स्पष्टीकरण आवश्यक है कि गाँधी का प्रतिवाद संपूर्ण प्रौद्योगिकी से नहीं प्रत्युत उसके मशीनीकृत विस्तार से है, जिसके फलस्वरूप व्यक्तियों में संवेदनहीनता तथा अधिपति–अधीन की ग्रंथियाँ पनपती है। मशीनीकृत औद्योगीकृत उत्पादन शैली केन्द्रीकरण पर बल देती है, जिसकी तार्किक परिणति शोषण, दमन एवं विषमताओं के फैलाव के रूप में हुई हैं। गाँधी की दृष्टि में गरीबी, साधनहीनता एवं शोषण में प्रत्यक्ष संबंध है। रूसों की तरह गाँधी भी मानते है कि भौतिक सभ्यता ने मानव को दासत्व दिया है।

व्यक्ति ने सभ्यता द्वारा आरोपित मुखौटे को ही वास्तविक 'स्वत्व' के रूप में स्वीकार कर लिया है। फलस्वरूप नैतिक आदर्शो एवं आचरण में अंतराल बढा है। वाणिज्यिक बाजार–व्यवस्था के दबाव स्वरूप सादगीपूर्ण ग्राम्य संस्कृति का विनाश हुआ है। इसलिये जब आधुनिक पश्चिमी सभ्यता का खंडन करते है तो वे उन सभी संस्थाओं, मूल्यों, मनोवृत्तियों का भी विरोध करते है जो उसे पोषित करती है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि गाँधी परिवर्तन एवं विकास के विरोधी है। हिन्द स्वराज में गाँधी ने समाज की सावयव एकता, विकासक्रम की निरंतरता तथा परिवर्तन की अपरिहार्यता को बीज एवं वृक्ष की अर्थपूर्ण उपमा द्वारा व्यक्त किया है। अतः गाँधीजी को परिवर्तन विरोधी मानना आधारहीन है। गाँधी का विकल्प सादगीपूर्ण ग्राम्य जीवनशैली, परस्पर जुडाव पर आधारित, नैतिक, अन्योन्याश्रित समाज, स्वदेशी, मूल व्यवस्था पर आधारित विकेन्द्रित, मानव–केन्द्रीत अर्थ प्रणाली तथा सहभागी, विकेन्द्रित लोकतांत्रिक राजव्यवस्था है। इस विकल्प के मूल में–व्यक्ति का सर्वांगीण विकास तथा सर्वोदयी समाज की संकल्पना है।

गाँधी इस नयी सदी में परम्परा का नाम है। गाँधी अब भारत के लिये एक संस्कृति है और उनका अहिंसा का मंत्र अब पूरे विश्व में शांति का प्रतीक बन गया है। इस ग्लोबल होते विश्व में भले ही मूल्य और मानवीय परंपराएँ बदल रही हो, देशों के भूगोल और सीमाएं बदल रही हो परंतु गाँधीजी का दर्शन आज हर लब पर प्रदर्शित हो रहा है। गाँधी आज हमारी आस्था का प्रतीक है। गाँधी दर्शन की इस रोशनी में एक नई दुनिया की तलाश की जा सकती है। आज भी अल्बर्ट आइंस्टाइन का कथन सत्य है कि, ''आने वाली पीढियाँ मुश्किल से ही विश्वास करेंगी कि गाँधी जैसा हाड–मांस का कोई पुतला इस धरती पर कभी रहता होगा।'' गाँधी सचमुच समय के वो रोशन प्रतीक थे जिन्होनें अपने प्रकाश से एक नई रोशनी अर्थात् दर्शन से पूरे विश्व को एक नया रास्ता दिखाया।

आज गाँधी दर्शन इस नयी सदी की एक जीवन पद्धति है। आज जब विश्व एक नये ध्रुवीकरण की ओर अग्रसर है तो गाँधी दर्शन इस नयी सदी में और भी समसामयिक एवं प्रासंगिक हो गया है। आज विश्व के सभी भागों में अहिंसा का जो मार्ग हमें दिखाई देता है उसके पीछे मुख्यतः गाँधी दर्शन की अवधारणा है। डॉ. राधाकृष्णन ने कहा था कि, हमारे देश का यह पुनरूत्थान उस संघर्ष के बिना हुआ जो अपने पीछे घृणा, कटुता और नैतिकता के ह्रास के कई धब्बे छोड़ जाता है। हम इसके लिये महात्मा गाँधी के शुक्रगुजार है जिन्होनें इस देश को एक नया रास्ता दिखाया।

गाँधीजी के सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह संबंधी विचारों से विश्व के कई महापुरूष भी अपने जीवन के किसी न किसी स्तर पर प्रभावित रहे है। विश्व के प्रत्येक कौने तक गाँधीजी के विचारों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। अमेरिका, एशिया, यूरोप, अफ्रीका में कई क्रांतियाँ ऐसी हुई जिन पर गाँधीजी के विचारों का प्रभाव स्पष्ट रूप से पड़ा और जो अंततः सफल भी हुई। परिणामस्वरूप तत्कालीन अन्याय की स्थिति में बदलाव सुनिश्चित हुआ। इस दृष्टि से गाँधीजी का अहिंसात्मक आंदोलन विश्व व्यापकता लिये हुए है। किंतु वर्तमान विश्व राजनीति की स्थिति को ध्यान में रखते हुए गाँधीवादी सिद्धांतो की व्यावहारिक जीवन में और अधिक उपयोगिता अनुभव की जाती रही है।

एक आम आदमी को मसीहा के रूतबे तक पहुँचाना यह गाँधी दर्शन के हिस्से ही आता है। हालाँकि यह तथ्य भी झुठलाया नहीं जा सकता कि विश्व के कितने ही अन्य चिंतकों ने मानवीय संघर्ष के कितने ही रूप प्रस्तुत किये है, परंतु अहिंसा का चिंतन बोध जिस प्रकार सामाजिक चिंतन बोध के रूप में हमें गाँधी दर्शन में दिखाई देता है शायद किसी अन्य में नहीं।

विश्व के अन्य चिंतकों में अरस्तू से लेकर इस शताब्दी के आरंभिक समय में मार्टिन लूथर किंग ने जो संघर्ष अमेरिकी साम्राज्य की धरती पर लडा, उसके पीछे मूलतः गाँधी दर्शन का ही चिंतन बोध दिखाई देता है। जिसको स्वयं लूथर किंग मानते है। इसी परिप्रेक्ष्य में देखे तो वर्तमान इस बात को

ताकत देता है। जहाँ तीन शताब्दियों से चली आ रही रंगभेद की नीति को गाँधी चिंतन की नीति पर चलकर पछाड़ा गया। यह उदाहरण इसलिये भी महत्वपूर्ण है कि आज इसको कार्यान्वित करने वाले डॉ. नेल्सन मण्डेला गाँधी दर्शन से हर क्षण प्रेरणा लेते थे। उनका मानना था कि हम शायद एक शताब्दी और पीछे चले जाते यदि हम महात्मा गाँधी के अहिंसा के सिद्धांत को नहीं अपनाते। यह वर्तमान की कट्टर सच्चाई है जो हम पूरे विश्व में सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक परिदृश्य में देख रहे है।

आज मुख्य प्रश्न यह भी है कि गाँधीजी की अहिंसा के भौतिक पहलू क्या है जिन्हें आज अप्रासंगिक बतलाकर गाँधी दर्शन को नकारात्मक दृष्टिकोण से परोसने की कोशिश की जा रही है। सच्चाई यह भी है कि यह दृष्टिकोण पश्चिमी संस्कृति के उस दर्शन बोध का प्रचार–प्रसार है जिसके द्वारा आज भारतीय संस्कृति को समाप्त करने की साजिश हो रही है, परंतु यह बात भी उतनी ही सत्य है कि भी विश्व के कई राष्ट्रों में गाँधीजी के अहिंसा के दर्शन को नये दर्शन बोध के जरिये अपनाया जा रहा है, क्योंकि आज विश्व की वर्तमान परिस्थितियों में गाँधी दर्शन ही एक ऐसा दर्शन है जो एक आम आदमी को बुनियादी अधिकार सामाजिक स्तर पर मानवीय दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है तथा अहिंसा को माध्यम बनाकर इस रासायनिक हथियारों की संस्कृति में अहिंसा का परचम लहराता है।

गाँधी दर्शन हमें अहिंसा और सत्य की नीति से जोड़ता है तथा आदमी की आजादी को शांतिपूर्ण तथा न्यायोचित साधनों से लड़ने की छूट देता है। यह असल में आदमी के अपने परिवेश से जुड़ने की प्रक्रिया है जिसमें आदमी समाज तथा अपने से जुड़ने की कोशिश करता है। गाँधीजी का यह मत भी था कि आज लोग सत्य–असत्य का प्रयोग अपनी सुविधानुसार करने में लगे हुए है, परंतु सामान्य दृष्टि में गाँधीजी ने इसमें भी आशा, उत्साह एवं विश्वास इत्यादि को खोजा।

अभी–अभी एक बार फिर से पूरा विश्व गाँधी दर्शन की ओर आकर्षित हुआ है तथा वह अपनी तमाम समस्याओं का समाधान गाँधी दर्शन में ढूँढने लगा है। जहाँ तक कि पश्चिमी अर्थशास्त्री **प्रोफेसर गॉलब्रिथ** के दर्शनीय ढाँचे को देखे तो लगता है कि वह भी कहीं न कहीं गाँधीजी तथा उनके दर्शन के आस–पास खड़े हुए दिखाई देते है, जब वह कहते है कि पश्चिम के लोग अब यह समझ गये है कि सिर्फ भौतिक चीजों में पूँजी लगाना बुद्धिमानी नहीं है असली पूँजी तो मनुष्य के विकास में लगानी चाहिए अर्थात् मनुष्य के गुणों का विकास हम करें तो इसी में समाज का भला होगा, विश्व का भला होगा।

फ्रांसीसी मनीषी **रोमां रोलां** ने भारतीय अनुभूतियों को अपनी रचनाओं में समाहित करते हुए महात्मा गाँधी को एक ऐसे व्यक्ति के रूप में पूरे विश्व में प्रस्तुत किया है जिसका कोई और उदाहरण नहीं मिलता। रोमां रोलां ने अपने भारत प्रवास के दौरान महात्मा गाँधी को निकट से देखा और अपनी भारत डायरी का फ्रैंच में प्रकाशन किया। इसी भारत डायरी में अंकित किये संदर्भो में उन्होनें महात्मा गाँधी को जिस रूप में देखा–परखा बाद में उसी को आधार में रखकर उन्होनें **''महात्मा गाँधी जीवन और दर्शन''** पुस्तक की रचना की। यही कारण है कि गाँधीजी पर लिखी गई सैंकडों पुस्तकों में से रोमां रोलां की पुस्तक में गाँधीजी एक ऐसे व्यक्ति के रूप में सामने आते है जिसको रोमां के शब्दों में कहे तो, ''वे एक ऐसे महात्मा थे जिन्होनें विश्व सत्ता के साथ अपने को एकाकार कर दिया है।''

रोमां के अनुसार महात्मा गाँधी एक ऐसे कार्यकर्ता थे जिन्होनें अहिंसा की नीति जो भारत में लगभग 2000 वर्षो से निहित है, में केवल इतना ही किया कि उसमें वीरतापूर्ण रक्त संचार कर दिया। अतीत की विशाल छायायें और जाने कितनी महान् शक्तियाँ भयंकर जड़ता में निमग्न पड़ी थी। उन्होनें उनको आवाज दी और उनकी आवाज सुनते ही वे जाग उठी और लोग उन्हीं में अपने को ढूँढनें लगे। गाँधीजी ने कहा, ''हमारे संग्राम का लक्ष्य है समस्त संसार के

साथ मैत्री की स्थापना। अहिंसा मनुष्य के पास बनी रहने के लिये आयी है। उसने विश्वशांति की घोषणा की है।''

गाँधी आने वाली कई शताब्दियों में जीवित रहेंगे। रोमां ने 20 सितम्बर 1932 की अपनी भारत डायरी में लिखा है, ''प्रश्न गाँधी का नहीं है, भारत का भी नहीं है, लेकिन गाँधी ने जिस आदर्श को अपने में मूर्त किया है और जिसकी विजय अथवा पराजय पर आगामी एक शती अथवा उससे भी अधिक समय तक योरोप का भाग्य निर्भर करेंगे प्रश्न उस अहिंसा का है।'' महात्मा गाँधी एक उस संत की भाँति है जो सब कुछ देखता हुआ भी संकोच, धैर्य और विनम्रता से कार्य करता है। गाँधी वे संत है जिन्होनें अहिंसा के रास्ते से पूरे विश्व को एक नया रास्ता दिखाया और यह सच भी है कि गाँधी ने उस विराट आंदोलन का नेतृत्व किया जिसने इतिहास को नया मोड़ दिया। रोमां रोलां के शब्दों में देखे– ''वे हैं एक दुबले, पतले, संत साधारण से लगते आदमी का कमाल, जिसे आने वाली शताब्दियाँ कभी भी भुला नहीं सकती।''

गाँधी दर्शन के संबंध में लेखक **जनार्दन द्विवेदी** का मानना है कि, पिचहत्तर वर्ष पहले आधुनिक विश्व के दो असाधारण पुरूषों ने अपने–अपने देश में जनक्रांति का नेतृत्व किया। दोनों ही के अपने–अपने अलग–अलग विचार थे और वे अपने देश व विश्व को एक ऐसे नए रास्ते पर ले जाना चाहते थे, जहाँ सभी प्रकार के शोषण और दमन से मुक्ति हो, हालाँकि उनके लक्ष्य कमोबेश एवं समान थे, लेकिन उन्हें प्राप्त करने का रास्ता और तरीका बिल्कुल भिन्न था। वे दोनों आत्म बलिदान और सादगी की प्रतिमूर्ति थे। वे दो महापुरूष थे– महात्मा गाँधी और वी. आई. लेनिन।

भारत के सुदूरवर्ती जिले चम्पारन में महात्मा गाँधी ने 1917 में अपना पहला सत्याग्रह आंदोलन शुरू किया, जिसके बारे में उन्हें कुछ ज्ञान नहीं था, जब गाँधी चम्पारन में पधारे, वही लेनिन स्विट्जरलैण्ड से ट्रेन द्वारा सेन्टपीटर्स बर्ग में पहुंचे और क्रांति का नेतृत्व किया।

1917 के अन्त तक लेनिन को सफलता मिली और रूस में क्रांति का झण्डा लहराने लगा। अंग्रेजों को देश छोड़ने के लिये मजबूर करने में गाँधीजी को तीस साल का लंबा समय लगा। कुछ लोगों ने गाँधीजी, उनके विचार और तरीकों के महत्व को कम करके आँका, लेकिन यह कहा जा सकता है कि वे पूरी तरह गलत साबित हुए। घटनाओं ने गाँधीजी और उनके बताए रास्ते को सही साबित किया। उनके आंदोलन में बहुत कम जन हानि हुई। यह सबको मालूम है कि रूसी क्रांति बिखर गयी है, लेकिन भारतीय क्रांति आज भी बदस्तूर देश को प्रगति की ओर ले जा रही है और दुनिया में युद्ध, दमन और सभी प्रकार के भेदभाव को मिटाने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है।

शोध के मुख्य उद्देश्य

- वर्तमान विश्व के स्वरूप को पहचानना एवं उसकी समीक्षा करना।
- विश्व राजनीति को वर्तमान समस्याएँ किस प्रकार प्रभावित कर रही है ? का अवबोध करना।
- विश्व में विद्यमान हिंसात्मक प्रवृत्तियों की राजनीति से तुलना एवं परस्पर एक–दूसरे पर प्रभाव का अध्ययन करना।
- आतंकवादियों द्वारा निजी स्वार्थो की पूर्ति हेतु दबाव के रूप में किये जाने वाले कार्यो की जानकारी देना।
- साध्य–साधन की अवधारणा का विश्व राजनीति पर पड़ने वाले प्रभाव को समझाना।
- सत्याग्रह एवं विश्व राजनीति के संदर्भ में विरोध के तरीकों में व्यावहारिक रूप से शालीनता लाना।
- अहिंसा की पारंपरिक धारणा एवं गाँधीजी के अहिंसात्मक समाज संबंधी अध्ययन की जानकारी प्राप्त करना।
- अहिंसा को एक शक्ति के रूप में पहचानना एवं आत्मबल में वृद्धि सुनिश्चित करना।

- सत्य एवं अहिंसा में पास्परिक संबंधों को समझाना।
- मानव में अहिंसात्मक जाग्रति हेतु अहिंसा प्रशिक्षण के सूत्रों का निर्धारण करना।
- गाँधीजी के सत्य, अहिंसा संबंधी विचारों से प्रभावित अंतर्राष्ट्रीय महापुरूषों की नीतियों की जानकारी उपलब्ध कराना एवं जीवन में व्यावहारिक रूप में अपनाने की प्रेरणा देना।
- एक अराजकता विहीन एवं शांतिपूर्ण विश्व राजनीतिक समाज की स्थापना करना।

शोध कार्य का महत्व

वर्तमान युग में विश्व की राजनीति के समक्ष खड़ी समस्याओं के संदर्भ में गाँधीवादी चिंतन एवं नीतियों की प्रासंगिकता संबंधी विचार की महत्ता इस अध्ययन द्वारा स्पष्ट की जा सकेगी। इस अध्ययन का महत्व निम्न बिन्दुओं में स्पष्ट है–

1. इस अध्ययन द्वारा विश्व राजनीति के परिवर्तित आधारों को समझा जा सकेगा एवं इन आधारों के संरक्षण हेतु प्रभावशाली सकारात्मक प्रयास किये जा सकेंगे।
2. वैश्विक समस्याओं द्वारा अंतर्राष्ट्रीय राजनीति पर प्रभाव की जानकारी को प्रकाश में लाना।
3. यह अध्ययन विश्व राजनीति में निहित कमियों का प्रत्यक्षीकरण करता है।
4. साध्य व साधन की अवधारणा द्वारा साधनों की पवित्रता सुनिश्चित करना।
5. आतंकवाद एवं विश्व राजनीति का परस्पर एक–दूसरे पर प्रभाव दर्शाना।
6. विश्व स्तर पर गाँधीजी से प्रभावित विभूतियों के संदर्भ में गाँधीवादी चिंतन द्वारा वर्तमान विश्व राजनीति को बेहतर दिशा दी जा सकेगी।

7. अनैतिकता व अराजकता के प्रतिकार में शांतिपूर्ण साधनों की भागीदारी बढ़ाना।
8. शक्तिवादी राजनीति के युग में अहिंसा को सर्वोच्च राजनीतिक शक्ति के रूप में विकसित करना।
9. मानव के वैचारिक दृष्टिकोण में परिवर्तन सुनिश्चित किया जा सकेगा जिससे उसमें नवीन सोच का विकास होगा।
10. सत्य एवं अहिंसा की अंतर्राष्ट्रीय प्रभाविकता से संबंधित अनुभवजन्य एवं व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना।

साहित्य की समीक्षा

जैन माणक, ''गाँधी के विचारों की 21वी सदी में प्रासंगिकता'', 2010

इस पुस्तक को सात अध्यायों में विभक्त किया है। जिसमें गाँधीजी के सामाजिक और राजनीतिक विचारों का आधार अहिंसा है। भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में अहिंसा का प्रयोग किस प्रकार किया गया, इस पुस्तक में खिलाफत आंदोलन, असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन, भारत छोड़ो आंदोलन तथा अंत में भारत विभाजन के समय अहिंसात्मक कार्यप्रणाली का विस्तृत विवेचन किया गया है। गाँधीजी द्वारा सामाजिक क्षैत्र में अहिंसा का प्रयोग करने से संबंधित विवरण इसमें वर्णित है, जिनमें हिन्दू–मुस्लिम सामंजस्य में अहिंसा का प्रयोग तथा महिलाओं के उत्थान में अहिंसा का प्रयोग एवं योगदान पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। अहिंसक रीति–नीति से गाँधीजी के नेतृत्व में अस्पृश्यता का लेखा–जोखा प्रस्तुत कर उनके योगदान का मूल्यांकन किया गया है। गाँधीजी के स्वराज एवं ग्राम स्वराज संबंधी विचारों पर प्रकाश डालते हुए गाँधीजी के विभिन्न रचनात्मक कार्यो तथा ग्राम स्वराज के बुनियादी सिद्धांतो का विस्तृत वर्णन इसमें किया गया है।

कौशिक आशा, ''गाँधी नयी सदी के लिये'', 2000

इस पुस्तक में गाँधी की व्यक्ति, समाज, राजनीति से संबद्ध अन्तर्दृष्टि की नवव्याख्या प्रस्तुत की गई है। जन कल्याण के लिये राजनीति का मूल

कायाकल्प अनिवार्य है, यह स्वयं व्यक्ति के माध्यम से ही होगा। गाँधी अत्याधुनिक होते हुए भी पारंपरिक है एवं पारंपरिक होते हुए भी उत्तर आधुनिक है। भारतीय पुरूषार्थ परंपरा की जीवन्त कड़ी के रूप में गाँधी की प्रासंगिकता की व्याख्या की गई है। गाँधी के आंदोलनो में स्त्रियों की भूमिका की विवेचना की गई है। गाँधी के विचार नैतिकता प्रधान होते हुए भी किस प्रकार व्यवहारिक राजनैतिक सरोकारों पर केन्द्रित थे इसके बारे में बताया गया है। गाँधी चिंतन के मूल्य भारतीय समाज की वस्तुस्थिति की ही उपज थे। राष्ट्रवाद की सांस्कृतिक एवं राजनीतिक व्याख्याओं में भेद करने की आवश्यकताओं को उभारा गया है। गाँधी चिंतन में मानवीय न्याय, अधिकार एवं कर्तव्यों की पारस्परिकता के विभिन्न आयामों का विश्लेषण किया गया है। पश्चिमी उदारवादी लोकतंत्र की विकृतियों का समाधान गाँधी के ग्रामाधारित लोकतंत्र की अवधारणा में ही है। इसके बारे में बताया गया है।

त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', 2013

इस पुस्तक में लेखक ने विभिन्न भारतीय मनीषियों के राजनैतिक विचारों को उद्धृत किया है। इसमें लेखक ने न केवल राजनीतिक नेताओं हिन्दू उदारवादियों तथा आध्यात्मिक राष्ट्रवादियों, उदारवादियों, उग्रवादियों तथा समाजवादियों के अपनी मातृभूमि को साम्राज्यवादियों की दासता से मुक्त करने के यत्नों का क्रमिक विश्लेषणात्मक वर्णन किया है वरन् उनके ऐसे सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक विचारों का विवेचन किया है, जिनका भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन पर गहरा प्रभाव पड़ा।

इसमें गाँधीजी के जीवन दर्शन, उनका जीवन दर्शन किससे प्रभावित रहा, धर्म व राजनीति में संबंध, गाँधीवाद की विशेषताएँ, अहिंसा की आवश्यकता, सुरक्षा के लिये अहिंसा का प्रयोग किस प्रकार किया जाय, सत्याग्रह, साध्य साधन की अवधारणा, आदि का विस्तृत विवेचन किया गया है।

बहरवाल मनोज कुमार, ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', 2014

इस पुस्तक में 15 अध्याय है। सभी अध्यायों में प्राचीन एवं आधुनिक

भारतीय राजनीतिक चिन्तकों के विचारों, सुझावों की यथा स्थान व्यापक, सरल एवं सारगर्भित व्याख्या की गई है। समस्त चिन्तकों के चिन्तन का भारत में ही नहीं विश्व की राजनीति, समाज एवं शासन के संदर्भ में प्रासंगिक वर्णन किया गया है।

गाँधीजी के संदर्भ में इस पुस्तक में उनके चिन्तन के आधारों, सत्य, अहिंसा, अहिंसा की श्रेणियों, अहिंसा का व्यावहारिक दृष्टिकोण, सत्याग्रह की आवश्यक मानसिकता की शर्ते, सत्याग्रह के अनुशासन गाँधी के समाज सुधार संबंधी विचार, राज्य संबंधी विचार, आर्थिक विचार, शिक्षा संबंधी दर्शन का विस्तृत विवेचन किया गया है।

कोर्टराइट डेविड, ''गाँधी एण्ड बियोण्ड'', 2007

इस पुस्तक में 9 अध्याय है। जिनमें गाँधीजी के जीवन के मुख्य बिंदुओं, उनके मौलिक विचारों सत्य, अहिंसा का व्यावहारिक जीवन में प्रयोग, राजनीति में विनम्रता, संघर्ष और शांति से संबंधित विचारों के साथ–साथ अमेरिका में गाँधी शीर्षक से उनके प्रभाव, सामाजिक न्याय एवं शांति के लिये संघर्ष के बिन्दुओं को प्रस्तुत किया गया है। मार्टिन लूथर किंग जूनियर की नीतियों पर गाँधी का प्रभाव बताया गया है। व्यावहारिक कार्यक्षैत्र में गाँधी की क्या भूमिका है, शांति अभियान में गाँधीजी के विचारों की क्या प्रासंगिकता है आदि प्रश्नों का उत्तर दिया गया है।

मार्कोविट्स क्लाउड, ''दी अन–गाँधीयन गाँधी'', 2003

इस पुस्तक के समस्त अध्यायों को दो भागों में विभाजित किया गया है। प्रथम भाग गाँधीजी के अनुभवों से संबंधित है जिसमें उनकी आत्मकथा के अनुभवों को दर्शाया गया है। पश्चिमी देशों में विशेष रूप से फ्रांस में उनके विचारों के प्रसार को बताया गया है। गाँधी चिंतन के अनुभव 1948 के बाद भारत में किस प्रकार के रहे, उनका राजनीतिक दर्शन क्या है इस संदर्भ में विषयवस्तु वर्णित की गई है।

द्वितीय भाग 'इतिहास में गाँधी' नाम से वर्णित है जिसमें उनके नीजि जीवन, सार्वजनिक जीवन, दक्षिण अफ्रीका में उनका योगदान, राष्ट्रीय नेतृत्व के रूप में उनकी भूमिका (1915–1920), गाँधी और भारतीय समाज, गाँधीजी की अहिंसा, निर्भयता के रूप में गाँधी आदि बिन्दुओं को प्रकाश में लाया गया है।

सक्सेना वन्दना, ''गाँधी जीवन और दर्शन'', 2006

इस पुस्तक में 16 अध्याय है। जिनमें गाँधी दर्शन के संबंध में आत्म प्रकाश, जीवन उत्कृष्टता, आध्यात्मिकता, गुणवत्ता, नैतिकता, सभ्यता, विनम्रता एवं उसका प्रभाव, स्थिरता, अहिंसा, पवित्रता, सहजता, निष्काम कर्म, गाँधी दर्शन और गरीब, गाँधी दर्शन में नारी, गाँधी दर्शन–विभिन्न संस्कृतियों का मिश्रण, शिक्षा, पंचायती राज, आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण, श्रम की महत्ता, घृणा पाप से करो, पापी से नहीं एवं वर्तमान संदर्भ में उनके विचारों की प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला गया है।

फड़िया बी. एल., ''अंतर्राष्ट्रीय संबंध'', 1997

इस पुस्तक में द्वितीय महायुद्ध के बाद किए शांति के प्रयास, विश्वयुद्धोत्तर अंतर्राष्ट्रीय विकास, शीतयुद्ध की उत्पत्ति, विकास एवं अन्त तथा विश्व राजनीति पर उसका प्रभाव, संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य, भूमिका एवं उपलब्धियाँ, गुटनिरपेक्षता–उद्देश्य, विशेषताएँ एवं प्रासंगिकता, साम्यवादी गुट का बिखराव, एशिया एवं अफ्रीका में विउपनिवेशीकरण, अमेरिका, चीन, रूस एवं भारत की विदेश नीति, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में उभरती हुई नयी प्रवृतियाँ एवं मुद्दे, निःशस्त्रीकरण की समस्या एवं चुनौतियाँ, यूरोप में नई आर्थिक एवं राजनीतिक प्रवृत्तियाँ, दक्षिण–दक्षिण संवाद, उत्तर–दक्षिण संवाद, नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था, एशिया में क्षैत्रीय सहयोग संगठनों के संदर्भ में आसियान एवं सार्क के बारे में विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

मुकालेल डॉ. जोसेफ सी., ''गाँधीयन एज्यूकेशन'', 2007

यह पुस्तक गाँधीजी की शैक्षिक अवधारणा से संबंधित है। इस पुस्तक में 10 अध्याय है जिनमें गाँधीजी के शिक्षा संबंधी विचारों की राष्ट्रीय नीति क्या

हो? गाँधीजी की शिक्षा की अंतर्राष्ट्रीय व्यापकता, गाँधी अध्ययन का क्षैत्र, गाँधीजी के शैक्षिक विचारों का आधार, नैतिक, सामाजिक, वैयक्तिक दृष्टि से गाँधीवादी शिक्षा के लक्ष्य, गाँधीजी के शिक्षा संबंधी अनुभवों, गाँधीजी का शैक्षिक आदर्शवाद एवं प्रयोजनवाद, गाँधी शिक्षा में सत्याग्रह का प्रयोग, व्यावसायिक शिक्षा, बुनियादी शिक्षा, पवित्रता की शिक्षा, बदलते सामाजिक मूल्यों के अनुरूप शिक्षा, शांति एवं सद्भाव की शिक्षा आदि बिन्दुओं पर विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

लाल प्रो. रमन बिहारी, पलोड़ सुनीता, ''शैक्षिक चिन्तन एवं प्रयोग'', 2008

इस पुस्तक में शैक्षिक चिंतन के संदर्भ में गाँधीजी के साथ–साथ रवीन्द्रनाथ टैगोर, स्वामी विवेकानंद, श्री अरविन्द, गिजुभाई, परमहंस योगानंद, रूसो, पेस्टालॉजी, फ्रोबेल, जॉन डीवी, डॉ.मॉन्टेसरी, बर्टेन्ड रसेल के शैक्षिक चिन्तन को भी वर्णित किया गया है।

महात्मा गाँधी के दार्शनिक चिन्तन में सर्वोदय दर्शन की तत्व मीमांसा, ज्ञान एवं तर्क मीमांसा, मूल्य एवं आचार मीमांसा, शिक्षा का संप्रत्यय, शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यचर्या, शिक्षण विधि, अनुशासन, शिक्षक–शिक्षार्थी संबंधो का विस्तृत विवेचन इस पुस्तक में किया गया है।

नारायण डॉ. इकबाल, ''आधुनिक राजनीतिक विचारधाराएँ'', 2005

इस पुस्तक में आधुनिक राजनीतिक विचारधाराओं में उदारवाद, व्यक्तिवाद, उपयोगितावाद, समाजवाद, मार्क्सवाद, साम्यवाद, समष्टिवाद, अराजकतावाद, श्रमिक संघवाद, श्रेणी समाजवाद, फासीवाद, नाजीवाद, सर्वाधिकारवाद, राष्ट्रवाद, साम्राज्यवाद, अंतर्राष्ट्रीयवाद, बहुलवाद, गाँधीवाद एवं सर्वोदय संबंधी बिन्दुओं को विस्तार से स्पष्ट किया गया है।

इस पुस्तक में गाँधीवाद की व्याख्या उनकें विचारों की धार्मिक पृष्ठभूमि, उनकें विचारों पर पड़ने वाले प्रभाव, गाँधीजी की कार्य पद्धति, गाँधीवादी समाज, गाँधीजी एवं राज्य, गाँधीवाद का समाजवाद एवं साम्यवाद से संबंध दर्शाते हुए की गई है।

चतुर्वेदी ललित, ''राजनीतिक विचारक कोश'', 2013

इस पुस्तक में विविध राजनीतिक विचारकों एवं विचारधाराओं को अधिक से अधिक स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। इस दृष्टि से विषय सामग्री को विविध शीर्षकों व उपशीर्षकों में विभक्त किया गया है। प्राचीन भारतीय मनीषियों एवं पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तकों सहित आधुनिक राजनीतिक चिन्तन को दृष्टि में रखते हुए विषयवस्तु प्रस्तुत की गई है। इस पुस्तक में 39 अध्याय है। जिसमें प्रथम 21 अध्याय राजनीतिक चिंतन से संबंधित है एवं अंतिम 18 अध्याय आधुनिक राजनीति विज्ञान से संबंधित है।

इस पुस्तक में गाँधीजी के लेखों एवं पत्रों के माध्यम से उनके विचारों को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। जिनमें चरखे की उपयोगिता, असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन, स्वराज, भारत में अनिवार्य शिक्षा, अहिंसा, अहिंसा से संबंधित भ्रामक धारणाओं का निवारण, भ्रातृत्व एवं वर्तमान युग में इनकी प्रासंगिकता। इन बिन्दुओं से संबंधित प्रश्नों का उत्तर यंग इण्डिया, हरिजन, अमृत बाजार पत्रिका, स्टेट्समेन में वर्णित विचारों के माध्यम से देने का प्रयास किया गया है।

वर्मा डॉ. एस. एल., मिश्रा डॉ. मधु, ''महात्मा गाँधी एवं धर्मनिरपेक्षता'', 1999

यह पुस्तक राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर द्वारा प्रकाशित है। इस पुस्तक के अंतर्गत धर्म, धर्माचार एवं धर्मान्तर्गत लौकिकता, धर्मनिरपेक्षतावाद का अर्थ, प्रकृति, सामर्थ्य एवं संभावना, राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का चिंतन, इसके आधार, लक्ष्य एवं साधन, महात्मा गाँधी का कर्मक्षैत्र दक्षिण अफ्रीका एवं भारत के आंदोलन, सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक आंदोलनों के संदर्भ में गाँधीजी के नेतृत्व प्रतिमान आदि का विस्तृत विवेचन किया गया है।

बार्थोनिया शेफाली, ''महात्मा गाँधी एवं विश्व'', 2008

इस पुस्तक के अंतर्गत गाँधी दर्शन की मूल अवधारणाओं में सत्य–अहिंसा की अवधारणा, अहिंसा का स्वरूप, अहिंसा एवं विश्व राजनीति, अहिंसा के गुण–दोष, साध्य–साधन की अवधारणा, नैतिकता, धर्म, व्यक्ति, राज्य

का विस्तृत विवेचन है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधो के सैद्धांतिक प्रश्नों पर गाँधी चिंतन को इसमें दर्शाया गया है, जिसमें गाँधी एवं अंतर्राष्ट्रीयतावाद प्रमुख है। युद्ध, शांति, हिंसा, जातिवाद, रंगभेद आदि के संदर्भ में स्पष्ट वर्णन किया गया है। समकालीन अंतर्राष्ट्रीय प्रश्न व गाँधी, अंतर्राष्ट्रीय विश्व में गाँधी, वर्तमान युग में गाँधीजी की प्रासंगिकता आदि पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है।

आचार्य नन्दकिशोर, ''सत्याग्रह की संस्कृति'', 2008

यह पुस्तक वाग्देवी प्रकाशन बीकानेर द्वारा प्रकाशित है। इसके अंतर्गत सत्याग्रह को संस्कृति के रूप में देखा गया है। इसमें अहिंसा का आग्रह, साम्यवाद का विकल्प पूँजीवाद नहीं, आसक्ति और आनन्द का अन्तर, गाँधीवाद और राजसत्ता, महासागरीय वृत की राष्ट्रीय एकता, अहिंसा की सामाजिक प्रौद्योगिकी, सत्याग्रही राज्य, शिक्षा में सत्याग्रह, सत्याग्रही विकास की आवश्यकता, सत्याग्रही प्रौद्योगिकी की आवश्यकता, न्यासिता का व्यावहारिक व न्यायोचित रूप, गाँधीवादः गाँधी के बाद आदि बिन्दुओं पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

प्रभु आर. के., राव यू. आर., ''महात्मा गाँधी के विचार'', 2011

नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक में गाँधीजी के अपने स्वयं के बारे में विचारों का वर्णन किया गया है। सत्य, अभय, आस्था का दिव्य संदेश, अहिंसा का दिव्य संदेश, अहिंसा की शक्ति, अहिंसा का प्रशिक्षण, हिंसा एवं आतंकवाद, आक्रमण का प्रतिरोध, अहिंसक मार्ग, सत्याग्रह का दिव्य संदेश, उपवास और सत्याग्रह, अपरिग्रह का दिव्य संदेश, श्रम संबंधी विचार, सर्वोदय का दिव्य संदेश, न्यासिता का दिव्य संदेश, ब्रह्मचर्य का दिव्य संदेश, स्वतंत्रता और लोकतंत्र का दिव्य संदेश, स्वदेशी, भाईचारा संबंधी विचार, राष्ट्रवाद बनाम अंतर्राष्ट्रवाद, नस्लवाद, युद्ध और शांति, परमाणु युद्ध, शांति का मार्ग एवं कल की दुनिया आदि बिन्दुओं पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

पाण्डेय उपासना, ''उत्तर–आधुनिकता और गाँधी'', 2007

इस पुस्तक के अंतर्गत आधुनिकतावाद एवं उत्तर–आधुनिकतावाद की

अवधारणाओं का विवेचन किया गया है। गाँधी द्वारा की गई आधुनिकता की आलोचना, समकालीन विमर्श गाँधी पूर्व–आधुनिक, आधुनिक एवं उत्तर–आधुनिक विचारक के रूप में, सत्य एवं अहिंसा नवीन विश्व व्यवस्था की आधारशिला के रूप में, गाँधी दर्शन में सत्य व अहिंसा का तात्विक दृष्टिकोण, धार्मिक दृष्टिकोण एवं नैतिक दृष्टिकोण, नवीन विश्व व्यवस्था के विभिन्न स्वरूप, राजनीति, अर्थनीति, धर्म, शिक्षा एवं स्त्री आदि। उपसंहार के रूप में निष्कर्षो का विवरण दिया गया है।

त्रिपाठी विनायक, ''आधुनिक गाँधी अन्ना हजारे'', 2012

यह पुस्तक अन्ना हजारे के जीवन दर्शन पर आधारित है। जिसमें उनके संघर्षमय बचपन, अन्ना हजारे का ग्रामीण विकास मॉडल, सूचनाधिकार के प्रणेता, भारत में भ्रष्टाचार की स्थिति, भ्रष्टाचार के खिलाफ अन्ना हजारे, अन्ना हजारे और सोशल मीडिया, अन्ना का जन लोकपाल विधेयक, लोकपाल व जनलोकपाल विधेयक पर एक तुलनात्मक दृष्टि आदि बिन्दुओं का विस्तृत विवरण प्रस्तुत है।

शर्मा डॉ. प्रभुदत्त, ''अंतर्राष्ट्रीय राजनीति'', 1998

इस पुस्तक में अंतर्राष्ट्रीय राजनीति और राजनीतिक व्यवस्था, समकालीन विश्व राजनीति एवं नई दिशाएँ, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के सिद्धांत, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के शक्ति संघर्ष के रूप में राष्ट्रीय शक्ति की अवधारणा, राष्ट्रीय शक्ति के तत्व– विचारधारा, मनोबल व नेतृत्व, राष्ट्रीय हित के उपकरण– कूटनीति, प्रचार, युद्ध, आर्थिक उपकरण, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, नव–उपनिवेशवाद। राष्ट्रीय शक्ति की सीमाएं– शक्ति संतुलन, सामूहिक सुरक्षा, अंतर्राष्ट्रीय विवादों का शांतिपूर्ण समाधान, अंतर्राष्ट्रीय कानून, विश्व सरकार, निःशस्त्रीकरण, अंतर्राष्ट्रीय नैतिकता, विश्व जनमत, अंतर्राष्ट्रीय विकास, विश्व शांति, मानव कल्याण और संयुक्त राष्ट्र संघ आदि का विवेचन किया गया है। उभरती प्रवृत्तियों में एशिया, अफ्रीका और लेटिन अमेरिका का जागरण, संयुक्त राज्य अमेरिका और तृतीय विश्व, परमाणविक शस्त्रास्त्रों का प्रभाव, गुटनिरपेक्षता के

बदलते प्रतिमान, सोवियत संघ का पतन और तृतीय विश्व पर प्रभाव का विस्तार से वर्णन किया गया है।

किशोर डॉ. राघवेन्द्र, ''आतंकवाद एवं भारत के सम्मुख खतरे'', 2009

इस पुस्तक के अंतर्गत आतंकवाद की बहुमुखी व्याख्या प्रस्तुत की गई है। आतंकवाद एक युद्ध के रूप में किस प्रकार बर्दाश्त से बाहर है, राष्ट्रीय एकता पर राजनीति किस प्रकार की जा रही है? राष्ट्रीय सुरक्षा के सम्मुख खतरे क्या–क्या है? एक अस्थिर पड़ौस विदेशनीति के लिये किस प्रकार चुनौती है? बांग्लादेश एवं पाकिस्तान की नीतियों की तुलना, वैश्विक आतंकवाद के वैचारिक केन्द्र के रूप में अलकायदा एवं साइबर आतंकवाद आदि की विस्तृत विवेचना की गई है।

त्रिपाठी अरूण, पाण्डेय अरूण, ''मुस्लिम आतंकवाद बनाम अमेरिका'', 2002

इस पुस्तक में दिया गया विवरण आतंक का इतिहास, मुस्लिम आतंकवाद की पृष्ठभूमि, विश्व के विभिन्न भागों में मुस्लिम आतंकवादी संगठन एवं उनके कार्य, ओसामा बिन लादेन, उसके सहयोगी, मुसलमान अमेरिका से खफा क्यों है? इन बिन्दुओं पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

डाल्टन डेनिस, '' गाँधीज़ पावर'', 1993

सत्याग्रह एवं स्वराज का मिलन किन रूपों में दिखाई देता है? गाँधी के नेतृत्व के रूप में अहिंसात्मक शक्ति, रविन्द्रनाथ टेगोर व एम. एन. राय के गाँधीजी के संबंध में क्या विचार रहे? नमक सत्याग्रह एवं विभिन्न रूपों में गाँधी का योगदान इस पुस्तक के विभिन्न चर्चित बिन्दुओं का सारांश है।

सेन अमर्त्य, ''हिंसा और अस्मिता का संकट'', 2006

अमर्त्य सेन ने अपनी इस पुस्तक में, मनुष्य की पहचान किस प्रकार की जा सकती है? मनुष्य का अर्थ क्या है? मुस्लिम इतिहास, पश्चिम विरोध की समस्या, आंदोलन की सीमाएं, बहुसंस्कृतिवाद और स्वतंत्रता, सोचने की स्वतंत्रता आदि बिन्दुओं की विस्तार से चर्चा की है।

पाण्डे मलाबिका, ''गाँधीज़ विजन ऑफ सोशल ट्रांसफोर्मेशन'', 2011

इस पुस्तक में महात्मा गाँधी के विभिन्न सामाजिक एवं आर्थिक विचारों की तुलना की गई है। उनके आर्थिक विचारों के पीछे किस प्रकार सामाजिक दृष्टिकोण विद्यमान रहा एवं दोनों का पारस्परिक प्रभाव किस रूप में पड़ता है? इन प्रश्नों का उत्तर हमें अध्ययन के पश्चात् प्राप्त होता है। एक आदर्श समाज का स्वरूप क्या होना चाहिए? उसके लक्ष्य क्या होना चाहिए? इनका वर्णन हमें इस पुस्तक के विवरण से प्राप्त होता है। समाज में परिवर्तन हेतु कौन–कौनसे मुद्दे उत्तरदायी है? सामाजिक परिवर्तन के साधन क्या–क्या है? समकालीन संदर्भ में सामाजिक परिवर्तन किस रूप में दिखाई देता है? आदि का विस्तार से वर्णन इसमें प्रस्तुत है।

खण्डेला मानचंद, ''अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद'', 2002

यह पुस्तक आतंकवाद के वैश्विक परिदृश्य पर आधारित है। इसमें सर्वप्रथम अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद का परिचय बताया गया है। अमेरिका पर हुए आतंकवादी हमलों एवं अफगानिस्तान पर हुए हमलों की चर्चा की गई है। भारत पर आतंकवादियों द्वारा की जाने वाली हिंसात्मक घटनाओं का विस्तृत वर्णन इसमें किया गया है। लादेन एवं पाकिस्तानी कूटनीति की चर्चा इसमें की गई है। संयुक्त राष्ट्र संघ की कार्यप्रणाली, आतंकवाद के प्रति इसकी भूमिका, इस्लाम और अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद, आतंकवाद के कारण, निवारण के उपाय, आतंक का अंतर्राष्ट्रीय केन्द्र अफगानिस्तान किस रूप में है? इन बिन्दुओं पर विस्तार से विवरण प्रस्तुत किया गया है।

वर्मा डॉ. रामपाल सिंह, ''शिक्षा एवं भारतीय समाज''

इस पुस्तक में शिक्षा की संपूर्ण अवधारणा प्रस्तुत की गई है जिसमें शिक्षा का अर्थ, उद्देश्य, मूल्य, आधुनिक समाज के मूल्य व आकांक्षाएँ, समाजशास्त्रीय प्रत्यय, शिक्षा तथा सामाजिक परिवर्तन, शिक्षा के दार्शनिक पक्ष एवं भारतीय शैक्षिक चिंतन की विवेचना प्रस्तुत की गई है। भारतीय शिक्षा दर्शन में गाँधी शिक्षा दर्शन स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है। जिसमें गाँधीजी के अनुसार

शिक्षा का अर्थ, शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षा का पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियाँ, शिक्षा का स्थान, अनुशासन, विद्यालय, पाठ्यपुस्तकें एवं उनका शिक्षाजगत को योगदान की विस्तृत चर्चा की गई है।

बाथम मनोहर लाल, विश्वकर्मा शिवचरण, ''आतंकवाद चुनौती और संघर्ष'', 2003

इस पुस्तक में हिंसा एवं आतंकवाद को विस्तृत रूप से परिभाषित किया गया है। इसके पश्चात् आतंकवाद की उत्पत्ति किस प्रकार हुई, आतंकवाद के कारण, आतंकवाद का इतिहास, आतंकवाद और भारत, आतंकवाद का मनोविज्ञान, विशेषताएँ, व्यूह रचना, आतंकवाद का वर्तमान स्वरूप, वर्तमान नवीन प्रवृत्तियाँ, आतंकवादियों की कार्यप्रणाली, मीडिया और आतंकवाद आदि बिन्दुओं की व्यापक चर्चा की गई है।

सिंह डॉ. वीरेंन्द्र, ''गाँधी मार्ग–एक चिकित्सक के प्रयोग''

गाँधी दर्शन आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना आजादी की लड़ाई के समय था। राजस्थान प्रदेश के सबसे बड़े सवाई मानसिंह चिकित्सालय के पूर्व अधीक्षक डॉ. वीरेन्द्र सिंह के सैंकड़ों संस्मरण इस कथन के जीवन्त प्रमाण है। वर्ष 2006 में नारायण भाई देसाई के मुख से गाँधी कथा सुनने के बाद डॉ. वीरेन्द्र सिंह महात्मा गाँधी के विचारों से बड़े प्रभावित हुए और उन्होनें गाँधी मार्ग को आत्मसात् किया। सवाई मानसिंह अस्पताल के अधीक्षक बनें तो उन्होनें वहाँ गाँधी मार्ग का प्रयोग शुरू किया। एक आम इंसान, चिकित्सक एवं एक प्रशासक के रूप में उन्होनें विगत 8–9 वर्षो के कई संस्मरणों को अपनी पुस्तक 'गाँधी मार्गः एक चिकित्सक के प्रयोग' में सादगी व ईमानदारी से संकलित किया है। सवाई मानसिंह अस्पताल में आज भी वही समस्याएँ है जिनका सामना उन्हें करना पड़ा जैसै डॉक्टरों एवं परिजनों में मारपीट, डॉक्टरों एवं कर्मचारियों की हड़ताल, कर्मचारियों का काम न करना या देरी से आना, लावारिश रोगी आदि। इन सभी समस्याओं का समाधान डॉ. वीरेन्द्र सिंह ने केवल गाँधी मार्ग के सहारे बड़ी कुशलता से किया है।

प्रमुख प्रश्न

संबंधित साहित्य के अध्ययन के उपरांत स्पष्ट हुआ कि शोध विषय– 'वर्तमान विश्व राजनीति में गाँधीजी के विचारों की प्रासंगिकता।' से संबंधित विभिन्न पहलू विस्तृत रूप से अध्ययन से नहीं जुड़ पाये है। उदाहरण के लिए–

- विश्व राजनीति को प्रभावित करने वाले ऐसे कौनसे कारक रहे हैं जिनके कारण विश्व का स्वरूप अतिशीघ्र बदलता जा रहा है ?
- आतंकवाद एवं हिंसात्मक गतिविधियाँ किस प्रकार विश्व राजनीति को प्रभावित करती है तथा विश्व राजनीति द्वारा आतंकवाद को कितना नियंत्रित किया जा सका है ?
- विश्व अराजकता की स्थिति में हमारे लक्ष्य क्या हों और उन्हें प्राप्ति के साधन क्या हों ?
- गाँधीजी द्वारा अहिंसा की पारंपरिक धारणा का किस प्रकार स्वरूप परिवर्तित किया गया ?
- वर्तमान परिप्रक्ष्य में सत्य एवं अहिंसा में किस प्रकार संबंध स्थापित किया जाये ?
- वर्तमान राजनीति में सत्याग्रह के साधनों का किस प्रकार प्रयोग किया जाये ?
- मानव में अहिंसात्मक मूल्यों की स्थापना हेतु उसे किन सूत्रों का प्रशिक्षण दिया जाये ?
- शांतिपूर्ण विश्व का निर्माण करने के लिये व्यक्ति को अपने व्यक्तिगत स्तर पर जीवन शैली में क्या परिवर्तन करने चाहिए ?
- विश्व स्तर पर गाँधीजी के अहिंसात्मक विचारों का प्रभाव कितनी व्यापकता लिये हुए है ?

अनुसंधान प्रविधि

किसी भी अनुसंधान की सफलता उसके अध्ययन के लिये अपनायी गई प्रविधि व अध्ययन योजना पर आधारित होती है। प्रत्येक अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिक एवं ठोस परिणामों की प्राप्ति हेतु कुछ विधियों का चयन करता है। प्रस्तुत किये जाने वाले इस शोध कार्य में शोध के द्वितीयक स्रोतों का ही प्रमुख योगदान है। इनके आधार पर निम्न विधियों का प्रयोग शोध में किया गया है–

- पुस्तकालयों में उपलब्ध पुस्तकों का अध्ययन जिनमें विभिन्न पाठ्य पुस्तकें, वार्षिक पुस्तकें, संदर्भ पुस्तकें, पत्रावलियाँ आदि सम्मिलित है।
- समय–समय पर प्रकाशित होनें वाली पत्रिकाओं द्वारा अध्ययन जिनमें वार्षिक पत्रिकाएँ, मासिक पत्रिकाएँ, पाक्षिक पत्रिकाएँ, अंतर्राष्ट्रीय शोध सारांश एवं अंतर्राष्ट्रीय पत्रिकाएँ आदि सम्मिलित है।
- विश्वकोशों में विशेषज्ञों द्वारा लिखे गये विभिन्न विषयों पर संक्षिप्त सूचनाओं के अध्ययन द्वारा विषयवस्तु का संग्रहण।
- लघु शोध एवं शोध ग्रंथो का अध्ययन भी सूचना प्राप्ति का साधन है।
- प्रचलित समाचार पत्रों के माध्यम से भी शोध संबंधी जानकारी का संग्रह किया गया है।
- सूचना तकनीकी के माध्यम से, जिनमें इंटरनेट एवं टेलीविजन के द्वारा प्राप्त नवीनतम सूचनाओं का संग्रह सम्मिलित है, शोध को नवीनतम स्वरूप प्रदान करने का प्रयास किया गया है।
- गाँधीवादी चिंतन पर आयोजित सम्मेलनों एवं भाषणों में प्रयुक्त बिन्दुओं के विश्लेषण द्वारा शोध विषय से संबंधित तथ्य एकत्रित किये गये है।

*****

द्वितीय अध्याय

विश्व राजनीति : हिंसा एवं आतंकवाद

द्वितीय अध्याय

विश्व राजनीति : हिंसा एवं आतंकवाद

वर्तमान विश्व विभिन्न प्रकार की समस्याओं से ग्रसित है जिनके कारण विश्व में प्रभावशाली राष्ट्रों का प्रभाव बढ़ता जा रहा है एवं निर्बल राष्ट्र दमन की भावना से दबे हुए हैं। वर्तमान में एक ओर अहिंसा एवं विश्व शांति की केवल चर्चा हो रही है, दूसरी ओर हिंसा का विरोध कोई लेना ही नहीं चाहता। हिंसा का प्रयोग और प्रशिक्षण भी चल रहा है। एक ओर मानवाधिकारों की बात की जा रही है, दूसरी ओर एक मानव को मारना तिनके को तोड़ना जैसा हो गया है। एक ओर विश्व विकास शिखर को छू रहा है, दूसरी ओर आणविक विनाश की काली छाया मंडरा रही है। एक ओर आधुनिकतम तकनीकें विकसित हो रही है तो दूसरी ओर पर्यावरण प्रदूषण बढ़ रहा है। ये कुछ ऐसे विरोधाभास हैं जो वर्तमान विश्व राजनीति के समक्ष विश्व शांति के लिये चुनौती बनकर खड़े है। अध्ययन के विस्तार से पूर्व हमें विश्व राजनीति या अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के मूल बिन्दु राजनीति पर विचार करना होगा।

राजनीति से तात्पर्य

इस विषय का वैज्ञानिक रूप से प्रतिपादन करने वाले प्रथम विद्वान अरस्तू ने इसे 'राजनीति' नाम दिया। अरस्तू के बाद जैलीनेक, सिजविक, हाल्टनडार्फ आदि ने भी इस शब्द को अपनाया। लास्की ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ का नाम **'ग्रामर ऑफ पॉलिटिक्स'** और विल्सन ने भी अपनी प्रसिद्ध रचना **'प्रिसीपल्स ऑफ पॉलिटिक्स'** इसी शीर्षक से प्रस्तुत की। इन लेखकों का विचार है कि राज्य और सरकार से संबंधित विषय सामग्री राजनीति के अंतर्गत आ जाती है। सर फ्रेडरिक पोलक ने 'राजनीति' शब्द का संकुचित अर्थ में प्रयोग होते देखकर इसे स्पष्ट ही दो वर्गो, 'सैद्धांतिक राजनीति' और 'व्यावहारिक राजनीति' में बांट दिया है। लेकिन वर्तमान समय में राजनीति शब्द का आशय 'व्यावहारिक राजनीति' के अर्थ में हीं मुख्य रूप से लिया जाता है।[1]

प्रो. जैंक्स के अनुसार, ''राजनीति अध्ययन का वह विषय है जो राज्य और सरकार का अध्ययन करती है।''

मैक्सवेबर के अनुसार, ''राजनीति शक्ति के लिए संघर्ष अथवा उन लोगों को प्रभावित करने की कला है, जिनके हाथ में सत्ता है। इस प्रकार राज्यों के मध्य संघर्ष तथा राज्य के अंदर विभिन्न संगठित समुदायों के बीच संघर्ष दोनों ही राजनीति के अंदर आ जाते है।''

राजनीति के आवश्यक तत्व

1. राजनीति मनुष्य की सामाजिकता के साथ जुड़ी हुई मौलिक मानवीय प्रक्रिया है।
2. राजनीति स्थानीय स्तर से अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक सर्वव्यापक प्रक्रिया है।
3. राजनीति में निरंतर संघर्ष की स्थिति के कारण सक्रियता विद्यमान है।
4. राजनीति की प्रकृति परिवर्तनशील है अतः गतिशीलता इसका आवश्यक तत्व है।
5. राजनीति शक्ति के लिये संघर्ष है।
6. राजनीति निरंतर बनती–बिगड़ती संभावनाओं की कला है।

विश्व राजनीति

विश्व राजनीति एवं अंतर्राष्ट्रीय राजनीति शब्दों को परस्पर समान अर्थो में प्रयोग में लाया जाता है। कोई स्पष्ट सीमा रेखा नहीं है जो इनके मध्य अंतर दर्शा सके। गाँधीजी के विश्वग्राम की संकल्पना सिद्ध करने की दृष्टि से विश्व राजनीति के अर्थ पर विचार करना आवश्यक है।

विश्व राजनीति का अर्थ पूर्व में यूरोपीय राष्ट्रों की आपसी राजनीति से लगाया जाता था। उस समय लगभग समूचे विश्व में यूरोपीय राष्ट्रों की राजनीति ही प्रभावी थी। उनकी शक्ति–सम्पन्नता, औद्योगिक प्रगति, विकसित तकनीक और प्रसारवादी नीति से परिपूर्ण राजनीति विश्व के अन्य देशों की राजनीति से शांत और स्थानीय प्रकृति की थी। प्रथम महायुद्ध के बाद अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक वातावरण में परिवर्तन हुआ। दो महायुद्धों के बीच विश्व

के एक बड़े भाग में आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और तकनीकी क्षैत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद के विरूद्ध भीषण प्रतिक्रिया हुई। फलतः एशिया, अफ्रीका और लेटिन अमेरिका जैसै महाद्वीपों के अनेक राष्ट्र स्वतंत्र हो गए। संयुक्त राष्ट्र संघ एक विश्वव्यापी शांति संगठन के रूप में उभरा। इन परिवर्तनों के कारण अंतर्राष्ट्रीय राजनीति को केवल यूरोप की राजनीति मानने की स्थिति समाप्त हो गई। अब विश्व राजनीति का केंद्र बिन्दु उत्तरी अमेरिका, लेटिन अमेरिका, साम्यवादी देश, एशिया, अफ्रीका बन गया।[2]

विभिन्न राष्ट्रों के पारस्परिक संबंधों की राजनीति ही विश्व राजनीति है। अंतर्राष्ट्रीय क्षैत्र में विभिन्न राष्ट्र अपने हित–साधन के लिए आपसी संबंधों में संघर्ष की जिस अवस्था में रहते है, उसी का समग्र अध्ययन अंतर्राष्ट्रीय राजनीति या विश्व राजनीति अध्ययन का विषय है। विश्व राजनीति के तीन आवश्यक तत्व है – राष्ट्रीय हित, संघर्ष और शक्ति। राष्ट्रीय हित उद्देश्य है, संघर्ष स्थिति विशेष है एवं शक्ति उद्देश्य प्राप्ति का साधन कही जा सकती है। **हँस जे. मॉर्गेन्थो का मत है,** '' राष्ट्रों के मध्य शक्ति के लिए संघर्ष तथा उसका प्रयोग अंतर्राष्ट्रीय राजनीति है।''[3] मॉर्गेन्थो के तर्क में बल है किंतु यह नहीं भूलना चाहिए कि शक्ति एक साधन मात्र है साध्य नहीं। राष्ट्र केवल शक्ति के लिए ही कोई राजनीति संचालित नहीं करते। शक्ति चाहे अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का प्रमुख तत्व हो परंतु उसकी सीमाएं भी है।[4]

क्विंसी राइट के अनुसार, अंतर्राष्ट्रीय वातावरण के अंतर्गत इन बातों का अध्ययन अपेक्षित है– विश्व में तनाव एवं हलचल की सामान्य दशा, आर्थिक–सांस्कृतिक–राजनीतिक क्षैत्रों में राज्यों की पारस्परिक निर्भरता की मात्रा, कानून एवं मूल्यों का सामान्य स्तर, जनसंख्या तथा साधन, उपज और खपत, जीवन के आदर्श एवं विश्व राजनीति की स्थिति।

संक्षेप में यहीं कहा जा सकता है कि विश्व राजनीति का परिवेश बहुत व्यापक है। इसमें विश्व के प्रमुख राष्ट्रों के मध्य संबंध, विश्व के सम्मुख उत्पन्न समस्याओं, वैश्विक विचारधाराओं से संबंधित अध्ययन किया जाता है।

समकालीन विश्व राजनीति की नवीन दिशाऐं

बीसवी शताब्दी के अंतिम दशक से विश्व के सम्मुख उत्पन्न नवीन प्रवृत्तियों का विश्लेषण निम्न बिंदुओं में किया जा सकता है–

1. वर्तमान में आणविक हथियारों से सम्पन्न राष्ट्रों के कारण विश्व राजनीति के समक्ष युद्ध के भय की तीव्रता प्रबल रूप से विद्यमान है। यह समझा जाने लगा है कि ऐसा कोई भी युद्ध समूची अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था के लिये भयावह खतरा है।
2. वर्तमान विश्व राजनीति द्विध्रुवीय विश्व से बहुकेंद्रवाद की ओर बढ़ रही है। कभी विरोधी रहने वाली विचारधाराएँ आज एक–दूसरे के निकट आकर सह–अस्तित्व की बात करने लगी है। अमेरिका एवं चीन में निकट संबंध इसका उदाहरण है। एशिया और अफ्रीका के नवजाग्रत राष्ट्रों ने द्विध्रुवीयता से अलग रहकर इसे चुनौती दी है। भारत इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।[5]
3. आज क्षैत्रीय संगठनों के रूप और प्रकृति में अंतर आया है। पूर्व में जहाँ इन संगठनों का आधारभूत तत्व केवल राष्ट्र की सुरक्षा था एवं इसलिये सैनिक संगठनों सीटो, सेन्टो का निर्माण किया गया था। वर्तमान विश्व के क्षैत्रीय संगठनों के समक्ष संपूर्ण विश्व के संदर्भ में अपना महत्व, संबंध एवं प्रभाव प्रमुख मुद्दा बनकर सामने आया है।
4. समकालीन विश्व राजनीति में निःशस्त्रीकरण ने एक अधिक संयत प्रतिमान पर बल दिया है। द्वितीय महायुद्धोत्तर युग में इस पर अधिक बल दिया जाने लगा। विश्व राजनीति में अधिकांश राष्ट्र निःशस्त्रीकरण को युद्ध के खतरे को कम करने वाला उपाय मानने लगे है। आणविक हथियारों की विध्वंसक शक्ति ने निःशस्त्रीकरण की भावना को अधिक महत्वपूर्ण बनाया है।

5. वर्तमान विश्व में सोवियत संघ के विघटन के बाद अमेरिका एक मात्र महाशक्ति बना हुआ है। शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद दक्षिण, पूर्व एवं पश्चिम एशिया के तीन क्षैत्र अपनी सामरिक स्थिति के कारण विश्व के प्रधान संकट स्थल बने हुए है। वर्तमान विश्व राजनीति में साम्राज्यवाद तो अस्ताचल की ओर है लेकिन आर्थिक एवं राजनीतिक उपनिवेशवाद उदय के लिए प्रयत्नशील है।[6]
6. वर्तमान विश्व की बदलती राजनीतिक परिस्थिति में भी गुटनिरपेक्ष आंदोलन की प्रासंगिकता बनी हुई है। शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद विश्व में संयुक्त राज्य अमेरिका एकमात्र महाशक्ति है लेकिन उत्तर–दक्षिण संवाद, दक्षिण–दक्षिण सहयोग, विकासशील और अविकसित देशों के बीच सहयोग की भावना विकसित करने एवं विश्वशांति को सुरक्षित रखने में गुटनिरपेक्ष आंदोलन की भूमिका महत्वपूर्ण है।
7. तृतीय विश्व के विकासशील राष्ट्र चाहते है कि विश्व अर्थव्यवस्था पर विकसित देशों का वर्चस्व न रहे तथा विश्व अर्थव्यवस्था का संचालन एक–दूसरे राष्ट्र की प्रभुसत्ता का सम्मान करते हुए किया जाये। विकसित राष्ट्र अपने आर्थिक स्वार्थो का त्याग करने को तैयार नहीं है।
8. वर्तमान विश्व में आतंकवाद एक प्रबल चुनौती बनकर सामने आया है विश्व में अनेक आतंकवादी संगठन कार्यरत है जैसै– आई.एस.आई.एस., अलकायदा, जैश–ए–मोहम्मद, अलफतह आदि जो विश्व राजनीति पर दबाव डालकर अपने हित साधने की कोशिश में लगे हुए है।[7]

वर्तमान समय में अंतर्राष्ट्रीय स्तर की अनेक समस्याएँ विश्व राजनीति को प्रभावित कर रही है, जिनका समाधान करने के प्रयास जारी रहना आवश्यक है।

- वर्तमान विश्व में राष्ट्रवाद एवं अंतर्राष्ट्रवाद के मध्य तालमेल स्थापित करना।
- राष्ट्रीय सुरक्षा एवं अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के बीच सामंजस्य स्थापित करना।
- विश्व के राष्ट्रों में व्याप्त आर्थिक असमानताओं को समाप्त करना।
- लोकतांत्रिक एवं प्रतिक्रियात्मक शक्तियों का संघर्ष।

- आणविक युद्ध पद्धति से पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी तंत्र को खतरा।
- गरीबी एवं भूखमरी।
- साइबर क्राइम।
- हिंसात्मक घटनाएँ।
- आतंकवाद एवं उसके क्रियाकलाप।

हिंसा

आज हिंसा की आग से जिस प्रकार पूरा विश्व झुलस रहा है, उससे सभी परेशान है। अपने ही देश में, अपने ही नगर में बेफिक्र होकर सुरक्षित जीवन जीना कल्पना से बाहर होता जा रहा है। समाज में जितनी अशांति फैलती है, मानव उतनी ही अधिक सुरक्षा खोजता है।

इसीलिये कोई पूजा–अर्चना और यज्ञ आयोजित कर रहा है, विश्व शांतिपाठ करवाये जा रहे है, कही बड़े–बड़े सेमिनार और संवाद किये जा रहे है, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक सम्मेलन आयोजित किए जा रहे है। लेकिन समस्या और अधिक उलझती जा रही है। ऐसा क्यों? क्या ये प्रयास समाज को कहीं ओर ले जा रहे है ? कहीं ये सब समस्या से पलायन तो नहीं? अथवा हम भटक गए है और चाहते हुए भी सही निदान ढूंढ सकने में असमर्थ है। इन सभी प्रश्नों का जवाब मानव समुदाय को ज्ञात है। आवश्यकता है केवल समस्या को गंभीरता से लेकर आत्मिक दृष्टि से व्यावहारिक प्रयासों की।

हिंसा से तात्पर्य

सामान्य अर्थ में जिस किसी भी बात से दूसरों को पीड़ा पहुँचे वह हिंसा है। प्रतिकूलता अथवा विषम परिस्थिति का सामना होने पर सामान्य तौर पर दो तरह की प्रतिक्रियाएँ मनुष्यों में देखने को मिलती है– बचाव की चेष्टा तथा आक्रामकता। जब कोई व्यक्ति विपरीत स्थितियों में उग्र व आक्रामक हो रहा होता है तो वह हिंसा का रास्ता अपना रहा होता है। इसके विपरीत उन्हीं स्थितियों में एक अन्य तरह का व्यक्ति सामंजस्य का मार्ग खोज सकता है।

कहने का तात्पर्य है कि हिंसा एक विकल्प है। यदि कोई व्यक्ति हिंसा से बचना चाहे तो वह वैसा कर सकता है। अलबत्ता हिंसा का रास्ता आसान है पर वह विध्वंसकारी है।[8]

मनुष्य पशुत्व व दिव्यत्व के बीच की कड़ी है, अर्थात् मनुष्य पशु और देवता का मिश्रण है। पशुता उसका अतीत है तो दिव्यता उसका श्रेय। पशु–जगत में सतत् एक संघर्ष की स्थिति है – अस्तित्व के लिये संघर्ष। पशु जगत में हिंसा इसी संघर्ष के कारण है। वहाँ हिंसा जानबूझकर नहीं, बल्कि निसर्ग–प्रदत्त वृत्तियों के कारण है। पशु की हिंसा हिंसा के लिये न होकर प्रकृति की गूढ़ व्यवस्था के कारण है।

मनुष्य का आरंभ 'मन' से होता है। मनुष्य भी पशु तो है लेकिन, मन अर्थात् विचार क्षमता के कारण वह पशु से भिन्न है। मनुष्य द्वारा की गई हिंसा उसकी पशु प्रवृत्ति की नहीं, बल्कि उसकी विचार–क्षमता, बुद्धि–विवेक से रहित होने एवं विकृत मानसिकता की सूचक है। कुछ लोग अपनी मान प्रतिष्ठा, विचारों, मान्यताओं से गहन तादात्म्य बना लेते है तथा उन पर आँच आने पर संघर्ष के लिये तैयार हो जाते है। अस्तित्व का संघर्ष मनुष्य में जीवन संघर्ष का रूप ले लेता है। जीवन को हीन अर्थो में लेने वाला व्यक्ति ही हिंसा का मार्ग अपनाता है।[9]

जब भी कोई व्यक्ति आक्रामक होता है तो बुद्धि–विवेक उसका साथ छोड़ देते है। बुद्धि–विवेक को छोड़े बिना हिंसा संभव नहीं। ये ही मनुष्यता के प्रमाण है। मनुष्य की यह आक्रामकता अल्प अवधि के लिये होती है। यह बात सिद्ध करती है कि हिंसा अल्प अवधि के लिये आया विकार है, मनुष्य की सद्वृत्तियाँ हीं उसका मूल स्वभाव है। करूणा, दया, ममता, प्रेम इत्यादि कोमल भावों के लुप्त हो जाने की स्थिति में ही सुविचारित हिंसा पनपती है।

हिंसा के दो रूप हो सकते है – स्थूल एवं सूक्ष्म। स्थूल हिंसा से तात्पर्य ऐसी सभी बातों से है जो प्रत्यक्ष रूप से दूसरों की पीड़ा का कारण बनती है। गाली–गलौच से लेकर मारपीट, हत्या, बलात्कार आदि की घटनाएँ स्थूल हिंसा

है। दूसरों पर अपने विचार, मान्यताएँ थोपना, किसी का अनुचित फायदा उठाना आदि सूक्ष्म हिंसा है। इस तरह की चेष्टा दूसरों पर अपनी श्रेष्ठता जताने का ही प्रयास है।

हिंसा का इतिहास

वैज्ञानिक खोजों और विश्लेषणों से यह प्रमाणित हो चुका है कि मानव ने खेती करना आज से कोई दस हजार वर्ष पूर्व ही सीखा। यह कला जानने से पूर्व वह जंगलों में होने वाले कंद–मूल, फल–फूल तथा जंगली जानवरों के मांस से अपना उदर पोषण किया करता था। जानवरों के शिकार के साथ–साथ मानव हत्याओं एवं मानव शरीर का उपयोग भूख मिटाने के लिए करने के भी पर्याप्त प्रमाण मौजूद है।

हिंसा आदिमानव की जरूरत भी रही और प्रवृत्ति भी। एक–दूसरे के कबीले पर आक्रमण करना, शिकार के लिए लड़ाई–झगड़ा एवं योग्यतम की उत्तरजीविता का जन्म हो चुका था। प्रकृति ने मानव को स्वयं ही हिंसक प्रवृत्ति प्रदान की है और अपनी नीजि सुरक्षा के लिए यह जरूरी समझी गई है। प्राचीन काल में रामायण, महाभारत काल में झूठ बोलना, चोरी करना, जीव हत्या, स्त्रियों की रक्षा न करना आदि हिंसा के रूप माने जाते थे, जिसके लिए सजा का प्रावधान भी था।[10]

मध्यकालीन समय में भी स्त्रियों की इज्जत को तार–तार करना, जीव हत्या, चोरी करना, हथियार उठा लेना, जबरन गुलाम बना लेना, छोटे बच्चों से काम करवाना, असहायों पर अत्याचार करना, उपनिवेशवाद आदि हिंसा के ही रूप है।

आधुनिक काल में हिंसा का विकृत रूप दिखाई देता है। आणविक शस्त्रों के विकास के कारण हथियार भी आधुनिक हो गये है, फलस्वरूप लक्ष्य के अतिरिक्त हिंसक क्षैत्र का दायरा बढ़ गया है। राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद इसके लिए जिम्मेदार है। इसके अलावा हिंसा के अन्य रूपों में घरेलू हिंसा, राजनीति में हिंसा, धर्म एवं हिंसा, भ्रष्टाचार के आधार पर हिंसा, धोखा

देना, लूटमार, साधन चाहे जो भी हो लक्ष्य केवल पैसा कमाना आदि वर्तमान काल में हिंसा के रूप देखे जा सकते है। हिंसा के साथ झूठ आवश्यक रूप से सम्बद्ध है। **अलेक्सांद्र सोल्झेनित्सिन के शब्दों में,** ''हिंसा को मात्र झूठ द्वारा छिपाया जा सकता है और झूठ को केवल हिंसा द्वारा कायम रखा जा सकता है। जिसने भी एक बार हिंसा को अपना तरीका घोषित कर दिया वह हर हाल में झूठ को अपना सिद्धांत बनाने के लिए बाध्य हो जाएगा।''

हिन्दू धर्म के अनुसार हिंसा –

हिन्दू धर्म में हिंसा के संबंध में सोचना तथा बोलना भी अधर्म है। अतः प्रिय वचन नहीं बोलना, अप्रिय या कड़वे वचन का प्रयोग करना, दूसरे को हिंसा करने की अनुमति देना या प्रोत्साहित करना, दूसरों को डराना धमकाना भी हिंसा ही है।[11]

हिन्दू धर्म में समस्त प्राणियों से प्रेम व्यवहार करना चाहिए और पशुओं की हिंसा नहीं करना चाहिए, इस रूप में महात्मा गाँधी ने हिन्दू प्रेम–सिद्धांत को ईसाई प्रेम की तुलना में अधिक व्यापक माना है। **विनोबा भावे के अनुसार,** ''जो फूट डालती है, भेद बढ़ाती है, वही हिंसा है।'' अतः जो नेता भयंकर हिंसक है क्योंकि वे अपनी पूरी शक्ति से लोगों में भेद बढ़ाने और फूट डालने में व्यस्त है ताकि जनता इतनी कमजोर हो जाए कि उन्हें मनमानी करने से कोई रोक न सकें।

शुभचन्द्राचार्य के अनुसार, ''हिंसा ही दुर्गति का द्वार है, हिंसा ही पाप का समुद्र है, हिंसा ही घोर नरक है, हिंसा ही महा अंधकार है।''

ऋग्वेद में कहा गया है, ''हिन्दू धर्म में गौ–हत्या करना सबसे बड़ी हिंसा का रूप माना गया है।''

कवि रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा है, ''हिंसा का आघात तपस्या ने कब कहाँ सहा है, देवों का दल सदा दानवों से जीतता रहा है।''

इस प्रकार हिंदू धर्म में मानव जीवन के सभी पक्षों पर प्रकाश डालते हुए हिंसा का वर्णन किया गया है।

जैन धर्म के अनुसार हिंसा –

जैन धर्म ग्रंथ **पुरूषार्थ सिद्धयुपाय में बताया गया है,** ''आत्मा के परिणामों की पीड़ा जाना हिंसा है। जिस मन–वचन–काय से अपने अथवा पर के अथवा दोनों के परिणामों में आघात पहुँचे, दुःख हो, संताप हो, कष्ट हो उसी का नाम हिंसा है।'' जिसमें आत्मीय भावों की हिंसा होती है उसे भाव हिंसा कहते है। मूल रूप से हिंसा चार भेदों में बंटी हुई है – संकल्पिनी, विरोधिनी, आरंभिणी और उद्योगिनी।

इन चार भेदों में सबसे बड़ी और सबसे प्रथम त्याज्य संकल्प से होने वाली हिंसा है। जहाँ पर भावों में यह संकल्प कर लिया जाता है कि मैं इस जीवन को मार डालूं अथवा इसे दुःख पहुंचाऊ। वहाँ पर हिंसा करने का अभिप्राय रहने से उसे संकल्पिनी हिंसा कहते है। यह संकल्पी हिंसा तीव्र कषायों से उदय होती है।

विरोधिनी हिंसा उसे कहते है जहाँ पर जीव के मारने के या उसे दुःख पहुँचाने के तो भाव नहीं है, परंतु दूसरा जीव अपने को पहले मारना चाहे या दुःख देना चाहे तो इस अवसर पर अपनी रक्षा के लिए विरोध करने में जीव वध हो जाता है।

आरंभी हिंसा वह कहलाती है जो कि गृहस्थाश्रमों में होने वाले आरंभो से होती है। गृहस्थाश्रम में रहने वाले मनुष्यों को गृहस्थाश्रम संबंधी आरंभ करने ही पड़ते है, जैसै– जल का बरतना, चौका, चूल्हा, झाड़ू, कपड़े धोना आदि सभी आरंभ है। जहाँ आरंभ है वहाँ हिंसा होना अनिवार्य है। जिन आरंभो में अधिक जीवों के वध की संभावना हो, उन आरंभों को नहीं करना चाहिए।

उद्योगिनी हिंसा वह कहलाती है जो गृहस्थाश्रमी मनुष्यों के उद्योग धन्धों से होती है। किसी व्यापारी के अनाज भरने में, मील खोलने में, दुकान करने में, खेती आदि कार्यों में जो उद्योग किया जाता है, उसमें जीवों की हिंसा हो जाती

है। इस हिंसा में भी उसी प्रवृत्ति का विचार करना इष्ट है कि जिससे जीव वध अतिस्वल्प हो।[12]

महावीर स्वामी ने आरंभजा हिंसा, विरोधजा हिंसा, संकल्पना हिंसा ये तीन प्रकार की हिंसा बतायी है। देहधारण की अनिवार्यता हेतु होने वाली हिंसा आरंभजा हिंसा है। जीवन की सुरक्षा के लिए होने वाली हिंसा विरोधजा हिंसा है। ये दोनों हिंसा अणुव्रती के भी हो ही जाती है। किंतु संकल्पजा हिंसा आक्रामक मनोवृति वाली हिंसा है, जिसकी छूट गृहस्थी आमजन को भी नहीं है। महावीर स्वामी ने संकल्पजा हिंसा को त्यागने की प्रेरणा दी है।[13]

जैन धर्म में हिंसा के दो और प्रकार बताये गये है – द्रव्य हिंसा और भाव हिंसा। अनजाने में हुई हिंसा द्रव्य हिंसा है जबकि जानबूझकर की गई हिंसा भाव हिंसा है। पहली हिंसा का पाप नहीं लगता जबकि दूसरी हिंसा पाप फल देती है। जैन धर्म के अनुसार हिंसा का अर्थ लापरवाही या उपेक्षा से प्राणियों को चोट या पीड़ा पहुँचाना है, और यह सब घमंड, दुराग्रह, आसक्ति या घृणा जैसी वृत्तियों के कारण होता है।[14]

आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने अपनी पुस्तक, **'अहिंसा–तत्व दर्शन'** में हिंसा को कर्ता भेद के आधार पर तीन प्रकार की बताया है –

1. कृत हिंसा – अर्थात् स्वयं हिंसा करना।
2. कारित हिंसा – अर्थात् किसी से हिंसा करवाना।
3. अनुमोदित हिंसा – अर्थात् किसी का अनुमोदन या समर्थन करना।

उपर्युक्त तीन प्रकार की हिंसा तीन भावों से होती है – क्रोध से, लोभ से एवं मोह से।[15]

जैन धर्म के अनुसार शरीर पर कपड़े पहनना भी हिंसा के अंतर्गत माना जाता है। जैन साहित्य में हिंसा की सूक्ष्मतम परिभाषा मिलती है, जो कहती है, मन, वचन, कर्म से किसी को दुःख पहुंचाना हिंसा है। चींटी की हत्या करना भी हिंसा के अंतर्गत हीं आता है।[16]

जैन दर्शन में हिंसा को जघन्य अपराध माना गया है। जीव हत्या, मन, वचन, कर्म से प्राणी को हानि पहुंचाना, चोरी करना, किसी की निंदा करना, किसी की गुप्त बात का प्रकाशन करना, किसी के विश्वास को धोखा देना, मिथ्या उपदेश देना एवं झूठी गवाही देना आदि हिंसा के ही विभिन्न रूप है।[17]

बौद्ध धर्म एवं हिंसा –

बौद्ध धर्म में लोभ, द्वेष, किसी को मानसिक रूप से तंग करना, झूठ बोलना, चोरी करना, जीव हत्या, क्रोध, आसक्ति, ईर्ष्या, अज्ञान, अहंकार, शारीरिक क्षमताओं का गलत प्रयोग, मांसाहार का प्रयोग, किसी को गुलाम बनाना आदि हिंसा के विभिन्न रूप है।

ईसाई धर्म एवं हिंसा –

ईसा के अनुसार मन मे हिंसा का विचार करना ही हिंसा है। बाइबिल में क्रोध, हत्या, ईर्ष्या, द्वेष, गरीबों की मदद न करना, स्त्रियों का आदर न करना, ईश्वर की प्रार्थना न करना, दयालु न होना, अपने मत को ही सर्वोच्च मानना आदि हिंसा के विभिन्न रूप माने गये है।

पारसी धर्म एवं हिंसा –

जरथ्रुष्ठ चाहते थे मानव इस विश्व का पूरा आनंद उठाए, खुश रहे परंतु सदाचार के मार्ग से विचलित न हो। अतः पारसी धर्म में मनुष्य के निराशावादी एवं अवसादग्रस्त होने को पाप का दर्जा दिया गया है एवं इसे हिंसा का ही रूप माना गया है। मनुष्य के लिये भौतिक सुख–सुविधाओं की मनाही नहीं है, परंतु यह कहा गया है कि समाज से जितना तुम लेते हो उससे अधिक उसे दो।

वर्तमान समाज मे संरचनात्मक हिंसा

वर्तमान विश्व में संरचनात्मक हिंसा निम्न रूपों में दिखाई देती है –

1. **नस्लवाद –**

नस्लवाद में मानवता को विभिन्न नस्लों के आधार पर विभाजित कर कुछ नस्लों के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जाता है जो कि अमानवीय है। प्राचीनकाल से अमेरिका में अश्वेत लोगों को गुलाम बनाने की प्रथा थी।

दक्षिण अफ्रीका में भी रंगभेद की नीति अपनायी जाती थी। हिटलर के समय में यहूदियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता था। पश्चिमी देशों में तो आज तक नस्लीय भेदभाव जारी है, जिसका शिकार एशिया, अफ्रीका और लेटिन अमेरिका के विभिन्न देशों के अप्रवासी लोग है।

2. **लैंगिक हिंसा –**

विश्व के कई देशों में पितृसत्तात्मक व्यवस्था है। भारत इसका उदाहरण है जहाँ पुरूषों को अधिक महत्व प्रदान किया जाता है तथा स्त्रियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे उनके अधीन रहे। यह लैंगिक हिंसा अनेक रूपों में देखने को मिलती है। जैसै– कन्या भ्रूण हत्या, लड़का–लड़की के लालन–पालन में भेदभाव, बालविवाह, उत्पीड़न, दहैज, यौन शोषण, बलात्कार आदि। भारत में गिरता लिंगानुपात इसका सूचक है।

3. **उपनिवेशवाद –**

उपनिवेशवाद के दौर में अनेक देशों को गुलामी के दंश को झेलना पड़ा जिससे वे आज तक उबर नहीं पाये है। वर्तमान में भी फिलिस्तीन इजरायली प्रभुत्व के खिलाफ संघर्षरत है। भारत एवं एशिया, अफ्रीका के कई राष्ट्र इसके भुगतभोगी है।

4. **धार्मिक हिंसा –**

धर्म के आधार पर होने वाली हिंसा के कारण विश्व में अनगिनत लोगों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। कहीं पोप ने अपने हित लाभ के लिये लाखों निर्दोष अबलाओं को चुड़ैल घोषित कर जिंदा जलवा दिया, कही हिटलर ने यहूदी धर्म से अपनी कुण्ठा निकालने के लिए लोगों को यातनाघरों एवं गैस चेम्बरों में तपा–तपा कर मार दिया, भारत–पाकिस्तान में धर्म के नाम पर दंगो में लाखों लोग मार दिये। धर्म सदैव कल्याण एवं परोपकार के नाम पर मानवता की बलि चढ़ाता रहा है।

5. **आतंकवाद –**

इस प्रकार की हिंसा के शिकार व्यक्ति जिस प्रकार के मनोवैज्ञानिक और भौतिक नुकसानों से गुजरते है, वे उनके मन में व्यवस्था के प्रति अनेक शिकायतें उत्पन्न कर देते है। कभी–कभी ये शिकायतें इतनी उग्र हो जाती है कि वे हिंसा के नये दौर की शुरूआत कर देते है। आतंकवाद इसका ज्वलंत उदाहरण है। 1947 में भारत–पाकिस्तान विभाजन के दौरान हुई हिंसा एवं घृणा के परिणामस्वरूप भारत आज आतंकवाद के अभिशाप झेल रहा है। आतंकी अपने मंसूबों को अंजाम देने के लिये आधुनिक तकनीक का प्रयोग करते है। इसके लिये वे आत्मघाती हमले करने से भी नहीं चूकते। यहाँ तक कि महाशक्तिशाली अमेरिका भी आतंकवाद की मार से नहीं बच सका है।[18]

6. **घरेलू हिंसा –**

घरेलू हिंसा की जड़े हमारे समाज तथा परिवार में गहराई तक जम गई है। इसे व्यवस्थागत समर्थन भी मिलता है। घरेलू हिंसा के खिलाफ यदि कोई महिला आवाज मुखर करती है तो इसका तात्पर्य होता है अपने समाज और परिवार में आमूलचूल परिवर्तन की बात करना। प्रायः देखा जा रहा है कि घरेलू हिंसा के मामले दिनो–दिन बढ़ते जा रहे है। परिवार तथा समाज के संबंधों में व्याप्त ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार, अपमान तथा विद्रोह घरेलू हिंसा के मुख्य कारण है। परिवार में हिंसा की शिकार केवल महिलाएँ ही नहीं बल्कि वृद्ध और बच्चे भी बन जाते है। प्रकृति ने महिला और पुरूष की शारीरिक संरचनाएँ जिस तरह की है, उनमें महिला हमेशा नाजुक और कमजोर रही है। **राष्ट्रीय महिला आयोग के अनुसार,** ''कोई भी महिला यदि परिवार के पुरूष द्वारा की गई मारपीट अथवा अन्य प्रताड़ना से त्रस्त है तो वह घरेलू हिंसा की शिकार कहलाएगी। घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 उसे घरेलू हिंसा के विरूद्ध संरक्षण और सहायता का अधिकार प्रदान करता है।''

आधारशिला (एन.जी.ओ.) के अनुसार, ''परिवार में महिला तथा उसके अलावा किसी भी व्यक्ति के साथ मारपीट, धमकी देना तथा उत्पीड़न घरेलू हिंसा की श्रेणी में आते है। इसके अलावा लैंगिक हिंसा, मौखिक और भावनात्मक हिंसा तथा आर्थिक हिंसा भी घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम 2005 के तहत अपराध की श्रेणी में आते है।''[19]

घरेलू हिंसा – विश्व की स्थिति

विश्व में महिलाओं को अधिकारों की सुरक्षा को अंतर्राष्ट्रीय महिला दशक (1975–85) के दौरान एक पृथक पहचान मिली थी। सन् 1979 में संयुक्त राष्ट्र संघ में इसे अंतर्राष्ट्रीय कानून का रूप दिया गया था। विश्व के अधिकांश देशों में पुरूष प्रधान समाज है। पुरूष प्रधान समाज में सत्ता पुरूषों के हाथ में रहने के कारण सदैव ही पुरूषों ने महिलाओं को दोयम दर्जे का स्थान दिया है। यही कारण है कि पुरूष प्रधान समाज में महिलाओं के प्रति अपराध, कम महत्व देने तथा उनका शोषण करने की भावना बलवती रही है। ईरान, अफगानिस्तान की तरह अमेरिका जैसै विकसित देशों में भी महिलाओं के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जाता है। अमेरिका में एक नियम है, जिसके अनुसार यदि एक परिवार में माँ और बेटा है तो वे एक ही शयन कक्ष के मकान के हकदार होंगे। इससे स्पष्ट है कि अमेरिका जैसै देश में भी महिलाओं के प्रति भेदभाव किया जाता है। विश्व का सबसे अधिक शक्तिशाली व उन्नत राष्ट्र होने के बावजूद भी अमेरिका में अनेक क्षैत्रों में महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार प्राप्त नहीं है। भारत में लगभग पाँच करोड़ महिलाओं को अपने घर में ही हिंसा का सामना करना पड़ता है। इनमें से मात्र 0.1 प्रतिशत ही हिंसा के खिलाफ कानूनी शिकायत दर्ज कराती है।[20]

गाँधी दर्शन एवं हिंसा

गाँधीजी के अनुसार हिंसा मन से शुरू होती है, वाणी उसे प्रकट करती है और शरीर उसे कार्यरूप देता है। जैसै किसी चींटी की मृत्यु में न मन का साथ था, न वाणी का और कर्म भी हिंसा के उद्देश्य से नहीं था। तो इस प्रकार

की हिंसा को हिंसा नहीं माना जा सकता। केवल शारीरिक शक्ति ही नही, मन और वचन भी हिंसा के साधन है। ठीक इसके विपरीत अहिंसा भी मन, वचन, कर्म से अपना प्रभाव डालती है। मन, वचन, कर्म तीनों शुद्ध पवित्र हो, हिंसा शून्य हो, तभी वह पूर्ण अहिंसा है। जैसै हिंसा का मूल मन है, उसी प्रकार अहिंसा का मूल भी मन है।[21]

उन्होनें हिंसा का अर्थ बड़े विश्लेषण के साथ स्पष्ट किया है। हिंसा के अंतर्गत हत्या, किसी को किसी प्रकार की पीड़ा देना, किसी को क्षति या हानि पहुंचाना ये सब आ अवश्य जाते है, किंतु ये अपने में हिंसा नहीं है। हिंसा के हिंसा होने के लिए इसके पीछे की मानसिकता ही प्रधान है। यदि प्राण लेना या पीड़ा पहुंचाना या क्रोध से, किसी स्वार्थ से, ईर्ष्या से या जानबूझकर किया गया कार्य हो तो वह हिंसा है।[22]

उनके अनुसार चोरी करना, झूठ बोलना, घृणा करना, लोभ, क्रोध, लालसा इत्यादि हिंसा के अंतर्गत आते है। सत्य का साथ न देना भी हिंसा है। अपने पास धन होने पर भी किसी गरीब पर दया न दिखाना हिंसा है। भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरू जैसै कई क्रांतिकारियों ने राष्ट्रहित के कार्य तो किये, परंतु उनके द्वारा अपनाये गए तरीके हिंसा का रूप थे।

गाँधीजी ने हिंसा की सीमा रेखा दर्शाते हुए बताया है कि, ''मैं एक क्षण के लिए भी किसी प्राणी को असहाय अवस्था में धीरे–धीरे होने वाली मृत्यु या भयंकर कष्ट भोगते हुए नहीं देख सकता। जिस प्रकार रोगी के कल्याण के लिए उसके शरीर पर चाकू का प्रयोग करके शल्य चिकित्सक कोई हिंसा नहीं करता अपितु विशुद्ध अहिंसा के अनुसार ही आचरण करता है।[23] हिंसा की सीमाएं है और वह असफल हो सकती है, परंतु अहिंसा की कोई सीमाएं नहीं है और वह कभी असफल नहीं हो सकती।[24]

उन्होनें कहा था, ''मैंने तलवार छोड़ी सो इस कारण नहीं कि वे मुझे चलानी नहीं आती अथवा मैं शक्तिहीन हूँ। आज भी मैं तलवार को तोड़ने की शक्ति रखता हूँ। नुकीली कटार को अगर किसी व्यक्ति के पेट में भोंकना चाहूँ

तो भोंक सकता हूँ। तथापि मैंने इसे त्याग दिया है, क्योंकि इससे कुछ लाभ नहीं है।[25]

विश्व राजनीति एवं हिंसा

विश्व के किसी भी भाग में हिंसा का किसी भी रूप में विद्यमान होना न केवल उस राष्ट्र के लिये आंतरिक रूप से हानिकारक है, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय दृष्टि से भी उस राष्ट्र को कमजोर बनाने के लिये उत्तरदायी है। विश्व राजनीति एवं हिंसा में परस्पर संबंध निम्न बिंदुओं में स्पष्ट है –

1. हिंसक घटनाओं से विश्व जनमत में भय पैदा होता है। जिससे सत्ता परिवर्तन की स्थितियाँ बनती है। कई बार सत्तारूढ़ शासनतंत्र भी जनता में भय की स्थिति पैदा करने के लिए हिंसा को अंजाम देते है।
2. शासनतंत्र अपनी असफलताओं को छिपाने के लिए भी हिंसा का रास्ता अपनाते है। जिससे अपने कार्यो का हिसाब देने से बचा जा सके।
3. राजनीतिक फायदा उठाने के लिये भी हिंसा का प्रयोग किया जाता है। आमतौर पर ऐसी स्थिति चुनावों से पूर्व देखी जाती है।
4. हिंसात्मक घटनाओं के पीछे स्वेच्छाचारी संगठनों के निर्माण का उद्देश्य भी छिपा हुआ है। समान विचारधारा वाले व्यक्तियों से मिलकर राजनीतिक तंत्र पर दबाव डाला जाता है एवं अपने हितों की पूर्ति सुनिश्चित की जाती है।
5. राष्ट्र के विकास में बाधा पैदा करने हेतु असामाजिक तत्वों द्वारा हिंसा के प्रयोग को अंजाम दिया जाता है।

आतंकवाद

आतंक क्या है? क्यों यह प्रबल सिद्ध हो रहा है? और आतंकवाद–आतंकवादी ये शब्द इतने आम क्यों बन गये है कि ऐसा आभास देने लगे है कि इनसे छुटकारा मिलने की संभावना, किन्हीं मूलभूत मान्यताओं के बने रहते बहुत बलवती प्रतीत नहीं होती।

आतंकवाद को प्रायः ऐसे विद्रोही और उग्रवादी संगठनों तक ही सीमित करके देखा जाता है, जो किसी देश के एक भाग या कुछ विशेष भागों में अपनी राजनीतिक मांगों को मनवाने के लिए हिंसा का मार्ग अपना लेते है। उस क्षैत्र में विभिन्न नामों के कुछ उग्रवादी संगठन बन जाते है, जो अपनी मांगो को सरकार से मनवाने के लिये अपहरण और हत्याएँ करते हैं, बैंक डकैतियाँ डालते है, बम विस्फोट करते है। ऐसी उग्रवादी कार्यवाहियाँ कभी क्षैत्रीय आजादी, कभी धर्म, कभी राजव्यवस्था मे परिवर्तन, कभी भाषायी और सीमायी समस्याओं को लेकर होती है। जो भी हो लेकिन तथ्य यही है कि आतंकवाद चाहे जिस श्रेणी का हो, उसका लक्ष्य आतंक फैलाकर अपने उद्देश्यों की पूर्ति करना ही होता है।[26]

किसी स्कूल या कॉलेज में कोई न कोई छात्र ऐसा होता है जो अकारण दूसरे विद्यार्थियों पर अपना रौब जमाता है। किसी अमीर बाप या किसी मंत्री–विधायक का बेटा होता है तो स्वयं को दूसरों के मुकाबले अधिक सत्ता सम्पन्न जतलाने के लिए दूसरे छात्रों के साथ–साथ अध्यापकों तक को परेशान करने के तरीके अपनाता है। यह भी होता है कि यदि कोई किसी अभावग्रस्त परिवार का है और अन्य छात्रों की तरह सुख–सुविधाएँ प्राप्त करने और शान–बान से स्वच्छंद व्यवहार नहीं कर पाता, अपना क्षोभ हिंसात्मक व्यवहार अपनाकर प्रकट करता है। जोर जबर्दस्ती किसी से कुछ छीनकर भागने वाले को चोर उचक्का कह दिया जाता है। ये कुछ ऐसे व्यवहार की परिभाषा करने वाले शब्द प्रयोग है जो किसी भी समाज में प्रचलित होते है।[27]

किसी ऐसे व्यवहार को रोकने के लिए सही उपायों का निर्धारण उसके कारणों के अध्ययन से ही हो सकता है। लेकिन क्या ऐसा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने का प्रयास प्रायः होता है? यदि ऐसा होता तो समाधान ढूंढ़ने के लिए कोई आधार भी प्राप्त होता। जहाँ ऐसा होता है वहाँ पूरी सफलता के साथ भले न सही परंतु समाधान ढूंढ़ लिये जाते है। किसी व्यक्ति का बचपन कैसै बीता? वह किस प्रकार के पारिवारिक–सामाजिक वातावरण में पला–बढ़ा?

उसके आसपास के लोगों की सोच और उनका भिन्न परिस्थितियों में व्यवहार कैसा है ? जिस जाति, समुदाय, संप्रदाय, समाज, राजनीतिक दल के साथ वह जुड़ा हुआ है, उसका रवैया शांतिपूर्ण है, विद्रोहात्मक है, प्रतिरक्षात्मक है या आक्रामक है। बहुत कुछ व्यक्ति की पृष्ठभूमि पर निर्भर करता है, जो उसे वैसा बनाती है।

कोई भी जन्म से बुद्ध जैसा शांतिप्रिय और अहिंसावादी नहीं होता, न ही होता है जन्म से ही कोई हिटलर जैसा रक्तपिपासु। लेकिन जिस प्रकार के वातावरण में वह व्यक्ति पलते–बढ़ते हुए जीवन में आगे बढ़ता है, उसका प्रभाव निश्चय ही रहता है और विशिष्ट परिस्थितियों में तद्नुसार वह अपने परिवार, समाज, मजहब, संप्रदाय की अपेक्षाओं के अनुरूप उन द्वारा प्रायोजित अनुष्ठान, अभियान, प्रयास–प्रयत्न या फिर किसी हिंसक–अहिंसक आंदोलन का अंग बन जाता है। सक्रिय होता है तो सामाजिक–शासकीय नियमों की अवहेलना कर अपने अच्छे–बुरे कृत्यों को सही ठहराता है।[28] उदाहरण के लिए पृथक राज्य या देश के लिए चलाये जा रहे आंदोलनों में हिंसा और अन्य आतंकवादी गतिविधियों में लिप्त होने वाला भले ही दूसरों द्वारा आतंकवादी घोषित कर दिया जाए, लेकिन वह स्वयं को एक यौद्धा मानता है। ऐसा मानते हुए वह हत्या, अपहरण, हिंसा, बमविस्फोट, युद्ध को सही ही ठहराता है। जब तक उसका यह विश्वास बना रहता है, उसका संकल्प क्षीण नहीं होता और वह जाने–अनजाने अपने समाज, संप्रदाय, मजहब के प्रति अपना कर्तव्य ऐसे कृत्यों का मानते हुए भी वस्तुतः उसका अहित ही करता है।

आतंक 'उदिष्ट' नहीं होता। किसी भले या बुरे उदिष्ट की पूर्ति का एक साधन अवश्य बन गया है। आतंक ऐसे कृत्यों का नाम है जो किसी मत या मांग को एक व्यक्ति, एक विशिष्ट समाज अथवा व्यक्ति समूह या फिर सरकार से पूरी करवाने के लिये किये जाते है।[29]

आतंकवाद के संबंध में किसी एक बिंदु पर पुष्ट परिणाम या अंतर्राष्ट्रीय स्थिति में सहमति न हो सकने का मुख्य कारण आतंकवाद से जुड़े ऐसी

नैतिकता के प्रश्न ही रहे है। अनेक पूर्व शोधकर्ताओं का कहना है, यदि इसके किसी पक्ष पर कोई सहमति दिखाई देती है तो बस यही है कि सभी आतंकवादी कृत्यों में हिंसा को एक अनिवार्य तत्व मान लिया गया है और यह कि प्रायः इनके साथ कोई न कोई मांग जुड़ी होती है। इनका उद्देश्य भी प्रायः राजनीतिक होता है और आतंकवादियों द्वारा ऐसे तरीके अपनाये जाते है, जिससे उन्हें विज्ञापन मिले।

आतंकवाद को विभिन्न शैलियों में परिभाषित किया गया है और इसके बारे में काफी मतभेद है। विकसित देश जहाँ इसे रूग्ण या बीमार मानसिकता के रूप में परिभाषित करते है और अतर्कसंगत आचरण बताते हैं, वही कुछ विकासशील देश इसे क्रांति और इसके आचरण करने वालों को क्रांतिकारियों की श्रेणी में ला खड़ा करते है। विकसित देशों में हॉलैण्ड जैसै देश भी है जो इसके अस्तित्व को नहीं स्वीकारते।

माओ का कथन है कि, ''सत्ता बन्दूक की नली से निकलती है।''

श्वाजनबर्गर के अनुसार, ''एक आतंकी की परिभाषा उसके तत्कालीन उद्देश्य से की जाती है। आतंकवादी शक्ति का प्रयोग डर पैदा करने के लिए करता है और दुबारा वह उस उद्देश्य को प्राप्त कर लेता है जो उसके दिमाग में है।''

1973 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा इसे परिभाषित करते हुए कहा गया, ''आतंकवाद एक आपराधिक कार्य है जो राज्य के खिलाफ किया जाता है और इसका उद्देश्य भ्रम पैदा करना है। यह स्थिति कुछ व्यक्तियों, समूहों या जन सामान्य की भी हो सकती है।''

अमेरिका के प्रतिरक्षा विभाग के अनुसार, ''समाज या सरकार के खिलाफ गैर–कानूनी बल प्रयोग करना या ऐसा न करके केवल धमकी देना ही आतंकवाद है।''

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि आतंकवाद एक सामूहिक अपराध है जो एक आतंकवादी समूह द्वारा किसी व्यक्ति विशेष के विरूद्ध न होकर एक व्यवस्था, धर्म, वर्ग या समूह के विरूद्ध होता है। आतंक

फैलाने तथा मनोवैज्ञानिक युद्ध की स्थिति निर्मित करने की तकनीक ही आतंकवाद है। आतंकवाद का प्रयोग आतंकी अपने समूह की योजना अनुसार, सहिष्णु तथा असहिष्णु साधनविहीन समूहों के विरूद्ध अपनी ताकत दिखाने के लिए करता है। वैधानिक शासन व्यवस्था अथवा विरोधी समूह की प्रतिरोधी क्षमता पर प्रहार कर जनमत को जबरन अपने पक्ष में करने का यह अपराध दीर्घावधि के राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जाता है। अफगानिस्तान के राष्ट्रपति अशरफ गनी ने नईदिल्ली में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी से मुलाकात के बाद कहा कि, ''पूरी दुनिया को मिलकर आतंक से जंग लड़नी होगी और एक हलपूर्ण नतीजे पर पहुंचना होगा। आतंक को अच्छा या बुरा में नहीं बांटकर देखा जा सकता है।''[30]

आतंकवाद का इतिहास

आतंकवाद के इतिहास को समय सीमा में बांधना दुष्कर कार्य है। इसकी उत्पत्ति के बीज हिंसा में है। वास्तविकता यह है कि हिंसा भी मानव जितनी ही पुरानी है, पर आतंकवाद इतना पुराना नहीं हो सकता जितनी हिंसा। आतंकवाद एक योजनाबद्ध तरीका है और मानव ने यह कला बहुत बाद में सीखी जब वह लिखने–पढ़ने लगा, आवागमन के साधन हो गये, वह भौतिकवाद की ओर जाने लगा और अपने दुश्मन के खात्मे के लिये योजनाएँ बनाने लगा।

प्राचीनकाल में आतंक का प्रयोग शासक–नीति का आवश्यक अंग था। बाइबिल युग में पड़ौसी नगर पर विजय के बाद वहाँ कत्लेआम करना सामान्य बात थी। फ्रांसीसी क्रांति जैसा आतंक यूनान और रोम में अपनाया गया। जिसमें छोटे से अपराधी को जलती आग के ऊपर लटका दिया जाता था। रोम साम्राज्य का जन्म ही राजपरिवारों की आपसी कलह के कारण हुआ जिसकी दो घटनाएँ इतिहास में अंकित है– 509 ई.पू. में बादशाह तारकिन द्वितीय की हत्या एवं 44 ई.पू. में जुलियस सीजर की हत्या। शत्रु क्षैत्र पर विजय के बाद रोमन सेनाएँ शत्रु देश की पूरी की पूरी प्रजा को मौत के घाट उतार देती थी।

मध्यकाल के आरंभ में आतंक का प्रयोग डर के रूप में किया जाने लगा। इस रूप में अल्पसंख्यक व्यक्तियों को इतना प्रताड़ित किया जाये कि उन्हें देखकर बहुसंख्यक व्यक्ति भी सत्ताधारी के समक्ष अपनी बात प्रस्तुत नहीं कर सके। इस समय सबसे खूंखार और आतंकी जाति थी– मंगोल। इनका प्रमुख नेतृत्वकर्ता था– चंगेज खाँ। यह जाति तीव्र नरसंहार में विश्वास करती थी। इसने रूस एवं चीन को आतंकवाद से त्रस्त रखा। उत्तरी अमेरिका में आतंक का ज्वलंत उदाहरण रेड इंडियनों और यूरोपियनों के बीच संघर्ष में दिखाई देता है। दोनों ने आतंकी क्रियाकलापों को अंजाम दिया।

आतंकवाद की वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय स्थिति

विश्व में आतंकवाद की समस्या नई नहीं है। आतंकवाद विश्व के विभिन्न हिस्सों में विविध रूपों में दिखाई देता है। यह कभी राजनीतिक कारणों से उत्पन्न हुआ तो कभी आर्थिक कारणों से। कभी सामंतो से विद्रोह करने वाले संगठित गिरोह के रूप में सामने आया तो कभी धर्मो के नाम पर की गई संगठित हिंसा के रूप में, किंतु विश्व में संगठित आतंकवाद की जो स्थिति आज उत्पन्न हुई है, वैसी पहले कभी नहीं थी। आज यह दावानल विश्व के विभिन्न भागों के साथ–साथ भारतीय उपमहाद्वीप को भी अपनी चपेट में लिये हुए है।

आतंकवादियों ने हिंसा की जो आधुनिक विधियाँ अपनायी है, उनमें भी तेजी के साथ अंतर्राष्ट्रीय समानता आती जा रही है। फिरौती के लिये या अपने सहयोगियों की रिहाई के लिए अतिविशिष्ट व्यक्तियों और विमानों तक का अपहरण सामान्य बात हो गई है। कंधार विमान अपहरण कांड इसका उदाहरण है जिसके बाद मौलाना मसूद अजहर को भारत को रिहा करना पड़ा था। हद यह है कि अपनी मांगे मनवाने के लिये आतंकवादियों के आत्मघाती दस्ते जीवन की बली देने तक से नहीं घबराते। पकड़े जाने पर साईनाइट कैप्सूल निगलना तो आम बात है। अब दूसरों की हत्या करने के लिये मानव बम का प्रयोग होने लगा है।[31]

ब्रिटेन में आयरिश लिबरेशन आर्मी तथा अरब देशों में सर्वप्रथम फिलीस्तीनी मुक्ति संगठन ने आत्मघाती दस्ते तैयार किए थे। यह आतंकवाद के विकास का वह चरण है जहाँ दूसरों की जान लेने के लिए आदमी अपने जीवन की चाह भी छोड़ देता है। यह आत्मघाती दस्ते अब भी सक्रिय है।[32]

साईनाइट कैप्सूल साथ रखने की विधि भी विश्व में देखी जा सकती है। लिबिया, फिलीस्तीन, इजरायल तथा ब्रिटेन के आतंकवादी अक्सर ऐसा ही करते रहे है। वे अपने साथ हीरा या विष रख लेते थे ताकि पकड़े जाने पर उसे चाटकर या खाकर अपनी जीवनलीला समाप्त की जा सके।

आज आतंकवाद विश्वव्यापी रोग है। स्थिति यह है कि विश्व के विभिन्न भागों में सक्रिय उग्रवादी संगठन एक–दूसरे को अस्त्र–शस्त्र, आर्थिक सहायता आदि देकर आपस में सहयोग कर रहे है। नाइजीरिया के खूंखार आतंकी संगठन बोकोहरम ने इस्लामिक स्टेट (आई.एस.) से सहयोग कर लिया है। अब दोनों संगठन मिलकर कहर बरपाने की कोशिश में है। दुनिया में पहचान कायम करने के लिए बोकोहरम ने पिछले दो वर्षो में सैंकड़ों नाबालिगों एवं महिलाओं को अगवा कर उन्हें मानव बमों में तब्दील किया है। आई. एस. ने खासतौर पर भारत में तबाही मचाने के लिए अफगानिस्तान में अल खोरसां नाम का संगठन बनाया। अब दोनों संगठनों के आतंकी मिलकर भारत को निशाना बना सकते है।[33] इसी प्रकार श्रीलंका के आतंकवादी संगठन लिट्टे ने भी असम के उल्फा उग्रवादियों की मदद की थी। जापान का आतंकवादी संगठन 'जापानीज रेड आर्मी' विश्व के कोने–कोने में कार्यरत आतंकवादियों से संपर्क बनाए हुए है।

न्यूयॉर्क टाइम्स की रिपोर्ट के मुताबिक आतंकी संगठन इस्लामिक स्टेट की एक दिन की कमाई एक मिलियन डॉलर (6.3 करोड़ रूपये) है। यह कमाई उसके कब्जे के क्षैत्रों में अवैध वसूली से हो रही है। जिसमें अधिकतम खर्च उसके लड़ाकों पर किया जा रहा है।[34]

आतंकवादी संगठन अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आज एक–दूसरे को सहयोग नहीं दे रहे है, बल्कि किराये पर लड़ाकूओं को सप्लाई करने का काम भी कर

रहे है। पाकिस्तान भाड़े के अफगान लड़ाकूओं को भारत के कश्मीर में भेज रहा है। बताया जाता है जापानीज रेड आर्मी के पास इस समय चालीस हजार प्रशिक्षित आतंकवादी है, जो मांग होने पर दूसरी जगह भेज दिये जाते है। सरकारें भी अपने निहित स्वार्थो के लिये आतंकवादी संगठनों को संरक्षण देती है। फरवरी 2015 में मालदीव के पूर्व राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद की गिरफ्तारी आतंक निरोधी कानून के तहत की गई जो इसका उदाहरण है।

इराक के राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन ने जब अपने पड़ौस के छोटे से देश कुवैत पर आक्रमण किया तो उन्होनें दुनिया के दो कुख्यात आतंकवादी संगठनों अबू निदाल और अबू अब्बास से गठजोड़ करने में भी झिझक महसूस नहीं की। अबू निदाल नामक आतंकवादी संगठन भी भाड़े पर लड़ाकू दस्ते सप्लाई करता रहा है। कभी यह सीरिया के हाथों बिका और कभी लीबिया के हाथों। बाद में इसे इराक के सद्दाम हुसैन ने खरीदा। इसी संगठन ने सन् 1986 में दावा किया था कि उसे 40 करोड़ डॉलर दे दो, वह पश्चिम एशिया का नक्शा बदलकर रख देगा।[35] लगभग इसी प्रकार का दावा जून 2014 में आतंकी संगठन आई. एस.आई.एस. के सरगना अबु बकर अल बगदादी ने किया है। ऑनलाइन पोस्ट ऑडियो में उसने आधी दुनिया पर कब्जे का मंसूबा जताया है, जिसमें यूरोप का एक बड़ा हिस्सा शामिल है।[36]

आतंकवादी गतिविधियों के विश्वव्यापी फैलाव में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया भी बहुत खतरनाक भूमिका निभा रहा है। एक बार फ्रांस और इंग्लैण्ड में बनी हुई कुछ फिल्मों के वीडियो कैसैट पकड़े गए थे, जिनमें भारतीय सैनिकों को कश्मीरी जनता पर भारी अत्याचार करते दिखाया गया था। यह सर्वविदित है कि आज का मीडिया सूचना के अधिकार का कई बार दुरूपयोग करता है। इस दुरूपयोग के अपने निहितार्थ और लाभ है। वह जहाँ एक ओर किसी के पक्ष में सूचनाएँ दबा सकता है, वही वह सूचनाओं को उबार भी सकता है। उसमें एक छिपी हुई हिंसा है और दबा हुआ आतंकवाद। इन दोनों तत्वों का विकास हुआ है। चिली, ग्वाटेमाला, अफगानिस्तान, वियतनाम, सोमालिया, श्रीलंका, कश्मीर

इसके उदाहरण है। आतंकवादियों की छोटी–छोटी मुहिम भी आज अंतर्राष्ट्रीय समाचार बन जाती है। ये समाचार एक सुदीर्घ यातना की तरह जनमानस पर अपनी भयावह जगह बनाते है।

आतंकवाद के शक के घेरे में मुसलमान ?

मानवता, न्याय और यकीन की बुनियाद पर खड़े इस्लाम पर उंगलियाँ उठ रही है। गैर मुसलमानों की नई पीढ़ी में एक शक घर कर रहा है कि क्या आतंकवाद फैलाने का काम मुसलमान करते है ? दुनिया में जो आँखें खोल रहे है उनके सामने से इस्लाम की सही तस्वीर ओझल हो रही है। इस पीढ़ी की यह बदकिस्मती कहेंगे कि वह उपदेशों, शिक्षा और नसीहतों से भरे इस्लाम के खजाने से कुछ भी हासिल नहीं कर पा रही है। वह एक नये और भयानक बियाबान में जा रही है, जहाँ उसका इंसान के बजाय हैवान से सामना हो रहा है। वहाँ एक से बढ़कर एक इस्लामिक विद्वानों की नहीं बल्कि कार्बाइन, मशीनगनों और धमाकों की भाषा सुनी जा रही है। एक इटैलियन शोधकर्ता लौरेटा नेपोलियन ने मुसलमानों के जिहादी संगठनों के वित्तीय तंत्र का अध्ययन करके एक निष्कर्ष निकाला है। एक अनुमान के आश्चर्यजनक परिणाम के अनुसार मुस्लिम आतंकवाद की अर्थव्यवस्था डेढ़ लाख करोड़ डॉलर प्रतिवर्ष यानी ब्रिटेन के सकल घरेलू उत्पाद की दुगुनी है। इस अर्थव्यवस्था मे मदरसों, इस्लामी धर्मार्थ संगठनों, इस्लामी वित्तीय संस्थानों आदि का बहुत बड़ा योगदान है। यह आंकड़ा इस्लामी आतंकवाद के विस्तार और उसकी शक्ति का परिचय देने के लिए पर्याप्त है।

लंदन से अमेरिका जा रहे विमानों को विस्फोटकों से उड़ाने की साजिश का पर्दाफाश करके ब्रिटेन की पुलिस ने आतंकवाद के अंतर्राष्ट्रीय चेहरे को उजागर किया। ग्यारह सितंबर 2001 को न्यूयॉर्क में विश्व व्यापार केंद्र को विमानों से टक्कर मारकर ध्वस्त करने, पेंटागन पर आंशिक रूप से हमला करने में सफलता प्राप्त करने और पेंसिलवेनिया में विमान से हमला करने में विफल रहने की घटनाओं ने पश्चिमी दुनिया को आतंकवाद के असली और खूंखार

चेहरे से परिचित कराया ही था। इसके पहले जब भी यह चेहरा अमेरिका और अन्य पश्चिमी देशों के सामने आया, उन्होनें इसे पुराने दोस्त का चेहरा समझकर नजरअंदाज किया।

ग्यारह सितंबर के बाद भी उन्होनें केवल अपनी सुरक्षा और चौकसी बढ़ाने पर ही ध्यान दिया, इस कैंसर को जड़ से खत्म करने पर नहीं। भारत जैसै देशों के साथ उन्होनें मात्र शाब्दिक सहानुभूति प्रकट की। भारत में होने वाली आतंकवादी घटनाओं के स्रोत पर कभी ध्यान नहीं दिया। जब भी भारत ने पाकिस्तान की भूमिका की ओर इशारा किया, अमेरिका ने उसे पुख्ता सबूत देने को कहा। वह भी जब उसके युवा पत्रकार डैनियल पर्ल की पाकिस्तान में उमर शेख ने मध्ययुगीन ढंग से सिर कलम करके हत्या कर दी जिसने भारत में आतंकवादी गतिविधियाँ चलाई थी। 10 अगस्त, 2006 को ब्रिटेन मे पुलिस ने जिन 21 व्यक्तियों को पकड़ा वे सभी पाकिस्तानी मूल के थे। भारत की आर्थिक नगरी मुंबई की ट्रेनों में हुए श्रृंखलाबद्ध विस्फोटों के बारें में खुफिया एजेंसियों की यह राय रही है कि इन्हें अंजाम देने वाले भारतीय नागरिक हो सकते है, लेकिन उन्हें अपने इशारों पर नचाने वाले पाकिस्तानी आतंकवादी ही है। अधिक संभावना तो यही है कि इन्हें पाकिस्तानी सरकार का वरदहस्त प्राप्त है और पाकिस्तानी सरकार इन पर कोई अंकुश नहीं लगाना चाहती। लश्कर–ए–तैयबा के जनक हाफिज सईद का नाम उस सूची मे शामिल है, जो भारत ने पाकिस्तान को सौंपी हुई है और कहा हुआ है कि पाकिस्तान अपने यहाँ छिपे दाऊद इब्राहिम सहित सभी आतंकवादियों को भारत सरकार के हवाले करे। लेकिन पाकिस्तान सरकार ने हाफिज सईद की गतिविधियों पर अंकुश लगाने के लिये कुछ भी नहीं किया। वह अपनी आतंकवादी गतिविधियाँ निरंतर चला रहा है। उल्टे पाकिस्तान के विदेश मंत्री खुर्शीद महमूद ने कहा कि पाक अधिकृत कश्मीर में भूकंप के बाद उसके लश्कर–ए–तैयबा ने राहत कार्य चलाये है। भारत मे सबसे पहले मुस्लिम आतंकवाद का प्रवेश जम्मू कश्मीर में हुआ।

खासतौर पर जब वहाँ 1990 में उग्रवादी हमले तेज हुए। लेकिन अब भारत में यह केवल कश्मीर तक ही नहीं है बल्कि उससे आगे बढ़ गया है।[37]

मुस्लिम चरमपंथी पूरे विश्व में अपना साम्राज्य स्थापित करने का स्वप्न देख रहे है। वे अपने वैचारिक सार की दृष्टि से पुनरूत्थानवादी है और एक खलीफा के नेतृत्व में राष्ट्र–राज्यों की सीमाओं से रहित इस्लामी समुदाय (उम्मा) कायम करना चाहते है। उनका लक्ष्य इस्लाम की मौलिक, शुद्ध और प्राचीनतम अवधारणा को पुनः लागू करना और पिछले डेढ़ हजार वर्षो के दौरान उसमे आई गिरावट को दूर करना है। उन्होनें इसके लिए जो रास्ता चुना है, वह उनको कितना गर्त में ले जाएगा, यह पूरी दुनिया तो देख रही है लेकिन उनके उलेमा और राजनीतिज्ञ नहीं देख रहे है। कश्मीर में सक्रिय कट्टरपंथी महिला संगठन दुख्तराने–मिल्लत की प्रमुख आसिया अंदराबी ने कहा था कि दुनिया में केवल दो ही राष्ट्र है– इस्लाम और गैर इस्लाम। उसके संगठन का लक्ष्य पूरे विश्व में एक ही राष्ट्र इस्लामी राष्ट्र की स्थापना करना है। कुछ वर्ष पहले 'स्टूडेंट्स इस्लामिक मूवमेंट ऑफ इंडिया (सिमी) के अध्यक्ष ने भी यह कहकर सबको चौंका दिया था कि उनके संगठन का लक्ष्य पूरे भारत को इस्लामी देश बनाना है। मुस्लिम आतंकवाद की विचारधारा सऊदी अरब की प्रचारित वहाबी या सलाफी इस्लाम की विचारधारा मानी जाती है। सऊदी अरब के साथ घनिष्ठ संबंधों के कारण विभिन्न अमेरिकी प्रशासकों ने सीआईए और एफबीआई को आतंकवादी गुटों के साथ उसके संबंधों की जाँच करने से बार–बार रोका है। अंतर्राष्ट्रीय इस्लामी जिहाद को दी जा रही उसकी वित्तीय सहायता जगजाहिर हो चुकी है। भारत मे सिमी, ओसामा बिन लादेन को अपना आदर्श मुजाहिद मानती है। रियाद स्थित 'वर्ल्ड असेंबली ऑफ मुस्लिम यूथ' और कुवैत स्थित 'इंटरनेशनल इस्लामिक फेडरेशन ऑफ स्टूडेंट्स ऑर्गेनाइजेशन' के साथ उसके घनिष्ठ संबंध है। भारत के दक्षिण भारतीय नगरों में हिंसक वारदातें कराता रहा सिमी का सरगना सीएएम बशीर समुदाय को नफरत के सबक सिखाता है। बंगलूर में गिरफ्तार हुआ कंप्यूटर इंजीनियर आतंकवादी कामाकुट्टी

उन्हीं में से एक है जो लश्कर कमांडर मोहम्मद फैजल का गुर्गा रहा है, जिसने 2002–2003 के दौरान मुंबई में धमाके कराए थे। ज्यादातर विश्वस्तर पर इंटरनेट जिहादियों से संपर्क बनाए रहते है। जिनका काम नफरत–हिंसा फैलाने का बना रहता है। लेकिन धार्मिक आस्था के कारण वे नशे के आदी नहीं होते। वे अपने काम के लिए विदेशी समर्थकों से येन–केन–प्रकारेण रकम हासिल करते है। उन्हें अक्सर 15वीं सदी के जिहादी मालाबारी जैनुद्दीन की कृति 'तुहफत–अल–मुजाहिदीन' के सबक पढ़ाये जाते है, जो पुर्तगालियों का विरोध किया करता था। भारत में मुस्लिम आतंकवाद का खतरा कितना बढ़ चुका है, इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि अब आतंकवाद को भारत में स्थानीय समर्थन मिलने लग गया है।[38]

विश्व राजनीति का आतंकवाद पर प्रभाव

विश्व में आतंकवाद को समाप्त करने हेतु विश्व राजनीतिक तंत्र को प्रभावी कदम उठाने होंगे। इसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रमुख समस्या का दर्जा देते हुए दुनिया के राष्ट्रों को प्रयास सुनिश्चित करने होंगे। कुछ चयनित बिंदु निम्न है जिनके द्वारा विश्व राजनीति आतंकवाद को प्रभावित कर शनैः शनैः उसके वेग को समाप्त कर सकती है –

1. किसी भी राष्ट्र की शांतिपूर्ण नीतियों से आतंकवाद को झटका लगता है। विभिन्न राष्ट्रों के मध्य होने वाले शांति समझौतो के फलस्वरूप आतंकी स्वयं को हाशिये पर खड़ा महसूस करते है। अतः शांतिपूर्ण सम्मेलन, शांति समझौते आदि के कई उदाहरण है जिनसे आतंकवाद की चर्चित दशा में कमी महसूस की गई। जैसै– जून 2012 में शंघाई सहयोग संगठन के देशों ने शांति मिशन–2012 नामक आतंकवाद विरोधी संगठन बनाया, सितम्बर 2014 में दक्षेस के आठ सदस्य देशों ने आतंकवाद, मानव तस्करी, साइबर अपराध और भ्रष्टाचार की साझा चुनौतियों से मुकाबला करने का संकल्प लिया, मई 2015 में भारत के प्रधानमंत्री **नरेन्द्र मोदी ने दक्षिण कोरिया में कहा कि,** ''हमारे क्षैत्र के

लोगों को मिलकर आतंकवाद जैसी चुनौतियों से निपटना होगा।'' अप्रेल 2015 में नरेन्द्र मोदी एवं जर्मनी की चांसलर एंजेला मर्केल के मध्य आतंकवाद विरोधी समझौता हुआ। इस प्रकार शांतिपूर्ण नीतियों को प्रोत्साहन देकर आतंकवाद को प्रभावित किया जा सकता है।

2. विश्व राजनीति में राष्ट्रों की मजबूत आंतरिक स्थिति भी आतंकवाद को आवश्यक रूप से प्रभावित करती है। आतंकी गतिविधियाँ कमजोर राष्ट्रों के प्रति अधिक सफल होती देखी गई है। अतः राष्ट्रों को अपनी आंतरिक दृष्टि से आर्थिक एवं सामाजिक दृढ़ता बनाए रखने के प्रयास लाभदायक सिद्ध होते है।
3. विश्व में जो राष्ट्र आतंकवाद का दंश झेल रहे है, वे राष्ट्र अपनी सामरिक स्थिति के कारण किन्ही विकसित राष्ट्रों या विश्व के अन्य राष्ट्रों से जुड़े हो तब भी आतंकवाद को प्रभाव में आना ही पड़ेगा, उसकी एकतरफा जीत सुनिश्चित नहीं होगी।
4. आतंकवाद पर विश्व राजनीति का नकारात्मक प्रभाव भी देखा जा सकता है। परस्पर विरोधी राष्ट्रों के बीच आतंकवाद की स्थिति इसका परिणाम है। एक राष्ट्र एवं उसके समर्थक राष्ट्र अन्य राष्ट्र में आतंकवादी गतिविधियों को अपना समर्थन देते है। भारत के कश्मीर में आतंकवाद पर पाकिस्तानी राजनीति का ही प्रभाव है।
5. संयुक्त राष्ट्र संघ के माध्यम से भी विश्व राजनीति आतंकवादी गतिविधियों को नियंत्रित एवं प्रभावित कर सकती है। विश्व के राष्ट्रों के साझा प्रयासों से आतंकवाद विरोधी एजेण्डा लागू किया जा सकता है। अप्रेल 2015 में भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की कनाडा यात्रा के समय उन्होनें कहा, ''आतंकवाद मानवता का दुश्मन है, इससे लड़ने के लिये सभी को सजग रहना चाहिए।'' कनाडा की संसद पर आतंकी हमले के मुद्दे पर **स्टीफन हार्पर ने कहा कि,** ''यू.एन. की पहल से विश्व

को संदेश मिले कि वह आतंकवाद को रोकने को प्रतिबद्ध है। यू.एन. तय करे कि आतंकवाद क्या है ? कौन इसमें सहयोग कर रहा है ?''[39]

6. विश्व राजनीति में स्थिरता का प्रारंभ आतंकवाद के मार्ग में रूकावट है। परंतु इसका प्रारंभ राष्ट्रीय राजनीति में बहुमत के शासन से ही संभव है। किसी भी राष्ट्र की अल्पमत सरकार मजबूत फैसले नहीं ले सकती।
7. वर्तमान विश्व में आतंकवाद के सक्रिय विरोधी के रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका दिखाई देता है। 11 सितंबर 2001 को न्यूयॉर्क में विश्व व्यापार संगठन की इमारत पर आतंकी हमला दिल दहला देने वाली घटना थी। इसके परिणामस्वरूप अमरीका सक्रिय विरोधी के रूप में सामने आया। अलकायदा के आतंकी ठिकानों पर हमला, इराक में सद्दाम हुसैन शासन का अंत, ओसामा बिन लादेन का खात्मा और वर्तमान में आई.एस.आई. एस. को समाप्त करने का प्रण भी एक बार तो आतंकवाद के मार्ग में रूकावट का प्रभावपूर्ण उदाहरण है।

आतंकवाद का विश्व राजनीति पर प्रभाव

1. आतंकवाद का मुख्य उद्देश्य अपने हितों की पूर्ति करना होता है। इसके लिये वह हिंसक घटनाओं बम विस्फोट, अपहरण, मारकाट के माध्यम से अपना संदेश राजनीतिक तंत्र तक पहुँचाते है। इसके कई उदाहरण हमारे समक्ष है– कश्मीर का आतंकवाद, पाकिस्तान के कराची में सैनिक स्कूल पर हमला, सीरिया, इराक, लीबिया में आई.एस. का आतंक, अफगानिस्तान से प्रारंभ अलकायदा का आतंकी अभियान आदि।
2. आतंकी गतिविधियाँ विश्व राजनीति के विकास को अवरूद्ध कर अपना प्रभाव दिखाती है। इसके कारण कोई भी राष्ट्र अपने आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक विकास पर अधिक बल नहीं दे पाता है। उसके लिये आतंकवाद ही प्रमुख मुद्दा होता है। इस बात से आतंकवाद और ज्यादा प्रचारित होता है।

3. आतंकवाद सत्ता परिवर्तन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विश्व में कई राष्ट्र ऐसे है जहाँ कुछ आतंकवादी संगठनों का प्रभाव शासनतंत्र पर होता है। इन संगठनों के विरोध में जाने पर शासनतंत्र के लोगों को हत्या, अपहरण एवं आगजनी का शिकार होना पड़ता है। फलस्वरूप इन राष्ट्रों को अपनी नीतियों का निर्धारण आतंकवादी गुटों की इच्छानुसार करना होता है।
4. आतंकवाद प्रत्यक्ष सैनिक युद्ध न लड़कर कायरतापूर्ण छद्म युद्ध की रणनीति अपनाता है। जिससे शासनतंत्र का निरंतर ध्यान इसी बात को ध्यान में रखते हुए रणनीति बनाने में लगा रहता है।
5. वर्तमान विश्व में आतंकी संगठनों के पास भी नाभिकीय हथियार विद्यमान है। जिसके कारण विश्व के जनमानस में भय एवं चिन्ता पैदा होना स्वाभाविक है। यही बात विश्व के राष्ट्रों के लिये भी चिन्ता का विषय बनी हुई है। कहा जाता है कि इस्लामिक स्टेट नामक आतंकी संगठन के पास परमाणु बम है जो कि अत्यंत खूंखार आतंकी संगठन है।
6. आतंकवाद के कारण विश्व मानवता के सम्मुख उत्पन्न अन्य समस्याएँ जैसै– गरीबी, भूखमरी, लैंगिक असमानता, पारिस्थितिकी असंतुलन आदि गौण हो जाती है एवं स्थायी रूप से आतंकवाद ही प्रमुख समस्या बनी रहती है।

गाँधी दर्शन एवं आतंकवाद

क्या आतंकवाद की हिंसा का जवाब हिंसा से ही दिया जा सकता है ? या फिर इसका कोई और समाधान है ? इस तरह के कई सवाल आज व्यक्तिया के मस्तिष्क में जन्म ले रहे है। गाँधीवाद हिंसा की काट हिंसा को नहीं मानता तो, क्या है इस समस्या का समाधान ? इस बारे में क्या सोचते है, गाँधीवादी और सर्वोदय विचारधारा के लोग ?

गाँधी अध्ययन केंद्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर के निदेशक **डॉ. प्रकाश शास्त्री कहते है,** आखिर आतंकवाद जन्म क्यों लेता है ? इसके बारे

में गार्टून ने कहा कि, ''वर्तमान सामाजिक संरचना, अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था स्वयं हिंसा पर आधारित है, अर्थात् विषमता पर आधारित है। जब तक हिंसा पर आधारित व्यवस्था होगी तब तक अहिंसा की स्थापना नहीं हो पाएगी। वर्तमान युग की महती आवश्यकता समतामूलक विश्व व्यवस्था की स्थापना होनी चाहिए। भूमंडलीकरण की प्रक्रिया पूँजीवादी विश्व व्यवस्था को अपने वर्चस्व की स्थापना का एक बलात् प्रयास है। ज्यों–ज्यों विश्व मे भूमंडलीकरण तेज होता जाएगा, हिंसा भी बढ़ती जाएगी।''[40]

महात्मा गाँधी कहा करते थे, घृणा से घृणा एवं आग से आग तथा हिंसा से हिंसा बढ़ती है। तो फिर इसका समाधान क्या है ? आग के लिये पानी की आवश्यकता है। घृणा का जवाब प्रेम है और हिंसा का अहिंसा ही समाधान है। **गाँधीजी ने यंग इंडिया में लिखा है,** ''जो लोग अपने विरोधी पर विजय पाने या दुर्बल राष्ट्रों अथवा दुर्बल लोगों का शोषण करने के दुःसाहसिक प्रयास में नृशंसता के व्यवहार पर उतारू हो जाते है, वे न केवल स्वयं को बल्कि समूची मानवता को पतन के गर्त में ले जाते है।''[41]

अमरीका के नेतृत्व में उद्दंड पूँजीवाद संपूर्ण विश्व पर अपना वर्चस्व स्थापित करने में लगा हुआ है। दूसरी तरफ धार्मिक कट्टरतावाद कतिपय इस्लामिक देशों के नेतृत्व में बढ़ रहा है। इस स्थिति में धार्मिक विद्वेष बढ़ता गया तो, तेल आधारित जो देश है, वे एकजुट हो जायेंगे, इससे न केवल प्रत्येक देश एक–दूसरे से युद्ध करने लगेगा, अपितु विभिन्न देश आंतरिक गृहयुद्ध के शिकार हो जायेंगे। वास्तव में देखा जाये तो यह हितों की लड़ाई है, धर्म या किसी ओर से इसका कोई लेना–देना नहीं है। **राममनोहर लौहिया कहा करते थे,** ''जब तक दुनिया से गरीबी नहीं हटेगी, दुनिया में शांति की स्थापना नहीं हो सकती।''[42] दुनिया से साम्यवाद का जनाजा निकल चुका है, पूँजीवादी व्यवस्था इस समय चरमोत्कर्ष पर दिखाई देती है, लेकिन कुछ समय उपरांत धराशाही होने वाली है। अन्ततः ऐसी स्थिति में दुनिया के सामने गाँधीवाद का ही एकमात्र विकल्प शेष बचता है, जिसके आधार पर संपूर्ण विश्व में शांति,

सहकार और सदभाव् के आधार पर एक नई विश्व व्यवस्था का निर्माण संभव हो पाएगा। गाँधीजी मूलतः ऐसी व्यवस्था बनाना चाहते थे, जिसमें विषमता कम से कम हो और भाईचारा ज्यादा से ज्यादा फले–फूले।

*****

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. जैन डॉ. पुखराज, ''राजनीति विज्ञान के मूल आधार'', साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृष्ठ 109
2. शर्मा डॉ. प्रभुदत्त, ''अंतर्राष्ट्रीय राजनीति'', कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 1998, पृष्ठ 1
3. मॉर्गेन्थो हँस जे., ''पॉलिटिक्स अमंग नेशन्स'', पृष्ठ 27
4. रसेल बी., ''ए न्यू सोशल एनालिसिस'', 1934
5. शर्मा डॉ. प्रभुदत्त, ''अंतर्राष्ट्रीय राजनीति'', कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 1998, पृष्ठ 20
6. वही, पृष्ठ 23
7. खण्डेला मानचंद, ''समकालीन अंतर्राष्ट्रीय राजनीति'', अरिहंत पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2008, पृष्ठ 106
8. गौड़ वीरेन्द्र कुमार, ''विश्व में आतंकवाद'', सामयिक प्रकाशन, नईदिल्ली, 2004, पृष्ठ 34
9. बाथम मनोहर लाल, विश्वकर्मा शिवचरण, ''आतंकवाद चुनौती और संघर्ष'', मेघा बुक्स, दिल्ली, 2003, पृष्ठ 14
10. वही, पृष्ठ 15
11. वर्मा अशोक कुमार, ''प्रारंभिक आचार शास्त्र'', प्रथम संस्करण, पृष्ठ 301
12. आचार्य नंदकिशोर, ''अहिंसा विश्वकोश'', खण्ड 4, पृष्ठ 5
13. वही, पृष्ठ 18
14. निगम डॉ. शोभा, ''भारतीय दर्शन'', पृष्ठ 93
15. आचार्य श्री महाप्रज्ञ, ''अहिंसा–तत्व दर्शन''
16. सिन्हा प्रो. हरेन्द्र प्रसाद, ''भारतीय दर्शन की रूपरेखा''
17. निगम डॉ. शोभा, ''भारतीय दर्शन'', पृष्ठ 92
18. रस्तोगी जी. एन., वर्मा अवनीन्द्र कुमार, ''राजनीति शास्त्र'', पृष्ठ 332

19. चोरड़िया डॉ. चंचलमल, ''क्या मानव सेवा हेतु हिंसा को प्रोत्साहन उचित है?'', http://www.Drchordia.blogspot.com सितंबर 20, 2014 पृष्ठ 1
20. वही, पृष्ठ 2
21. आई.एस.एन.ए. टाइम्स, ''गाँधीजी की अहिंसा मानवता का महागीत'', अक्टूबर 1, 2012
22. लाल बसंत कुमार, ''समकालीन भारतीय दर्शन'', पृष्ठ 137
23. वर्मा वेद प्रकाश, ''नीतिशास्त्र के मूल सिद्धांत'', चतुर्थ संस्करण, पृष्ठ 365
24. हरिजन, दिसंबर 23, 1939
25. संपूर्ण गाँधी वाङमय, खण्ड 18, पृष्ठ 359
26. खानकाही निश्तर, अग्रवाल डॉ. गिरिराज शरण, ''आतंकवाद जिम्मेदार कौन'', मनोज पब्लिकेशन, दिल्ली, पृष्ठ 13
27. भारतीय नरेश, ''आतंकवाद'', साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, 2003, पृष्ठ 9
28. वही, पृष्ठ 10
29. वही
30. राजस्थान पत्रिका, कोटा संस्करण, अप्रेल 4, 2015, पृष्ठ 13
31. खानकाही निश्तर, अग्रवाल डॉ. गिरिराज शरण, ''आतंकवाद जिम्मेदार कौन'', मनोज पब्लिकेशन, दिल्ली, पृष्ठ 25
32. वही, पृष्ठ 26
33. राजस्थान पत्रिका, कोटा संस्करण, मार्च 9, 2015, पृष्ठ 15
34. वही, मई 21, 2015, पृष्ठ 13
35. खानकाही निश्तर, अग्रवाल डॉ. गिरिराज शरण, ''आतंकवाद जिम्मेदार कौन'', मनोज पब्लिकेशन, दिल्ली, पृष्ठ 27–28
36. राजस्थान पत्रिका, कोटा संस्करण, जुलाई 1, 2014, पृष्ठ 17
37. शक के घेरे में खड़ा मुसलमान, swatantraawaz.com.

38. मुगनी डॉ. अब्दुल, ''आतंकवाद और इस्लाम''(लेख), blog इस्लाम सबके लिए
39. राजस्थान पत्रिका, कोटा संस्करण, अप्रेल 16, 2015, पृष्ठ 13
40. रत्तू डॉ. कृष्ण कुमार, ''गाँधी दर्शन'', बुक एनक्लेव, जयपुर, 2002, पृष्ठ 230
41. यंग इंडिया, अक्टूबर 29, 1931, पृष्ठ 325
42. रत्तू डॉ. कृष्ण कुमार, ''गाँधी दर्शन'', बुक एनक्लेव, जयपुर, 2002, पृष्ठ 230

*****

.

तृतीय अध्याय

विश्व राजनीति
एवं
गाँधी दर्शन

तृतीय अध्याय

विश्व राजनीति एवं गाँधी दर्शन

''वर्तमान विश्व अराजकता के दौर में मानव की चिर प्रतिक्षित आकांक्षा है– शांति, जो उसके अस्तित्व, विकास और प्रगति के लिये भी आवश्यक है। जिस प्रकार युद्ध मानव मस्तिष्क से जन्म लेते है, शांति भी मानव मस्तिष्क से ही जन्म लेगी।'' यूनेस्को की घोषणा से स्पष्ट है कि, हिंसा के प्रति प्रतिबद्धता, घनी मारकाट, आणविक सर्वनाश, मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का भारी अपव्यय, विषमतावादी अर्थव्यवस्था, मानवाधिकारों का उलंघन, हिंसक प्रतिशोध, हिंसा प्रधान विज्ञान व प्रौद्योगिकी विप्लव, गृह–युद्ध, युद्ध, उपनिवेशवादी परंपराओं को तो जन्म दे सकती है, परंतु शांति को नहीं।

गाँधीजी के अनुसार वर्तमान विश्व अनीति एवं अधर्म पर आधारित है, इसलिये सर्वग्रासी है। यह विश्व शक्तिवाद, उद्योगवाद, उपभोगवाद एवं बाजारवाद की अवधारणाओं पर केन्द्रित है इसलिये त्याज्य है। गाँधीजी ने वर्तमान विश्व की चार प्रमुख समस्याओं को चिंताजनक माना– हथियारों एवं हिंसा की समस्या, पर्यावरण, निर्धनता एवं मानव अधिकारों की समस्या। ये समस्याएँ वर्तमान विश्व की देन है। अतएव गाँधीजी ने वर्तमान विश्व की आलोचना की तथा विकल्प के रूप में नई मानव सभ्यता का प्रारूप प्रस्तुत किया जो सादगी, संयम, अपरिग्रह एवं स्वावलंबन की जीवन शैली के साथ अहिंसात्मक एवं शुद्ध साधनों तथा प्रकृति के साथ मैत्री एवं साहचर्य पर आधारित पद्धति का पक्षधर है।

गाँधीजी एवं विश्व राजनीति : विश्वबन्धुत्व का दर्शन

जिस अर्थ में राजनीति शब्द का प्रयोग साधारणतः किया जाता है, उससे गाँधीजी को वस्तुतः कोई प्रयोजन नहीं था। गाँधीजी मूलतः धार्मिक व्यक्ति थे और उन्होनें राजनीति के क्षैत्र में जो कुछ किया वह भी धार्मिक भावना के अंतर्गत ही किया। भारतीय परंपरा के संत होने के नाते वे मनुष्य जाति की सेवा

को ही भगवान की सच्ची सेवा समझते थे। मनुष्य जाति की सेवा करने के लिये ही वे राजनीति में आये। उन्होनें हरिजन में लिखा था, ''मेरे देशवासी मेरे सबसे निकट के पड़ौसी है। वे इतने असहाय, निरूपाय व निर्जीव हो गये है कि मुझे उनकी सेवा में लग जाना आवश्यक है। यदि मैं समझता कि भगवान मुझे हिमालय की कंदरा में मिलेंगे, तो मैं तुरंत वहाँ चला जाता पर मैं मानता हूँ कि मानव समूह से पृथक मैं उन्हें नहीं पा सकता।'' इससे स्पष्ट है कि गाँधीजी ने मानव जाति की सेवा ईश्वर की प्राप्ति के एक साधन के रूप में ग्रहण की और उन्होनें राजनीति में भाग इसलिये लिया कि राजनीति के माध्यम से जनसेवा करके वे ईश्वर की प्राप्ति कर सके। उनकी जनसेवा का विस्तृत रूप विश्व पटल पर विश्व बंधुत्व के रूप में प्रस्फुटित हुआ। गाँधीजी की राजनीति वस्तुतः उनकी ईश्वर प्राप्ति की साधना का अंग मात्र थी। ईश्वर की प्राप्ति की साधना का अंग मात्र होने के कारण उनकी राजनीति वह राजनीति नहीं थी, जिसे साधारणतः राजनीति कहा जाता है। उनकी राजनीति छलकपटपूर्ण राजनीति न होकर धर्म पर आधारित राजनीति थी।[1]

चूँकि राजनीति की दिशा राज्य के कार्यो एवं उसकी स्थिति पर निर्भर करती है, अतः गाँधीजी ने अपने राज्य संबंधी विचार दिये। जिसमें उन्होनें राज्य की मूल प्रकृति एवं उसके स्वरूप की चर्चा की एवं आवश्यक दिशानिर्देश प्रदान किये।

गाँधीजी के राज्य संबंधी विचार मूलतः अराजकतावादी थे। उनका मत था कि राज्य व राजकीय शक्ति की आवश्यकता इसलिये पड़ती है कि मनुष्य अपूर्ण है। यदि मानव जीवन इतना पूर्ण हो जाये कि वह स्वयं संचालित हो सके, तो फिर राज्य व राजकीय शक्ति की समाज को आवश्यकता ही न रहे। गाँधीजी के मतानुसार वह समाज, जिसमें राज्य व राजनीतिक शक्ति का अभाव होगा और व्यक्तियों के पारस्परिक संबंध सत्य व अहिंसा पर आधारित होंगे, आदर्श समाज होगी। क्योंकि ऐसी ही सामाजिक स्थिति में मनुष्य वास्तविक रूप से स्वतंत्र होगा।

गाँधीजी के अनुसार अपने वर्तमान रूप में राज्य केन्द्रीकृत व संगठित हिंसा का प्रतीक है। जितनी अधिक शक्ति उसके हाथ में रहती है, वह व्यक्ति के स्वाभाविक विकास में उतना ही बाधक सिद्ध होता है। अतः यदि व्यक्ति को अपने स्वाभाविक विकास का अवसर प्रदान करके जीवन के चरम् उद्देश्य की प्राप्ति करानी है तो यह आवश्यक है कि सामाजिक व्यवस्था प्रधानतः सत्य व अहिंसा पर आधारित हो तथा राजकीय–शक्ति का प्रयोग न्यूनतम हो।[2]

गाँधीजी के राज्य संबंधी विचारों को, इस प्रकार आदर्श में अराजकतावादी तथा व्यवहार में व्यक्तिवादी कहा जा सकता है, परन्तु उनका व्यक्तिवाद वह पाश्चात्य व्यक्तिवाद नहीं है, जिसका परिणाम पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की स्थापना होती है। राज्य के हस्तक्षेप के आधार पर उनका ध्येय व्यक्तिगत स्वेच्छाचारिता का समर्थन करना नहीं है, वरन् उनका मत है कि व्यक्ति स्वयं अपना जीवन इस प्रकार व्यतीत करे कि सामाजिक दोष उत्पन्न न होने पाये, जिनके लिये पाश्चात्य व्यक्तिवाद बदनाम है।

गाँधीवादी राजनीति का धार्मिक आधार

गाँधीजी की राजनीति धार्मिक हठधर्मी एवं कट्टरपन का समावेश नहीं थी। इसका अर्थ यह नहीं था कि धर्म का राजनीतिक शोषण किया जाये। वे सामाजिक संरचना की ऐसी धार्मिक सफाई चाहते थे जिसके परिणामस्वरूप वे सभी भ्रांतियाँ और रिवाज समाप्त किये जा सके, जिन्होनें सच्चे धर्म के स्थान पर अधिकार किया हुआ है। इस प्रकार का पवित्र धर्म पहले मनुष्य का मनुष्य से तथा फिर मनुष्य का ईश्वर से संबंध जोड़ता है। उन्होनें कहा था, ''मैं ईश्वर का साक्षात्कार मानवता की सेवा के माध्यम से करने में प्रयत्नशील हूँ। मैं जानता हूँ कि ईश्वर न तो स्वर्ग में है न नीचे पाताल में। वह तो सभी में विद्यमान है।''[3]

सेंट आगस्टाइन की भाँति वह भी न्याय पर आधारित एक राष्ट्रमंडल चाहते थे और राजनीति को मैकियावली द्वारा की गई व्याख्या से मुक्त करना चाहते थे। उनके अनुसार धर्म सभी कार्यवाहियों को एक नैतिक आधार प्रदान

करता है। जिसके बिना जीवन केवल मात्र शोर शराबा नहीं रह जाता है। इस प्रकार सिसरो, प्लेटो तथा काण्ट की भाँति गाँधीजी राजनीतिक जीवन में नैतिकता को प्राथमिकता देते है।[4] गाँधीजी विश्व राजनीति का आधार आध्यात्मिकता, नैतिकता एवं मानवसेवा को बनाना चाहते थे। जिनके माध्यम से विश्वकल्याण, विश्वबंधुत्व एवं वसुधैवकुटुम्बकम् की जनभावना विकसित की जा सके।

गाँधीजी व सत्य

सत्य क्या है? इसके उत्तर मे गाँधीजी ने कहा था, ''यह एक बड़ा कठिन प्रश्न है, पर स्वयं अपने लिये मैंने इसे हल कर लिया है। तुम्हारी अन्तर्रात्मा जो कहती है, वही सत्य है।'' परंतु सत्य को ग्रहण कर उसे व्यक्त करने के लिये अंतर्रात्मा शुद्ध होनी चाहिए। क्योंकि शुद्ध अन्तर्रात्मा की वाणी ही सत्य हो सकती है। अंतर्रात्मा कैसे शुद्ध हो सकती है? इस विषय में गाँधीजी का मत है कि, ''जिस प्रकार वैज्ञानिक प्रयोग के लिये कुछ साधनों एवं उपकरणों की आवश्यकता होती है। उसी प्रकार सत्य के प्रयोग के अनुकूल शुद्ध अंतर्रात्मा निर्माण के लिये सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय और अपरिग्रह के साधनों की आवश्यकता होती है।[5] इन साधनों पर चलने से अंतर्रात्मा उत्तरोत्तर शुद्ध होकर सत्य को ग्रहण करने वाली बन जाती है।

वर्तमान समय में प्रत्येक मनुष्य किसी तरह की कोई साधना किए बगैर अन्तःकरण के अधिकार का दावा कर रहा है, और हैरान दुनिया को जाने कितना असत्य थमाया जा रहा है। गाँधीजी ने कहा, ''मैं सच्ची विनम्रता से तुमसे कहना चाहता हूँ कि जिस व्यक्ति में विनम्रता कूट–कूटकर न भरी हो उसे सत्य नहीं मिल सकता। यदि तुम्हें सत्य के सागर में तैरना है तो तुम्हें अपनी हस्ती को पूरी तरह मिटा देना होगा।[6]

गाँधी दर्शन का केन्द्रीय तत्व सत्य है। उन्होनें सत्य के सैद्धांतिक, व्यावहारिक एवं निरपेक्ष स्वरूपों की व्याख्या प्रस्तुत की। सत्य का अपना लक्ष्य

भी होता है जो कि मनुष्य को अहंकार व दुराग्रहों से मुक्त करता है। सत्य का विवरण निम्न है–

- **निरपेक्ष सत्य**

  निरपेक्ष सत्य से अभिप्राय वास्तविकता से है। सत्ता व ब्रह्म से है। इसके अतिरिक्त सभी नश्वर है। जो नश्वर है वह कभी वास्तविक सत्य नहीं हो सकता। गाँधीजी ने ईश्वर को ही निरपेक्ष सत्य माना। ''ईश्वर ही सत्य है'' कि धारणा को बदलकर सत्य को प्राथमिकता देते हुए गाँधीजी ने कहा था कि, ''सत्य ही ईश्वर है।'' उन्होनें ईश्वर के असंख्य नामों में से केवल सत्य का ही चयन किया। सत्य से ही अन्य तत्वों की उत्पत्ति हुई है।[7]

- **सापेक्ष सत्य**

  सापेक्ष सत्य दैनिक जीवन में सदैव देखने को मिल जाता है। सापेक्ष सत्य के माध्यम से ही निरपेक्ष सत्य को प्राप्त किया जा सकता है। सापेक्ष सत्य अंतर्रात्मा की आवाज है। यह सत्य व निर्मल हृदय से सोची हुई बात हो सकती है। सापेक्ष सत्य का अनुसरण बहुत ही कठिन है। यह सामान्य व्यक्ति का कार्य नहीं है। सापेक्ष सत्य पर चलने की तकनीकें है– पवित्रता, दृढ़ निश्चय व साहस। गाँधीजी का मत था कि, ''सापेक्ष सत्य मानव जीवन में प्रेम के आदर्श को अपनाकर प्राप्त किया जा सकता है। प्रेम का अर्थ है कि व्यक्ति अहंकार से मुक्त हो जाता है। तथा वह स्वयं को शून्य समझने लगता है। केवल सत्य बोलना ही सत्य नहीं है। वरन् मन, वचन व कर्म से व्यक्ति को सत्य का अनुसरण करना चाहिए।[8]

- **अहंकार से मुक्ति**

  जो व्यक्ति सत्यमार्गी है वह स्वार्थी, लोभ, भय व अहंकार से मुक्त होता है। वह सापेक्ष सत्य का अनुसरण ही इस कारण करता है कि उसका ईश्वर में विश्वास है। उसमें हीन भावना का अंत हो जाता है। वह स्वयं को हीन नहीं समझता और न ही किसी को हीन मानता है।

- **दुराग्रहों से मुक्ति**

गाँधीजी का मत है कि जो व्यक्ति सत्य का अनुगामी है वह दुराग्रहों एवं पूर्वाग्रहों से मुक्त हो जाता है। सत्यवादी व्यक्ति सदैव विनम्र होता है। वह सदैव स्वयं को अल्पविराम ही समझता है। सत्य बोलते समय उसमें विनम्रता व निश्छलता का भाव होना चाहिए।

- **सत्य का दर्शन**

सत्य की सार्वभौम एवं सर्वव्यापी भावना के प्रत्यक्ष दर्शन वही कर सकता है जो क्षुद्रतम प्राणी से भी उतना ही प्रेम कर सके जितना कि स्वयं को करता है।[9] **गाँधीजी ने लिखा है,** ''सतत् अनुभव ने मेरा यह विश्वास दृढ़ कर दिया है कि ईश्वर सत्य के अलावा और कुछ नहीं है। सत्य की जो क्षणिक झलकियाँ मैं पा सका हूँ, उनसे सत्य के अवर्णनीय तेज का वर्णन करना संभव नहीं है, सत्य का तेज नित्य दिखाई देने वाले सूर्य के प्रकाश से लाखों गुना प्रखर है।[10]

सत्य प्रत्येक मनुष्य के हृदय में वास करता है, और मनुष्य को उसे वही खोजना चाहिए। सत्य जिसे जैसा दिखाई दे, वह उसी से निर्देशित हो। लेकिन किसी को यह अधिकार नहीं है कि वह सत्य का जिस रूप में दर्शन करता है, उसके अनुसार चलने के लिये दूसरे लोगों पर दबाव डाले।[11]

- **सेवा के द्वारा ईश्वर प्राप्ति**

गाँधीजी ने सत्य को ही ईश्वर माना है। उन्होनें कहा, यदि मुझे विश्व के सबसे हीन व्यक्तियों के दुख के साथ अपना तादात्म्य करना है तो मुझे अपनी देखरेख में रहने वाले साधारण व्यक्तियों के पापों के साथ तादात्म्य करना चाहिए और मुझे आशा है कि पूर्ण विनम्रता के साथ ऐसा करते–करते मैं किसी दिन सत्य रूपी ईश्वर का साक्षात्कार कर ही लूँगा।[12]

- **पथ प्रदर्शक एवं संरक्षक**

  सत्य प्राणीमात्र का पथ प्रदर्शक है। सत्य या ईश्वर के समक्ष प्राणीमात्र को पूर्ण समर्पण भाव से उपस्थित होना होगा। तब ईश्वर प्राणी को पूरी दुनिया का सामना करने की शक्ति देगा और सभी खतरों से मानव मात्र की रक्षा करेगा। गाँधीजी ने स्पष्ट किया, ''मैं कभी निराश नहीं हुआ, तब तुम क्यों निराश होते हो? हम प्रार्थना करे कि यह हमारे हृदयों से क्षुद्रता, नीचता और छल को समाप्त करके उन्हें निर्मल कर दे, वह हमारी प्रार्थना अवश्य सुनेगा।[13] मैंने देखा है, और मेरा विश्वास है कि, ईश्वर शरीर नहीं बल्कि कार्यरूप में प्रकट होता है और इसी से आपको घोर विपत्तियों से छुटकारा मिलता है।[14]

- **सत्य में सौन्दर्य**

  वस्तुओं के दो रूप होते है– बाह्य एवं आंतरिक। कोई भी सच्ची कला आत्मा की आंतरिक अभिव्यक्ति होती है। गाँधीजी ने कहा है, सत्य के सभी रूप केवल सच्चे विचार ही नहीं बल्कि सच्ची तस्वीरें या गीत भी अत्यंत सुंदर होते है। लोग प्रायः सत्य में सौंदर्य के दर्शन नहीं कर पाते, आम आदमी उससे दूर भागता है और सौंदर्य के दर्शन की क्षमता ही खो बैठता है। जब लोग सत्य में सौंदर्य के दर्शन करने लगेंगे तब सच्ची कला का उदय होगा।[15] सत्य की सुन्दरता और उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए **गाँधीजी ने हरिजन में लिखा है**– ''तुम सब्जियों के रंग में सुंदरता क्यों नहीं देख पाते? और आकाश भी तो सुंदर है। लेकिन नहीं तुम तो इंद्रधनुष के रंगों से आकर्षित होते हो, जो केवल एक दृष्टिभ्रम है। हमें यह मानने कि शिक्षा दी गई है कि जो सुंदर है उसका उपयोगी होना आवश्यक नहीं है। और जो उपयोगी है वह सुंदर नहीं हो सकता। मैं यह दिखाना चाहता हूँ कि जो उपयोगी है, वह सुंदर भी हो सकता है।''[16]

- **सत्य का मार्ग : अहिंसा**

गाँधीजी के अनुसार, अहिंसा के प्रति मेरा प्रेम सभी लौकिक अथवा अलौकिक वस्तुओं से बढ़कर है। इसकी बराबरी केवल सत्य के प्रति मेरे प्रेम के साथ की जा सकती है, जो मेरी दृष्टि में अहिंसा का समानार्थक है, केवल अहिंसा के माध्यम से ही मै सत्य को देख और उस तक पहुंच सकता हूँ।[17] गाँधीजी का दृढ़ विश्वास था कि अहिंसा के बिना सत्य का शोध और उसकी प्राप्ति असंभव है। ये दोनों एक सिक्के के दो पहलू है। कौन बता सकता है? सीधा पहलू कौनसा है एवं उल्टा पहलू कौनसा? फिर भी अहिंसा साधन है एवं सत्य साध्य, क्योंकि साधन वही है जो हमारी पहुँच के भीतर हो।[18] हमारी जनता को अहिंसा की शिक्षा देना आवश्यक है। तदुपरांत सत्य की शिक्षा उसके स्वाभाविक परिणाम के रूप में आएगी।[19]

साधन एवं साध्य की दूरी तभी तक है जब तक हम मार्ग में है। क्रमशः यह दूरी कम होती जाती है और गंतव्य स्थान की प्राप्ति होते ही दोनों एक रूप हो जाते है। अहिंसा और सत्य अभिन्न है। एक का ध्यान करो तो दूसरा पहले आता है। सत्य से परे और कोई ईश्वर नहीं है। सत्य से सर्वप्रथम खोजने की वस्तु अहिंसा ही है।[20] गाँधीजी का दृढ़ अभिमत रहा कि सत्य, अहिंसा हमारे प्रत्येक शब्द, व्यापार और कर्म से प्रकट होने चाहिए। ये दोनों जड़ बुद्धि वालों के लिये नहीं है। इनकी शोध या अनुकरण करने से हमारी आत्मा, बुद्धि एवं शरीर की उन्नति होनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो या तो सत्य, अहिंसा मिथ्या है या फिर हम मिथ्या है। चूँकि सत्य व अहिंसा का मिथ्या होना असंभव है, इसलिये हम ही मिथ्या ठहरते है।[21]

सत्य, अहिंसा का मूल तत्व है। सत्य एक ऐसा प्रभुसत्तात्मक सिद्धांत है, जिसमें कई अन्य सिद्धांत सम्मिलित है। यह सत्य मात्र शब्दों की ही सत्यता नहीं है, किंतु विचारों की भी और इसके अतिरिक्त वह न केवल हमारे

परिज्ञान की अपेक्षा में सत्य हो, वरन् संपूर्ण सत्य जो कि ईश्वर है।[22] **हॉरेस ने ठीक ही कहा है,** ''सत्य तथा अहिंसा ये दो शब्द गाँधीवाद के ध्वज पर उज्ज्वल रूपेण अंकित प्रेरणात्मक शब्द है। स्वयं गाँधीजी की सार्वजनिक जीवनावधि में यह उनके लिये प्रेरणात्मक रहे।[23]

गाँधीजी एवं सत्याग्रह

सत्याग्रह का विचार और उसका व्यवहार गाँधीवाद की आत्मा है तथा वास्तव में उनका अद्भुत योग भी है। इसका अर्थ है, 'आग्रह', सत्य के लिये नैतिक दबाव डालना। यह संसार में जो कुछ भी बुरा, अन्यायपूर्ण, अपवित्र तथा असत्य है, उसका प्रतिरोध प्रेम, आत्म–यंत्रणा, आत्म–शुद्धता तथा विरोधी की आत्मा में स्थित दिव्यता पर सीधा प्रभाव डालते हुए करने की तकनीक है।[24] सत्याग्रह का शाब्दिक अर्थ सत्य के लिये आग्रह करना होता है। सत्याग्रह, उन्नीसवी शताब्दी के अंतिम दशक में गाँधीजी के दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों के अधिकारों की रक्षा के लिये कानून भंग शुरू करने तक संसार 'निःशस्त्र प्रतिकार' अथवा निष्क्रिय प्रतिरोध की युद्धनीति से ही परिचित था। यदि प्रतिपक्ष की शक्ति हमसे अधिक है तो सशस्त्र विरोध का कोई अर्थ नहीं रह जाता। सबल प्रतिपक्षी से बचने के लिये निःशस्त्र प्रतिकार की युद्धनीति का अवलंबन किया जाता था। प्रतिकार में प्रतिपक्षी पर शस्त्र से आक्रमण करने की बात छोड़कर उसे दूसरे हर प्रकार से तंग करना, छल–कपट से उसे हानि पहुँचाना अथवा उसके शत्रु से संधि करके उसे नीचा दिखाना आदि उचित समझा जाता था।

गाँधीजी को इस प्रकार की दुर्नीति पसंद नहीं थी। दक्षिण अफ्रीका में उनके आंदोलन की कार्यपद्धति बिल्कुल भिन्न थी, उनका संपूर्ण दर्शन ही भिन्न था। अतः अपनी युद्धनीति के लिये उनकों नये शब्द की आवश्यकता महसूस हुई। सही शब्द प्राप्त करने के लिये उन्होनें एक प्रतियोगिता की जिसमें स्वर्गीय मगनलाल गाँधी ने एक शब्द सुझाया, 'सदाग्रह'। जिसमें थोड़ा परिवर्तन करके गाँधीजी ने 'सत्याग्रह' शब्द स्वीकार किया। अमरीकी दार्शनिक थोरों ने जिस

सविनय अवज्ञा की तकनीक का वर्णन किया है, ''सत्याग्रह'' शब्द उस प्रक्रिया से मिलता–जुलता है।

सत्याग्रह का मूल अर्थ है सत्य के प्रति आग्रह अर्थात् सत्य से जुड़े रहना। अन्याय का सर्वथा विरोध करते हुए अन्यायी के प्रति वैरभाव न रखना, सत्याग्रह का मूल लक्षण है। हमें सत्य का पालन करते हुए निर्भयतापूर्वक मृत्यु का वरण करना चाहिए और मरते–मरते भी जिसके विरूद्ध सत्याग्रह कर रहे है, उसके प्रति वैरभाव या क्रोध नहीं करना चाहिए।

सत्याग्रह में अपने विरोधी के प्रति हिंसा के लिये कोई स्थान नहीं है इसमें शालीनता है, यह कभी चोट नहीं पहुँचाता। यह धैर्य एवं सहानुभूति से विरोधी को उसकी गलती से मुक्त करता है। यहां धैर्य का तात्पर्य कष्ट सहन से है। इसलिये इस सिद्धांत का अर्थ हो गया, विरोधी को कष्ट एवं पीड़ा देकर नहीं, बल्कि स्वयं कष्ट उठाकर सत्य का रक्षण।[25]

महात्मा गाँधी ने कहा था कि सत्याग्रह में एक पद 'प्रेम' अध्याहत है। सत्याग्रह मध्यम पद लोपी समास है। सत्याग्रह यानि सत्य के लिये प्रेम द्वारा आग्रह (सत्य + प्रेम + आग्रह = सत्याग्रह)। सत्याग्रह आत्म यंत्रणा तथा प्रेम के द्वारा सत्य का पक्ष–पोषण करना है। यह जबरदस्ती के विरूद्ध है तथा यह सबसे अधिक शक्तिशाली और वीर का हथियार है।[26]

सत्याग्रह एक प्रतिकार पद्धति ही नहीं है, एक विशिष्ट जीवन पद्धति भी है, जिसके मूल में अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह, अस्तेय, निर्भयता, ब्रह्मचर्य, सर्वधर्म समभाव आदि व्रत है। जिनका व्यक्तिगत जीवन इन व्रतों के कारण शुद्ध नहीं है, वह सच्चा सत्याग्रही नहीं हो सकता। इसलिये विनोबा इन व्रतों को 'सत्याग्रह निष्ठा' कहते है।

सत्याग्रह और निःशस्त्र प्रतिकार में उतना ही अंतर है, जितना उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव में है। निःशस्त्र प्रतिकार की कल्पना एक निर्बल के अस्त्र के रूप में की गई है, और उसमें अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिये हिंसा का उपयोग वर्जित नहीं है, जबकि सत्याग्रह की कल्पना परम् शूर के अस्त्र के रूप

में की गई है और इसमें किसी भी रूप में हिंसा के प्रयोग के लिये स्थान नहीं है। इस प्रकार सत्याग्रह निष्क्रिय स्थिति नहीं है। वह प्रबल सक्रियता की स्थिति है। सत्याग्रह अहिंसक प्रतिकार है, परंतु वह निष्क्रिय नहीं है।

अन्यायी और अन्याय के प्रतिकार का प्रश्न सनातन है। अपनी सभ्यता के विकास क्रम में मनुष्य ने प्रतिकार के लिये प्रमुखतः चार पद्धतियों का अवलंबन किया है–

1. पहली पद्धति है बुराई के बदले अधिक बुराई। इस पद्धति से दण्डनीति का जन्म हुआ। जब इससे समाज और राष्ट्र की समस्याओं के निराकरण का प्रयास हुआ तो युद्ध की संस्था का विकास हुआ।
2. दूसरी पद्धति है बुराई के बदले समान बुराई अर्थात् अपराध का उचित दण्ड दिया जाये, अधिक नहीं। यह अमर्यादित प्रतिकार को सीमित करने का प्रयास है।
3. तीसरी पद्धति है, बुराई के बदले भलाई। यह बुद्ध, ईसा, गाँधी आदि संतो का मार्ग है। इसमें हिंसा के बदले अहिंसा का तत्व अन्तर्निहित है।
4. चौथी पद्धति है, बुराई की उपेक्षा।

आचार्य विनोबा भावे कहते है– ''बुराई का प्रतिकार मत करो बल्कि विरोधी की समुचित चिंतन में सहायता करो। उसके सद्विचार में सहायता करो। विरोधी के सम्यक् चिंतन में मदद देना ही सत्याग्रह का सही स्वरूप है।

गाँधीजी का सत्याग्रह का सिद्धांत 'कष्ट–सहन' की भावना पर आधारित है तथा उनके अनुसार इससे तीन उद्देश्यों की प्राप्ति होती है–

1. यह कष्ट–सहन करने वाले को शुद्ध करता है।
2. यह समर्थनात्मक जनमत को बदल देता है।
3. यह सीधे अत्याचारी के हृदय पर प्रभाव डालता है।

गाँधीजी के अनुसार कोई भी देश बिना आत्म–पीड़न की अग्नि में पवित्र हुए बिना उठ नहीं सका। गाँधीजी इसीलिये शांतिपूर्ण प्रतिरोध के स्थान पर सत्याग्रह शब्द पसंद करते है।[27] **जेवन्त रे के अनुसार,** ''सत्याग्रह दुर्दम्य है,

क्योंकि यह स्वावलंबी है। एक सत्याग्रही विरोधी की सहमति के बिना भी कार्य कर सकता है। सत्याग्रह की शक्ति का अनुमान भी उसके द्वारा वश में किए जाने वाले प्रतिरोध की मात्रा से ही मूल्यांकित कर लगाया जाता है।[28]

सत्याग्रह के रूप

(अ) असहयोगः– गाँधीजी का विचार था कि एक सरकार उस समय तक ही अत्याचार को जारी रख सकती है, जब तक कि जनता उसे सहयोग दे। जनता का असहयोग सरकार को पंगु एवं गतिहीन बना देगा। असहयोग इन रूपों में व्यवहार में लाया जा सकता है– हड़ताल, सामाजिक बहिष्कार, तथा पिकेटिंग। यथापि यह एक वैध तकनीक प्रतीत होती है, तथापि सार्वजनिक पैमाने पर व्यवहार के लिये यह एक सशक्त तकनीक सिद्ध नहीं होती।

1. हड़ताल का अर्थ विरोधस्वरूप कामकाज छोड़ देना है। इसका मुख्य उद्देश्य जनता तथा सरकार को जगाना होता है। हड़ताल स्वैच्छिक एवं अहिंसक हो सकती है परंतु इसका व्यवहार बहुधा नहीं हो पाता।
2. सामाजिक निष्कासन का अर्थ है उन लोगों का बहिष्कार जो जनमत की अवज्ञा करते है। किन्तु सामाजिक निष्कासन का प्रयोग एक अत्यंत सीमित रूप में ही हो सकता है।
3. पिकेटिंग का अर्थ किसी ऐसे व्यक्ति का रास्ता रोकना नहीं है जो कोई विशेष काम करना चाहता है। पिकेटिंग ऐसी हो कि उसके द्वारा कोई बल प्रयोग और धमकाने का काम नहीं होना चाहिए। इसमें पुतलों का जलाना एवं दफनाना आदि निषिद्ध है।

(आ) नागरिक अवज्ञाः– गाँधीजी ने सविनय अवज्ञा को राजनीतिक सिद्धांत की एक मान्य विधा का दर्जा देने एवं इस तकनीक को प्राप्त कराने में महत्वपूर्ण योग दिया।[29] यह उन कानूनी नियमों का उल्लंघन है जो अनैतिक हो। यह सशस्त्र क्रांति का एक पूर्ण, प्रभावशाली तथा रक्तहीन विकल्प है।

1. नागरिक आक्रामक अवज्ञा में राजस्व की आय से संबंधित कानूनों और राज्य की सुविधा के लिये बनाये गये व्यक्तिगत आचरण संबंधी विनियमों की उपेक्षा होती है।
2. नागरिक रक्षात्मक अवज्ञा में स्वयंसेवकों का एक दल संगठित किया जाता है, शांतिपूर्ण उपाय किये जाते है, सार्वजनिक सभाएँ होती है, इस प्रकार के लेख प्रकाशित होते है जो हिंसा के लिये नहीं उकसाते।

(इ) उपवासः– यह सत्याग्रह का अंतिम रूप है। यह सर्वाधिक शक्तिशाली तीक्ष्ण शस्त्र है। यही कारण है कि गाँधीजी इसके प्रयोग में अत्यधिक सावधानी बरतने का परामर्श देते है। उपवास सभी अवसरों के लिये नहीं, वरन् अत्यधिक असामान्य अवसरों के लिये था। उपवास इस पूर्व कल्पना पर रखा जाता था कि उपवासकर्ता आध्यात्मिक दृष्टि से योग्य है, पवित्र मन वाला है तथा उसमें अनुशासन, नम्रता एवं विश्वास है। गाँधीजी की सम्मति में उपवास तभी रखे जाने चाहिए, जब अन्य सभी उपाय परखे जा चुके हो और प्रभावहीन सिद्ध हो चुके हो।

(ई) हिजरतः– इसका अर्थ अपने निवास स्थान से स्वेच्छा से निर्वासित हो जाना है। जो व्यक्ति उत्पीड़ित अनुभव करते है और अपने स्थान पर बिना जीवन को खतरे में डाले नहीं रह सकते, वह किसी विशेष स्थान पर चले जाते है। गाँधीजी के शब्दों में, ''अत्याचार एक प्रकार का प्लेग है जो हमें क्रुद्ध एवं दुर्बल बनाता है। ऐसी अवस्था में बिना किसी हिंसा में प्रवृत होने के लोभ को त्यागकर उस स्थान से चले जाना ही बुद्धिमानी है।''[30] उन्होनें पैगम्बर मोहम्मद का मक्का से भाग जाना असहयोग का एक उदाहरण बताया।

(उ) शांतिपूर्ण धरनाः– यह भी सत्याग्रह का वैध तथा उपयोगी प्रकार है। स्वाधीनता संग्राम के दिनों में सफलतापूर्वक इसका प्रयोग किया गया। इसकी न्यायता को 4 मार्च, 1931 के गाँधी–इरविन समझौते में भी स्वीकार किया गया था।[31]

(ऊ) शांतिसेनाः– गाँधीजी ने शांतिसेना के गठन का परामर्श दिया। इसके सदस्यों से यह आशा की जाती है कि वे सामाजिक स्तर पर सत्याग्रह की तकनीक और सिद्धांतो का प्रयोग करेंगे। शांतिसेना को पुलिस तथा सेना के स्थान पर कार्य करना था। इसके सदस्यों के लिये आध्यात्मिक, नैतिक तथा सामाजिक मानदण्ड निर्धारित किये गये।[32]

इस प्रकार हम निष्कर्ष निकाल सकते है कि सत्याग्रह एक बलात्कारी शासन के प्रति विरोध करने के व्यक्ति के निर्विवाद अधिकार की स्थापना है। सत्याग्रह कुछ नया नहीं है, कौटुम्बिक जीवन का राजनीतिक जीवन में प्रसार मात्र है। गाँधीजी की देन यह है कि उन्होनें सत्याग्रह के विचार का राजनीतिक जीवन में सामूहिक प्रयोग किया।

आज विश्व के विभिन्न कोनों में सत्याग्रह एवं अहिंसक प्रतिकार के प्रयोग निरंतर चल रहे है। द्वितीय महायुद्ध में हजारों युद्ध विरोधी 'पैसेफिग्ट' सेना में भर्ती होने के बजाय जैल गये। बर्टेण्ड रसेल जैसै दार्शनिक युद्धविरोधी सत्याग्रहों के कारण जैल में बन्द हुए। नीग्रो नेता मार्टिन लूथर किंग के बलिदान की कहानी सत्याग्रह संग्राम की अमरगाथा बन गई। इटली के डेनिलो डोलची के सत्याग्रह की कहानी किसको रोमांचित नहीं करती। यह सारे प्रयास भले ही सत्याग्रह की कसौटी पर खरे न उतरते हो, परंतु ये शांति और अहिंसा की दिशा में एक कदम अवश्य है।

गाँधीजी एवं न्यासिता

गाँधीजी को मनुष्य के दिव्यत्व में विश्वास था। अतः मनुष्य–मनुष्य में भेद करना कठिन है। मनुष्य की आध्यात्मिकता तथा दिव्यत्व के प्रति इसी गहन भावना से गाँधीजी को अपना नैतिकतापरक अर्थशास्त्रीय न्यासिता और विरासत का सिद्धांत प्राप्त हुआ। वह कहते थे, प्रत्येक वस्तु ईश्वर की है और ईश्वर से प्राप्त होती है। अतः यह उसके सभी लोगों के लिये है। न कि किसी व्यक्ति विशेष के लिये।[33]

गाँधीजी के न्यासधारिता के सिद्धांत के अनुसार संपत्ति का वास्तविक स्वामी समाज है, कोई व्यक्ति विशेष नहीं, क्योंकि सामाजिक व्यवस्था बने रहने से तथा संपूर्ण समाज के क्रियाकलापों से ही संपत्ति उत्पन्न होती है एवं उसमें वृद्धि होती है। अतः भूमिपति और पूँजीपति क्रमशः भूमि और पूँजी के वास्तविक स्वामी नहीं है। अतएव उन्हें स्वयं को संपत्ति का स्वामी न समझकर उसका केवल न्यासधारी समझना चाहिए। संपत्ति से उत्पन्न होने वाले धन का उतना ही भाग उन्हें ग्रहण करना चाहिए जितना उनकी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये पर्याप्त हो। शेष सभी धन उन्हे परिश्रम करने वाले किसानों, मजदूरों एवं कामगारों के लिये उपलब्ध करा देना चाहिए। यदि संपत्ति–स्वामी आवश्यकता से अधिक धन अपने लिये रखते है तो वे ठीक वैसा ही अपराध करते है जैसा कि न्यासधारी न्यास की संपत्ति हड़पने पर करते है।[34]

महात्मा गाँधी के द्वारा प्रतिपादित न्यासधारिता का उपर्युक्त सिद्धांत कार्लमार्क्स के वर्ग–संघर्ष के सिद्धांत से नितांत भिन्न है। बापू के अनुसार समाज को शोषक और शोषित नामक दो वर्गो में विभाजित करना गलत है, क्योंकि संपूर्ण समाज के हित एक से ही होते है। अतः समस्त समाज के हितों की सिद्धि के लिये उसके सभी वर्गो में सहयोग होना वांछनीय है। इस वर्गीय सहयोग का आधार न्यासधारिता का सिद्धांत ही हो सकता है।[35]

गाँधीजी ने कहा था, ''मैं पूँजी और श्रम का विवाह मेल चाहता हूँ। ट्रस्टीशिप या धरोहरदारी की भावना उच्च चरित्र की निशानी है, जो ट्रस्टीशिप की भावना रखेगा, वह लोगों को दबाकर और उनका शोषण करके धन नहीं जमा करेगा। धनाढ्य वर्ग के लोग यदि जन सामान्य की तरह सादगी से रहते और कम खर्च करते है, तो वे जनता के ट्रस्टी कहे जा सकते है अथवा उसे जनता की अमानत ट्रस्ट समझकर खर्च नहीं करते, तब तक हिंसात्मक क्रांति अनिवार्य है।[36]

गाँधीजी का ट्रस्टीशिप सिद्धांत ऊँच–नीच का समतलीकरण, आर्थिक समानता, अहिंसक स्वाधीनता की सर्वकुंजी है। आर्थिक समानता के लिये कार्य

करने का मतलब है– पूँजी और श्रम के अंतहीन संघर्ष का उन्मूलन। इसका अर्थ है, एक ओर तो उन मुठ्ठीभर धनवानों के स्तर को नीचे लाना जिनके हाथ में राष्ट्र की अधिकांश संपदा केंद्रित है और दूसरी ओर, आधा पेट भोजन पर जीवन निर्वाह करने वाले लाखों–करोड़ों लोगों के स्तर को ऊपर उठाना।

जब तक धनवानों और लाखों–करोड़ों लोगों के बीच की खाई नहीं पटती तब तक अहिंसक किस्म की सरकार की स्थापना करना नितांत असंभव है। विश्व के किसी भी महानगर के आलीशान भवनों और उनके पास ही मजदूरों की टूटी–फूटी झोपड़ियों का अंतर एक दिन भी नहीं चल सकता, जिसमें गरीब लोगों के हाथों में उतनी ही शक्ति होगी, जितनी कि सर्वाधिक धनी लोगों के हाथों में।

अहिंसक पद्धति

अहिंसक पद्धति में पूँजीपति को नष्ट करने का प्रयास नहीं किया जाता, बल्कि पूँजीवाद को समाप्त करने का प्रयास करते है। हम पूँजीपति से आग्रह करते है कि वह स्वयं को उन लोगों का न्यासी समझे जिनके ऊपर वह अपनी पूँजी के निर्माण, उसकी रक्षा और उसके संवर्धन के लिये निर्भर है। श्रमिक को भी उसके हृदय–परिवर्तन के लिये प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है। यदि पूँजी मे शक्ति है तो श्रम में भी है। शक्ति का प्रयोग विनाश के लिये भी किया जा सकता है और सृजन के लिये भी। दोनों एक–दूसरे पर निर्भर है। अपनी शक्ति का अहसास होते ही श्रमिक पूँजीपति का गुलाम होने के स्थान पर उसका सह–भागीदार होने की स्थिति में आ जाता है। अगर वह एकमात्र स्वामी बनने की कोशिश करेगा तो अधिक संभावना इसी बात की है कि वह सुनहरा अण्डा देने वाली मुर्गी को ही मार देगा।

सामुदायिक कल्याण

गाँधीजी के अनुसार, ''मैं उन व्यक्तियों को जो आज अपने–आप को मालिक समझ रहे हैं, न्यासी के रूप में कार्य करने के लिये आमंत्रित करता हूँ, अर्थात् यह आग्रह कर रहा हूँ कि वे स्वयं को अपने अधिकार की बदौलत

मालिक न समझें, बल्कि उनके अधिकार की बदौलत मालिक समझें जिनका उन्होनें शोषण किया है।

यदि कोई व्यक्ति अपने पुरखों से उत्तराधिकार में अत्यधिक धन–संपत्ति प्राप्त करता है या उद्योग–व्यापार करके उसके पास काफी धन इकट्ठा हो गया है, तो उसे यह समझना चाहिए कि यह संपूर्ण धन मेरा नहीं है, मेरा अधिकार तो बस सम्माननीय ढंग से रह सकने का है और इसका स्तर भी उससे ऊपर नहीं होना चाहिए जो लाखों लोगों को प्राप्त है। मेरा धन समुदाय का है और वह उसी के कल्याण में खर्च किया जाना चाहिए।[37]

व्यवहार में न्यासिता

इस प्रश्न का कोई महत्व नहीं है कि विश्व में कितने लोग सच्चे न्यासी के रूप में आचरण कर सकते है? अगर यह सिद्धांत सही है तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि इस पर अनेक लोग चल रहे है या केवल एक ही आदमी चल रहा है। प्रश्न केवल दृढ़ आस्था का है। किसमें कितनी दृढ़ आस्था है? इस सिद्धांत में ऐसी कोई बात नहीं है जो इन्सान की बुद्धि की पकड़ के बाहर हो। हालांकि यह कहा जा सकता है कि इसे व्यवहार में लाना कठिन है।

गाँधीजी ने कहा, ''मुझे यह स्वीकार करने में कोई लज्जा नहीं है कि अनेक पूँजीपतियों का मेरे प्रति मैत्रीभाव है और वे मुझसे भय नहीं खाते। वे जानते है कि मैं पूँजीवाद को समाप्त करने का लगभग उतना ही इच्छुक हूँ जितने कि सर्वाधिक उन्नत समाजवादी अथवा साम्यवादी है। लेकिन हमारे तरीके अलग–अलग है, हमारी भाषाएँ अलग–अलग है।[38]

न्यासिता क्षणिक सिद्धान्त नहीं है

गाँधीजी ने सभी आलोचकों का मुँह बन्द करते हुए कहा, ''मेरा ट्रस्टीशिप सिद्धान्त कोई क्षणिक तथा निश्चय ही किसी प्रकार का छल नहीं है। मुझे विश्वास है कि अन्य सिद्धांतों के बाद भी यह प्रचलित रहेगा। इसके पीछे दर्शन और धर्म की शक्ति है। यदि धनी लोगों ने इस सिद्धांत के अनुसार आचरण नहीं किया है, तो यह सिद्धांत **झूठा** नहीं हो जाता हैं। इससे केवल धनवानों की

दुर्बलता सिद्ध होती है। इस सिद्धांत के अलावा और कोई सिद्धांत अहिंसा के अनुरूप नहीं हो सकता।''[39]

धन–संपत्ति का अर्जन

आज जिनके पास दौलत है, उनसे कहना है कि वे इस तरह आचरण करे मानो उनके पास यह दौलत गरीबों की ओर से एक न्यास के रूप में रखी गई हो। धनवान व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के बाद जो शेष धन बचेगा उसका प्रयोग समाज हित में स्वेच्छा से करेंगे। प्रत्येक व्यक्ति को अपने पड़ौसी से एक रूपया भी अधिक नहीं रखना चाहिए। यहाँ पर निजी व अन्य सम्पत्ति में कोई अन्तर नहीं है। इस व्यवस्था से शोषण की प्रथा बन्द हो जायेगी।[40] इस पर **गाँधीजी ने कहा कि,** ''धनवान समाज के गरीबों के सहयोग के बिना धन संग्रह नहीं कर सकते। यदि यह ज्ञान गरीबों को हो जाये तो वे अहिंसा द्वारा उन शोषक असमानताओं से मुक्त होना सीख लेंगे, जिन्होने उन्हें भूखमरी के कगार पर पहुँचा दिया।''[41]

हम कह सकते है कि न्यासिता कानून की दृष्टि से एक कल्पना मात्र है। लेकिन अगर लोग इस पर बराबर विचार करें और इसके अनुसार आचरण करने का प्रयास करें तो दुनिया आज जितने प्रेम से चलाई जा रही है, उससे कहीं अधिक प्रेम का संचार हो सकता है। यूक्लिड द्वारा की गई बिन्दु की परिभाषा की तरह पूर्ण न्यासिता भी एक अमूर्त विचार है और इसे प्राप्त करना भी उतना ही असंभव है। लेकिन अगर हम उसके लिये प्रयास करते रहे तो हम धरती पर समानता स्थापित करने की दिशा में अन्य किसी उपाय की अपेक्षा अधिक प्रगति कर सकते है।

गाँधीजी को पूरा विश्वास था कि जान–बूझकर गलत काम किए बगैर भी दौलत कमाई जा सकती है। लेकिन वे इस प्रस्थापना को स्वीकार करते है कि संपत्ति को अर्जित करने और उसका न्यासी बनने की अपेक्षा संपत्ति की कामना न करना बेहतर है। उन्होने कहा, ''मैं अपनी संपत्ति पहले ही त्याग चुका हूँ, जो इस बात का पर्याप्त प्रमाण होना चाहिए कि मैं औरों से क्या करने की अपेक्षा

रखता हूँ। लेकिन मैं उन लोगों को क्या सलाह दूँ जो पहले ही धनवान है या जो धन की कामना को छोड़ना नहीं चाहते। ऐसे लोगों को मेरा परामर्श यही हो सकता है कि वे अपने धन का इस्तेमाल सेवा के लिये करे।[42]

यह सही है कि आमतौर पर धनी लोग अपने ऊपर जरूरत से ज्यादा खर्च करते है। लेकिन इससे बचा जा सकता है। गाँधीजी व्यक्तिगत रूप से विरासत में मिली धन–दौलत में विश्वास नहीं करते थे। वे कहते है, धनवान लोगों को अपने बच्चों को ऐसी शिक्षा देनी चाहिए और उनका पालन–पोषण इस प्रकार करना चाहिए कि वे अपने पैरों पर खड़ा होना सीखे। दुःख का विषय है कि वे ऐसा नहीं करते।

विकल्प

धन संपत्ति के वर्तमान स्वामियों को वर्ग–भेद और अपनी धन–संपत्ति के न्यासी के रूप में स्वेच्छा से अपने आपको परिवर्तित कर देने के बीच किसी एक का चुनाव करना होगा। उन्हें अपनी धन–दौलत के स्वामित्व को बनाये रखने, अपनी प्रतिभा का इस्तेमाल करने और अपनी दौलत में वृद्धि करने की अनुमति होगी, लेकिन स्वयं की खातिर नहीं बल्कि राष्ट्र की खातिर। इसलिये इसमें शोषण के लिये भी कोई स्थान नहीं होगा। इन्हें अपनी सेवा और समाज के लिए उसके मूल्य को देखते हुए कमीशन मिलेगा जिसकी दर का नियमन राज्य द्वारा किया जाएगा। उनके बच्चों को उनके स्थान पर न्यासी बनने की आज्ञा तभी मिलेगी जबकि वे स्वयं को इसके लिए सिद्ध कर सकेंगे।

जब लोग न्यासिता के अर्थ को समझने लगेंगे और वातावरण उसके अनुकूल हो जायेगा तो लोग स्वयं ही ऐसे कानून बनाना शुरू कर देंगे और यह शुरूआत स्थानीय स्तर से होगी। ऐसी चीज नीचे के स्तर से शुरू होने पर वह एक बोझ महसूस होती है।

उपर्युक्त अध्ययन के पश्चात् गाँधीजी के न्यासिता सिद्धांत में निम्न लक्षण दृष्टिगोचर होते है जो वर्तमान विश्व की विभिन्न समस्याओं के निराकरण में सहायक सिद्ध हो सकते है –

1. न्यासधारिता का सिद्धांत समानता की विचारधारा पर आधारित है।
2. न्यासिता समाज की वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था को समतावादी व्यवस्था में रूपांतरित करने का एक साधन है। इसका ध्येय सुधारवादी समाज की स्थापना करना है।
3. यह संपत्ति पर निजी स्वामित्व की समाप्ति कर सामाजिक स्वामित्व की स्थापना करना चाहता है।
4. संपत्ति का प्रयोग सामाजिक हित में हो इसलिये इस सिद्धांत में राज्य का हस्तक्षेप अनिवार्य माना गया है।
5. न्यासिता का सिद्धांत मनुष्यों की न्यूनतम व अधिकतम आय को निश्चित करने का प्रभावशाली सुझाव देता है। मनुष्य की न्यूनतम व अधिकतम आयों के बीच जो अंतर हो वह युक्तिसंगत और न्यायोचित हो और उसमे समय–समय पर इस दृष्टि से परिवर्तन किया जाए कि अंततः वह अंतर मिट जाए।
6. यह सिद्धांत इस बात का निर्धारण करता है कि सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप ही आर्थिक उत्पादन होना चाहिए। व्यक्तिगत इच्छाओं के आधार पर नहीं।

महात्मा गाँधी द्वारा विश्व को प्रदत्त प्रन्यास का सिद्धांत वर्तमान में कठिन हो सकता है, किन्तु असंभव नहीं। इतिहास एवं वर्तमान के कई उदाहरण हमारे सामने है, जबकि धनाढ्य लोगों ने अपनी संपत्ति का देश एवं समाज के लिये त्याग कर दिया। भामाशाह का उदाहरण अनुकरणीय है। भामाशाह शब्द आज दानदाता का पर्याय बन चुका है। वर्तमान समय में सर्वत्र भौतिकता का वर्चस्व व आपाधापी है। ऐसे में गाँधीजी के सिद्धांत का अनुसरण देखने को मिल जाता है। विश्व के सर्वाधिक धनाढ्य व्यक्ति माइक्रोसॉफ्ट के मालिक बिल गेट्स ने अपनी संपदा के बड़े भाग को सामाजिक सरोकारों से प्रन्यास घोषित कर दिया। हाल ही में एक अन्य अग्रणी धनाढ्य वारेन बफेट ने अपनी आधी संपदा का दान कर दिया। अब करोड़ों लोग गेट्स व बफेट क्लब ज्वॉइन करने को आतुर

है। भारत में तो दानदाताओं की संख्या का अनुमान लगाना कठिन है। यहाँ असंख्य लोग गोपनीयता से दान करते है।

अतः गाँधीजी के प्रन्यास सिद्धांत को मूर्त करना दुष्कर नहीं है। बस इसको प्रख्यापित करने की आवश्यकता है। जो लोग देश एवं समाज की अधिकांश पूँजी का नियंत्रण करते हैं, उन्हें प्रन्यास सिद्धांत की बुनियाद को समझने की आवश्यकता है। उन्हें अपने अधिकारों की नैतिक सीमा तथा अन्य के प्राकृतिक अधिकारों को समझना होगा। आधुनिक युग में भारत जैसी परिस्थिति वाले देशों को दृष्टिगत रखें, जहाँ संपत्ति का संकेन्द्रण सीमित हाथों में हो रहा है, गरीब और अमीर के बीच का अंतराल बढ़ रहा है, करोड़ों लोग रोटी, कपड़ा और मकान को मोहताज है, प्रन्यास के सिद्धांत का महत्व बढ़ जाता है। लोगों के पास अनुपयुक्त पड़ी सम्पदा, संपत्ति एवं खाद्यान्नों की उत्पादकता इसी में है कि इनका उपयोग जन–जन के कष्ट निवारण में हो सके। प्रन्यास का सिद्धान्त वितरण के न्याय को मूर्त कर सकता है।

सर्वोदय का दर्शन

अंग्रेज लेखक जॉन रस्किन की एक पुस्तक है– अनटू दिस लास्ट। जिसका अर्थ है– इस अंतवाले को भी। रस्किन की इस पुस्तक का गाँधीजी ने गुजराती में अनुवाद 'सर्वोदय' नाम से किया। सर्वोदय अर्थात् सबका उदय, सभी का विकास। सर्वोदय भारत का पुराना आदर्श है। हमारे ऋषियों ने गाया है– ''सर्वेपि सुखिनः संतु''। सर्वोदय शब्द भी नया नहीं हैं। **जैन मुनि समन्तभद्र कहते है–**

सर्वापदामंतकरं निरंतं सर्वोदयं तीर्थमिदं तवैव।

''सर्व खल्विदं ब्रह्म'', ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' अथवा सोऽहम् और ''तत्वमसि'' के हमारे पुरातन आदर्शो में सर्वोदय के सिद्धांत अंतर्निहित है।

सर्वोदय समाज गाँधीजी की कल्पनाओं का समाज था, जिसके केन्द्र में भारतीय ग्राम व्यवस्था थी। उनके अनुसार सर्वोदय अभियान का अर्थ है, आर्थिक व सामाजिक क्षैत्र में भारत की आत्मा की खोज एवं उसकी प्रतिष्ठा की पूर्णता

के दर्शन करना। यह प्रतिपादित करता है भूमि संबंधी पुनर्निर्मित परंपराओं और व्यवहार के भारतीय आदर्शो के आधार पर सामाजिक और राजनैतिक ढाँचें को पुनः तैयार करना। सत्ता हथियाने की इस पागलपन की होड़ के युग में सर्वोदय का महत्व आत्मत्याग के चिरस्थायी मूल्यों में निहित है। यह चाहता है दलीय झगड़ों, ईर्ष्या और गले काटने की प्रतियोगिता का स्थान पारस्परिक सहयोग और सभी की भलाई की भावना प्रमुख रूप से ले।[43]

विनोबा जी ने कहा है, सर्वोदय का अर्थ है– सर्वसेवा के माध्यम से समस्त प्राणियों की उन्नति। सर्वोदय के व्यावहारिक स्वरूप को हम बहुत हद तक विनोबा जी के भूदान आंदोलन में देख सकते है।

दादा धर्माधिकारी ने अपने सर्वोदय दर्शन में लिखा है, सुबह वाले को जितना, शामवाले को भी उतना ही, प्रथम व्यक्ति को जितना, अंतिम व्यक्ति को भी उतना ही, इसमें समानता और अद्वैत का वह तत्व समाया है, जिस पर सर्वोदय का विशाल प्रासाद खड़ा है।

सर्वोदय के उद्देश्य

- व्यक्ति में आत्म–संयम की भावना विकसित करना।
- शोषणहीन समाज की स्थापना के प्रयास करना।
- मानव समाज के सर्वांगीण विकास के प्रयास करना।
- लोकनीति के आधार पर शासन संचालन किया जाये।
- सत्ता के विकेन्द्रीकरण के प्रयास सुनिश्चित हो।

सर्वोदय का आदर्श है 'अद्वैत' और उसकी नीति है 'समन्वय'। मानवकृत विषमता का वह अन्त करना चाहता है और प्राकृतिक विषमता को वह घटाना चाहता है। जीवमात्र के लिये समादर और प्रत्येक व्यक्ति के प्रति सहानुभूति ही सर्वोदय का मार्ग है। जीवमात्र के लिए सहानुभूति का विचार जब जीवन में प्रवाहित होता है, तब सर्वोदय की लता में सुरभिपूर्ण सुमन खिलते है। **डार्विन ने कहा–** ''प्रकृति का नियम है, बड़ी मछली छोटी मछली को खाकर जीवित रहती

है।'' **हक्सले ने कहा–** ''जीओ और जीने दो।'' परंतु सर्वोदय कहता है– ''तुम दूसरों को जिलाने के लिये जीओ।'' दूसरों को अपना बनाने के लिये प्रेम का विस्तार करना होगा, अहिंसा का विकास करना होगा और शोषण को समाप्त कर आज के सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन करना होगा।

'सर्वोदय' ऐसे वर्गविहीन, जातिविहीन और शोषण मुक्त समाज की स्थापना करना चाहता है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति और समूह को अपने सर्वांगीण विकास का साधन और अवसर मिले। **विनोबा भावे कहते है–** जब हम सर्वोदय का विचार करते है, तब ऊँच–नीच भाववाली वर्णव्यवस्था दीवार की तरह सामने खड़ी हो जाती है। उसे तोड़े बिना सर्वोदय स्थापित नहीं होगा। इसे सफल बनाने हेतु जातिभेद मिटाना होगा और आर्थिक विषमता दूर करनी होगी।

सर्वोदय ऐसी समाज रचना चाहता है जिसमें वर्ण, वर्ग, धर्म, जाति, भाषा आदि के आधार पर किसी समुदाय का न तो संहार हो, न बहिष्कार हो। सर्वोदय की समाजरचना ऐसी होगी, जो सर्व के निर्माण और सर्व की शक्ति से सर्व के हित में चले, जिसमें कम या अधिक सामर्थ्य के लोगों को समाज का संरक्षण समान रूप से प्राप्त हो और सभी तुल्य पारिश्रमिक के हकदार माने जाये। विज्ञान और लोकतंत्र के इस युग में सर्व की क्रांति का ही मूल्य है और वही संपूर्ण विकास का मापदण्ड है। सर्व की क्रांति में पूँजी और बुद्धि में परस्पर संघर्ष की गुंजाइश नहीं है। वे समान स्तर पर परस्पर पूरक शक्तियाँ है। स्वभावतः सर्वोदय की समाज रचना में अंतिम व्यक्ति समाज की चिंता का सबसे पहले अधिकारी है।

सर्वोदय समाज की रचना व्यक्तिगत जीवन की शुद्धि पर ही हो सकती है। जो व्रत नियम व्यक्तिगत जीवन में 'मुक्ति के साधन' है वे ही जब सामाजिक जीवन में भी व्यवहृत होंगे, तब सर्वोदय समाज बनेगा। सर्वोदय की दृष्टि से जो समाज रचना होगी, उसका आरंभ हमें अपने जीवन से करना होगा। निजी जीवन में असत्य, हिंसा, परिग्रह आदि हुआ तो सर्वोदय नहीं होगा, क्योंकि सर्वोदय समाज की विषमता को अहिंसा से ही मिटाना चाहता है।

साम्यवादी का ध्येय भी विषमता मिटाना है, परंतु इस अच्छे साध्य के लिए वह चाहे जैसा साधन प्रयोग में ला सकता है, परंतु सर्वोदय के लिये साधन शुद्धि भी आवश्यक है।

गाँधीजी कहते है– ''समाजवाद का प्रारंभ पहले समाजवादी से होता है। यदि एक भी ऐसा समाजवादी हो, तो उस पर शून्य बढ़ाए जा सकते है। हर शून्य से उसकी कीमत दस गुना बढ़ जाएगी, लेकिन यदि पहला अंक शून्य हो तो, उसके आगे कितने ही शून्य बढ़ाए जाएँ, उसकी कीमत फिर भी शून्य ही रहेगी।''[44] इसीलिये गाँधीजी सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, शरीरश्रम, निर्भयता, सर्वधर्म समन्वय, अस्पृश्यता और स्वदेशी आदि व्रतों के पालन पर इतना बल देते है।

सर्वोदय के प्रमुख तत्व

- **पारिश्रमिक की समानता–** जितना वेतन नाई को उतना ही वेतन वकील को। ''अनटू दिस लास्ट'' का यह तत्व सर्वोदय में पूर्णतः गृहित है।
- **प्रतियोगिता का अभाव–** प्रतियोगिता संघर्ष को जन्म देती है, परंतु सर्वोदय संघर्ष नहीं, सहकार को मानता है। सर्वोदय का संपूर्ण भवन ही अहिंसा की नींव पर खड़ा है।
- **साधन शुद्धि–** सर्वोदय में साधन शुद्धि प्रमुख तत्व है। साध्य भी शुद्ध और साधन भी शुद्ध।
- **आनुवांशिक संस्कारों से लाभ उठाने के लिये ट्रस्टीशिप की योजना–** शरीर, बुद्धि और संपत्ति इन तीनों में से जो जिसे प्राप्त हो, उसे यही समझना चाहिए कि वह सबके हित के लिये ही मिली है। यही ट्रस्टीशिप का भाव है। अपनी शक्ति और संपत्ति का ट्रस्टी के नाते ही मनुष्य मात्र के हित के लिए प्रयोग करना चाहिए।
- **विकेन्द्रीकरण–** सर्वोदय सत्ता और संपत्ति का विकेन्द्रीकरण चाहता है। जिससे शोषण और दमन से बचा जा सके। केन्द्रीकृत औद्योगिकीकरण

के इस युग में तो यह और भी आवश्यक हो गया है। गाँधीजी ने आदि, मध्य और अन्त तीनों स्थितियों में विकेन्द्रीकरण और शासनमुक्तता की बात कही है। यही सर्वोदय का मार्ग है।

वर्तमान विश्व राजनीति में गाँधीजी की सर्वोदय की विचारधारा उन राष्ट्रों के लिये बहुमूल्य सिद्धांत साबित होगी जो अपने को आंतरिक दृष्टि से असमान, असहाय एवं असहज महसूस करते है। क्योंकि विश्व में समानता तभी लायी जा सकती है जब सभी वर्गो का उदय समान रूप से हो।

गाँधीजी का शिक्षा दर्शन

महात्मा गाँधी का व्यक्तित्व और कृतित्व आदर्शवादी रहा है। उनका आचरण प्रयोजनवादी विचारधारा से ओतप्रोत था। विश्व के अधिकांश लोग उन्हें महान् राजनीतिज्ञ एवं समाज सुधारक के रूप में जानते हैं, परन्तु उनका यह मानना था कि सामाजिक उन्नति हेतु शिक्षा का एक महत्वपूर्ण योगदान होता है। अतः गाँधीजी का शिक्षा के क्षैत्र में भी विशेष योगदान रहा है। उनका मूल मंत्र था– शोषण–विहीन समाज की स्थापना करना। उसके लिये सभी को शिक्षित होना चाहिए। क्योंकि शिक्षा के अभाव में एक स्वस्थ समाज का निर्माण असंभव है। उन्होनें अपने शिक्षा दर्शन में मनुष्य को एकादश व्रत (सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह, अभय, अस्पृश्यता निवारण, कायिक श्रम, सर्वधर्म समभाव और विनम्रता) पालन की ओर प्रवृत्त करने पर बल दिया।

शिक्षा से तात्पर्य

गाँधीजी शिक्षा को बड़े ही व्यापक अर्थ में प्रयुक्त करते है। वे केवल साक्षरता को शिक्षा नहीं मानते थे। उनके अनुसार, साक्षरता न तो शिक्षा का अन्त है न प्रारंभ। यह केवल एक साधन है जिसके द्वारा पुरूष और स्त्रियों को शिक्षित किया जा सकता है।[45] गाँधीजी के अनुसार, शिक्षा से मेरा तात्पर्य एक ऐसी प्रणाली से है जो बालक एवं मनुष्य की समस्त प्रतिभाओं, जिसमें शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक भी सम्मिलित है, का विकास करे।[46] गाँधीजी मनुष्य

को शरीर, मन, आत्मा का योग मानते थे। इनका स्पष्ट मत था कि शिक्षा को मनुष्य के शरीर, मन एवं आत्मा का विकास करना चाहिए। गाँधीजी ने $3R^s$ (Reading, Writing, and Arithmetic) की शिक्षा को $3H^s$ (Hand, Head and Heart) की शिक्षा में बदल दिया।

शिक्षा के उद्देश्य

गाँधीजी का समस्त जीवन–दर्शन आध्यात्मिकता से ओतप्रोत है। इसका स्पष्ट प्रभाव उनके शैक्षिक उद्देश्यों पर परिलक्षित होता है।

- शिक्षा ऐसी हो जो छात्रों को शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बना सके।
- शिक्षा द्वारा छात्रों में सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास किया जाना चाहिए। इसके लिये बालकों को जो शिक्षा दी जाये वह बालक के भौतिक एवं सामाजिक वातावरण के अनुरूप होनी चाहिए।
- शिक्षा छात्रों का चारित्रिक विकास करे। इसके लिये वह बालकों में ऐसी भावना का विकास करे जिससे बालक अच्छे–बुरे, नैतिक–अनैतिक, करणीय–अकरणीय, त्याज्य एवं ग्रहणीय तथ्यों के मध्य अंतर कर सके।
- शिक्षा द्वारा छात्रों में अनुशासित स्वतंत्रता की भावना विकसित की जाये। 'सा विद्या या विमुक्तये' इस विचारधारा का गाँधीजी पूरा समर्थन करते है। किंतु वे मुक्त स्वतंत्रता के पक्षपाती नही थे। उनके अनुसार अनुशासित स्वतंत्रता की भावना ही बालकों को कर्तव्यों एवं दायित्वों का ज्ञान देगी।
- शिक्षा आदर्शवाद एवं व्यवहारवाद में समन्वय स्थापित करे। गाँधीजी के अनुसार आदर्शवाद की दृष्टि से छात्र का आध्यात्मिक विकास होना चाहिए एवं व्यवहारवाद की दृष्टि से व्यावसायिक शिक्षा, शारीरिक श्रम, तथा आत्मनिर्भरता पर बल दिया जाना चाहिए। किंतु गाँधीजी की यह समस्त व्यावहारिकता सत्य, अहिंसा एवं नैतिकता से अछूती न थी। जहाँ

सत्य, अहिंसा तथा नैतिकता है वहीं पर आध्यात्मिकता है। इस प्रकार गाँधीजी भौतिकता एवं आध्यात्मिकता में समन्वय स्थापित करके चलना चाहते थे।[47]

शिक्षा प्रणाली

गाँधीजी ने राष्ट्र की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति एवं वर्गविहीन समाज के निर्माण के लिये क्रिया प्रधान पाठ्यचर्या के निर्माण पर बल दिया। उन्होनें पाठ्यचर्या में हस्तकौशल एवं उद्योग को सर्वप्रमुख स्थान दिया। इसके बाद क्रमशः मातृभाषा, व्यावहारिक गणित, सामाजिक विषय, सामान्य विज्ञान, संगीत, चित्रकला, स्वास्थ्य विज्ञान और आचरण शिक्षा को रखा। शिक्षण विधि के अंतर्गत उन्होनें करके सीखना, अनुभव द्वारा सीखना एवं समन्वित ज्ञान के लिये सहसंबंध विधि को सर्वोत्तम माना। उन्होनें अपनी शिक्षा प्रणाली में शिक्षक का स्थान पथ–प्रदर्शक, परामर्शक एवं मित्र का मानते हुए बालकेंद्रित शिक्षा का समर्थन किया है। वे दमनात्मक अनुशासन का समर्थन नहीं करते थे। उनके अनुसार सर्वोत्तम अनुशासन वह है जो 'आत्मबल' के आधार पर स्थापित हो। अतः शिक्षा छात्र में 'स्वानुशासन' स्थापित करे। विद्यालयों को उन्होनें सामुदायिक केन्द्र बनाने पर बल दिया।[48]

बुनियादी शिक्षा : नई तालीम

सन् 1937 में गाँधीजी ने वर्धा में हो रहे 'अखिल भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन' जिसे वर्धा शिक्षा सम्मेलन कहा जाता है में नई तालीम के नाम से एक जीवन दर्शन तथा शिक्षा पद्धति देश के समक्ष प्रस्तुत की, जो अहिंसक, समतामूलक, न्यायाधिष्ठित समाज निर्माण का उद्देश्य रखती है।

महात्मा गाँधी ने जीवनभर शिक्षा के क्षैत्र में अनेक प्रयोग किए। उन्होनें स्वयं के द्वारा प्रवर्तित शिक्षा को 'नई तालीम' नाम दिया। गाँधीजी का यह स्पष्ट मानना था कि किसी भी प्रकार का परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा में परिवर्तन आवश्यक है। इसीलिए अहिंसक सामाजिक क्रांति के लिये नई तालीम एक अमोघ एवं अचूक शस्त्र है। उनकी इस शिक्षा योजना के पीछे स्वयं उनके

जीवन के अनुभव है। अपनी शिक्षा में गाँधीजी ने 'आत्मा' के विकास का आधार 'सत्य', 'सामाजिक व्यवस्था' का आधार 'अहिंसा' और 'आर्थिक ढांचे' का आधार 'अपरिग्रह' को माना। कर्म केन्द्रित शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के साथ ही उसे एक समाजोपयोगी प्राणी भी बनाती है।[49]

अपने अध्ययनकाल के दौरान ही गाँधीजी ने वर्तमान शिक्षा प्रणाली की कमियों व इसकी निरर्थकता को गंभीरता से महसूस किया था। इसी समय से उनका यह निश्चित मत हो गया था कि शिक्षा यदि नैतिकता नहीं सिखाती तो वह शिक्षा ही नहीं है। इसके साथ ही विद्याभ्यास में शारीरिक शिक्षा का समान स्थान होना चाहिए। स्कूली शिक्षा में धर्म की शिक्षा का अभाव उन्हें हमेशा ही खटकता रहा। लन्दन में कानून का अध्ययन करते हुए गाँधीजी ने यह अनुभव किया कि वास्तविक शिक्षण तो स्वाध्याय या स्व–शिक्षण से ही प्राप्त किया जा सकता है।

जीवन में ऐसा कुछ भी नहीं है जो शिक्षा से संबंधित न हो। इसीलिये गाँधीजी ने आहार–विज्ञान, प्राकृतिक चिकित्सा, स्वच्छता व स्वास्थ्य से संबंधित विषयों का गंभीरता से अध्ययन किया तथा खाना बनाना, कपड़े धोना, प्रेस करना, सफाई व अन्य दूसरे गृह–कार्य इत्यादि को भी सीखा।

कानून की पढ़ाई पूरी करने के बाद गाँधीजी ने यह अनुभव किया कि वर्तमान शिक्षा का व्यवहार से कोई संबंध नही है और शिक्षा का संबंध काम से न हो तो यह शिक्षा बेकार है। इसलिये शिक्षा में व्यवहार के ज्ञान का तत्व अनिवार्य रूप से होना चाहिए। शिक्षा का उद्देश्य पैसा कमाना या केरियर बनाना नहीं, बल्कि अच्छा बनना और देशसेवा करना है। फीनिक्स आश्रम में उन्होनें तीन घण्टे पढ़ाई, दो घण्टे खेती का काम, दो घण्टे इंडियन ओपीनियन समाचार पत्र में काम अपनी दिनचर्या का हिस्सा बनाया। टॉलस्टॉय आश्रम की पाठशाला में गाँधीजी ने शिक्षा में उद्योग को शामिल किया। गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने गाँधीजी की नयी तालीम को देखकर कहा था, ''इसमें स्वराज की चाबी मौजूद है।'' साबरमती आश्रम में गाँधीजी ने विधिवत् पाठशाला प्रारंभ की। जहां समस्त

शिक्षण मातृभाषा में देना, विद्यार्थियों को स्वावलंबी बनाना, सभी विषयों का ज्ञान देना शामिल था। उन्होनें अनुभव किया कि शुद्ध शिक्षा के बिना राजनैतिक क्षैत्र में भी स्वराज की दिशा में किए गए सब प्रयत्न व्यर्थ होंगे।[50]

1937 में गाँधीजी ने नई तालीम के नाम से जिस उद्योग केन्द्रित स्वावलंबी शिक्षा का प्रारूप देश के समक्ष रखा, उस संदर्भ में उनका कहना है कि शिक्षा का माध्यम ही किसी उद्योग को बनाना चाहिए और चुने हुए उद्योग के माध्यम से सभी विषयों की शिक्षा देनी चाहिए। शारीरिक श्रम द्वारा बच्चों का मानसिक विकास होना चाहिए और शारीरिक श्रम की शिक्षा महज इसलिये नही दी जाएगी कि बच्चे स्कूल के संग्रहालयों के लिए चीजें तैयार करें अथवा ऐसे खिलौने बनाए जिनकी कोई कीमत ही न हो। शारीरिक श्रम द्वारा ऐसी चीजों का उत्पादन होना चाहिए जो बाजार में बिक सकती हो। नई तालीम के संबंध में 14 दिसंबर 1947 को अपनी अंतिम चर्चा में गाँधीजी ने कहा था, ''नई तालीम जीवनभर जारी रहनी चाहिए। इसका क्षैत्र गर्भाधान से अंतिम संस्कार तक है। सामान्यतः यह माना जाता है कि बुनियादी शिक्षा उद्योग द्वारा शिक्षण देना है। यह एक हद तक सही है परन्तु यह संपूर्ण सत्य नहीं है। नई तालीम की जड़ें और गहरी जाती है। यह तो व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में सत्य–अहिंसा के आधार पर टिकी है। सच्चा शिक्षण वह है जो व्यक्ति को सच्ची स्वतंत्रता दिलाये।''[51]

गाँधीजी की बुनियादी शिक्षा की आज भी आवश्यकता है क्योंकि आज विश्व में जो विनाश ओर तबाही फैल रही है वह मनुष्यों में मानवता की कमी के कारण बढ़ती जा रही है। गाँधीजी ने क्रिया द्वारा सीखने पर बल दिया जो आज भी उतना ही आवश्यक है क्योंकि स्वयं करके सीखा हुआ ज्ञान स्थायी होता है, जो प्रत्येक क्षैत्र के लिये आवश्यक है। गाँधीजी ने शारीरिक श्रम का सम्मान किया। उनके अनुसार मनुष्य को अपना कार्य स्वयं करना चाहिए। किसी पर निर्भर नहीं होना चाहिए। जो काम का आदर करेगा वही उत्पादन कार्य से जुड़ सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. नारायण डॉ. इकबाल, ''आधुनिक राजनीतिक विचारधाराएँ'', ग्रन्थ विकास, जयपुर, 2005, पृष्ठ 417
2. वही, पृष्ठ 419
3. त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', विश्वभारती पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2013, पृष्ठ 386
4. वही, पृष्ठ 387
5. नारायण डॉ. इकबाल, ''आधुनिक राजनीतिक विचारधाराएँ'', ग्रन्थ विकास, जयपुर, 2005, पृष्ठ 409
6. यंग इंडिया, दिसंबर 31,1931, पृष्ठ 428
7. बहरवाल मनोज कुमार, ''भारतीय राजनीतिक चिन्तक'', हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर, 2014, पृष्ठ 392
8. वही, पृष्ठ 393
9. यंग इंडिया, पृष्ठ 370–371
10. यंग इंडिया, फरवरी 7, 1929 पृष्ठ 42
11. हरिजन, नवम्बर 24, 1933, पृष्ठ 6
12. यंग इंडिया, दिसंबर 3, 1925 पृष्ठ 422
13. हरिजन, जून 1, 1935, पृष्ठ 123
14. हरिजन, दिसंबर 10, 1938, पृष्ठ 373
15. यंग इंडिया, नवम्बर 13, 1924, पृष्ठ 377
16. हरिजन, जुलाई 4, 1946, पृष्ठ 67
17. यंग इंडिया, फरवरी 20, 1930, पृष्ठ 61
18. यर्वदा मंदिर, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद, 1954, पृष्ठ 12–13
19. हरिजन, जून 23, 1946, पृष्ठ 199

20. डॉ. राधाकृष्णन सर्वपल्ली, ''गाँधी अभिनन्दन ग्रंथ'', सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, 1955, पृष्ठ 149
21. जैन माणक, ''गाँधी के विचारों की 21वी सदी में प्रासंगिकता'', आदि पब्लिकेशंस, जयपुर, 2010, पृष्ठ 28
22. प्रधान आर. के., राव यू. आर., ''द माइंड ऑफ महात्मा'', 1945, पृष्ठ 49
23. एलेक्जण्डर हॉरेस, ''गाँधी थ्रो वेस्टर्न आई'', 1969, पृष्ठ 182
24. ब्राउन जे. डी., ''गाँधीज़ राइज टू पावर इन इंडियन पॉलिटिक्स'', 1972, पृष्ठ 51
25. हरिजन, अप्रेल 15, 1933, पृष्ठ 8
26. त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', विश्वभारती पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2013, पृष्ठ 397
27. वही, पृष्ठ 398
28. रे जेवन्त कुमार, ''स्टडीज इन पॉलिटिक्स थॉट'', पृष्ठ 78
29. पॉल एफ. पावर, ''द मिनिंग ऑफ गाँधी'', पृष्ठ 165
30. गाँधी एम. के., ''बारदोली ऑन ट्रायल'', यंग इंडिया, मई 31, 1948
31. पेयर रोबट, ''द लाईफ एण्ड डेथ ऑफ महात्मा गाँधी'', पृष्ठ 557
32. त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', विश्वभारती पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2013, पृष्ठ 403
33. बोस एन. के., ''सलेक्शन फ्रॉम गाँधी'', 1948, पृष्ठ 313
34. चतुर्वेदी ललित, ''राजनीतिक विचारक कोश'', रितु पब्लिकेशन, जयपुर, 2013, पृष्ठ 107
35. वही
36. भाटिया डॉ. शोभा, शर्मा डॉ. अर्पणा, ''गाँधी वाणी'', पारिक बुक डिपो, जयपुर, 2010, पृष्ठ 80
37. आढ़ा डॉ. आर. एस., ''हमारे युग प्रवर्तक महापुरूष'', शिव बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ 141

38. वही पृष्ठ 142
39. धवन जी.एन., ''द पॉलिटिकल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गाँधी'', पृष्ठ 86
40. बहरवाल मनोज कुमार, ''भारतीय राजनीतिक चिन्तक'', हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर, 2014, पृष्ठ 426
41. हरिजन, अगस्त 22, 1940, पृष्ठ 260–261
42. बहरवाल मनोज कुमार, ''भारतीय राजनीतिक चिन्तक'', हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर, 2014, पृष्ठ 426
43. त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', विश्वभारती पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2013, पृष्ठ 427
44. भाटिया डॉ. शोभा, शर्मा डॉ. अर्पणा, ''गाँधी वाणी'', पारिक बुक डिपो, जयपुर, 2010, पृष्ठ 25
45. लाल प्रो. रमन बिहारी, पलोड़ सुनीता, ''शैक्षिक चिन्तन एवं प्रयोग'', आर. लाल बुक डिपो, मेरठ, पृष्ठ 374
46. हरिजन, जुलाई 31,1937
47. वर्मा डॉ. रामपाल सिंह, ''शिक्षा एवं भारतीय समाज'', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृष्ठ 239
48. वही, पृष्ठ 240–241
49. मुकालेल जोसेफ सी., ''गाँधीयन एज्यूकेशन'', डिस्कवरी पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 166
50. महात्मा गाँधी का शिक्षा दर्शन, विकीपीडिया
51. ''देशबन्धु'', ऑनलाईन न्यूज पोर्टल, नवम्बर 23, 2012

*****

चतुर्थ अध्याय

गाँधीजी का अहिंसा दर्शन

चतुर्थ अध्याय

गाँधीजी का अहिंसा दर्शन

अहिंसा से तात्पर्य

शाब्दिक रूप से अहिंसा शब्द अ+हिंसा के योग से बना है। अतः अहिंसा का शाब्दिक या सामान्य अर्थ है– जो हिंसा न हो। इस प्रकार किसी की हत्या न करना या किसी प्राणी को कष्ट न पहुंचाना अहिंसा है, जबकि हिंसा का अर्थ इसके ठीक विपरीत यानी किसी की हत्या करना या किसी प्राणी को कष्ट पहुंचाना है। हिंसा में 'अ' उपसर्ग के जोड़ देने से इसका अर्थ बिल्कुल बदल जाता है। सामान्य अर्थ में हिंसा किसी भी जीव के प्राण हरण या उसे किसी प्रकार का कष्ट देना है। किन्तु, इस अर्थ में पूर्ण अहिंसा प्रायः असंभव ही है, क्योंकि हमारा जीवन ही किसी न किसी रूप में हिंसा पर आधारित है।[1]

व्यापक अर्थ में अहिंसा को किसी भी प्राणी को तन, मन, कर्म, वचन और वाणी से नुकसान नहीं पहुंचाने के अर्थ में देखा जाता है। मन में किसी का अहित न सोचना, किसी को कटुवाणी से नुकसान न पहुंचाना तथा कर्म से भी किसी भी प्राणी की हिंसा न करना, यह अहिंसा है।

अहिंसा शब्द देखने से अभावात्मक प्रतीत होता है, परंतु यह वास्तव में भावात्मक पद है। हिंसा और अहिंसा व्यघातक पद है। अतः एक के अस्तित्व मात्र से ही दूसरे का अर्थ बोध हो जाता है। यद्यपि यह अभावात्मक पद है फिर भी इसे धर्म मानकर उपनिषद, श्रुति, बौद्ध एवं जैन वाङ्मय में प्रतिष्ठित स्थान मिला है।

अहिंसा परमो धर्मः के प्रणेता भगवान बुद्ध एवं महावीर स्वामी हमारे देश की उन महान् विभूतियों में से हुए है जिन्होनें अपने जीवन दर्शन को अहिंसा के साथ बांध दिया। यद्यपि अहिंसा के स्थान पर इसके भावात्मक अर्थ प्रेम को लिया जा सकता है। किंतु, यह शब्द अधिक लचीला प्रतीत होता है। प्रेम के

अंतर्गत अहिंसा के अलावा कई गुण आ जाते है, इसलिये ही प्रेम पद को न स्वीकार कर अहिंसा पद को ही मान्यता दी गई है।

अहिंसा का इतिहास

- **हिन्दू शास्त्रों में अहिंसा**

अहिंसा शब्द का प्रयोग प्राचीन काल से ही चला आ रहा है। यह कोई नया शब्द नहीं है। उपनिषद और मनुस्मृति के अनुसार अहिंसा का अर्थ साधारणतः किसी प्राणी को कष्ट नहीं पहुंचाना या किसी का प्राण नहीं लेना है।[2]

हिन्दू शास्त्रों की दृष्टि से 'अहिंसा' का अर्थ है सर्वथा तथा सर्वदा (मनसा, वाचा, कर्मणा) सब प्राणियों के साथ द्रोह का अभाव। (अहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतनामनभिद्रोहः—व्यासभाष्य, योगसूत्र 2/30)। अहिंसा के भीतर इस प्रकार सर्वकाल में केवल कर्म या वचन से ही सब जीवों के साथ द्रोह न करने की बात समाविष्ट नहीं होती, प्रत्युत मन के द्वारा भी द्रोह के अभाव का संबंध रहता है।

योग शास्त्र में निर्दिष्ट यम तथा नियम अहिंसा मूलक ही माने जाते है। यदि उनके द्वारा किसी प्रकार की हिंसावृत्ति का उदय होता है तो वे साधना की सिद्धि में उपादेय तथा उपकार नहीं माने जाते। सत्य की महिमा तथा श्रेष्ठता सर्वत्र प्रतिपादित की गई है, परंतु यदि कहीं अहिंसा के साथ सत्य का संघर्ष घटित होता है तो वहां सत्य वस्तुतः सत्य न होकर सत्याभास ही माना जाता है। कोई वस्तु जैसी देखी गई हो तथा जैसी अनुमित हो उसको उसी रूप में वचन के द्वारा प्रकट करना तथा मन के द्वारा संकल्प करना ''सत्य'' कहलाता है, परंतु यह वाणी भी सब भूतों के उपकार के लिए प्रवृत्त होती है, भूतों के उपघात के लिए नहीं। इस प्रकार सत्य की भी कसौटी अहिंसा ही है। इस प्रसंग में वाचस्पति मिश्र ने ''सत्यतपा'' नामक तपस्वी के सत्य वचन को ही सत्याभास ही माना है। क्योंकि उसने चोरों के द्वारा पूछे जाने पर उस मार्ग से जाने वाले सार्थ (व्यापारियों का समूह) का सच्चा परिचय दिया था।

हिन्दू शास्त्रों में अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह इन पाँच यमों को जाति, देश, काल तथा समय से अविच्छिन्न होनें के कारण समभावेन सार्वभौम तथा महाव्रत कहा गया है।(योग सूत्र 2/31) और इनमें भी सबका आधार होने से, 'अहिंसा' ही सबसे अधिक महाव्रत कहलाने की योग्यता रखती है।

वैष्णव संतों ने भी अहिंसा धर्म को माना, परंतु इन्होनें अहिंसा को साधारण अर्थ में लिया है। इनकी अहिंसा निष्क्रिय एवं पलायनात्मक रही। अहिंसा का मनु का सिद्धांत अधिक लचीला है क्योंकि यज्ञ, आत्मरक्षा, आंतरिक सुरक्षा अथवा युद्ध आदि से मानववध क्षम्य एवं शामिल है। ऐसी परिस्थितियों में यदि मानववध कर भी दिया जाये तो यह पाप नहीं है। वे ऐसे नियम चाहते थे जो सर्वमान्य हो तथा जिनका पालन आसानी से हो जाये। इसी बात को ध्यान में रखते हुए अहिंसा के नियम बनाये गये।

- **मुस्लिम धर्म एवं अहिंसा**

पवित्र कुरान में सत्याग्रह का पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध है। कुरान में यद्यपि किन्ही निर्दिष्ट परिस्थितियों में हिंसा का सहारा लेने की इजाजत है परंतु खुदा को संयम ज्यादा प्यारा है और यहीं प्रेम का नियम है। यही सत्याग्रह है। हिंसा मानव दुर्बलता के प्रति एक रियायत है, सत्याग्रह एक कर्तव्य है। व्यावहारिक दृष्टि से भी देखा जाये तो हिंसा कोई भलाई नही पहुंचा सकती बल्कि बेहिसाब नुकसान ही पहुंचा सकती है।[3]

गाँधीजी कहते है, कुछ मुसलमान मित्र मुझे बताते है कि मुसलमान विशुद्ध अहिंसा का समर्थन कभी नहीं करेंगे। उनका कहना है कि मुसलमानों की दृष्टि में जितनी जरूरी अहिंसा है, उतनी ही जरूरी हिंसा भी है। इनमें से किसका प्रयोग किया जाये, यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है। दोनों की वैद्यता का औचित्य सिद्ध करने के लिये कुरान के प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। संसार ने युगों से इस मार्ग का अनुसरण किया है। संसार में विशुद्ध हिंसा जैसी कोई

चीज नहीं है लेकिन मैनें अनेक मुसलमान मित्रों से सुना है कि कुरान में अहिंसा के इस्तेमाल की सीख दी गई है। उसमें प्रतिशोध से सहिष्णुता को श्रेष्ठ बताया गया है। इस्लाम शब्द का अर्थ ही है शांति जिसका मतलब है 'अहिंसा'।[4]

- **जैन धर्म एवं अहिंसा**

जैन दृष्टि से सभी जीवों के प्रति संयमपूर्ण व्यवहार अहिंसा है। अहिंसा के पारिभाषिक अर्थ विध्यात्मक एवं निषेधात्मक दोनों है। रागद्वेषात्मक प्रवृत्ति न करना, प्राण वध न करना या प्रवृत्ति मात्र का विरोध करना निषेधात्मक अहिंसा है। सत्प्रवृत्ति, स्वाध्याय, अध्यात्मसेव, उपदेश, ज्ञानचर्चा आदि आत्म हितकारी व्यवहार विध्यात्मक अहिंसा है। संयमी व्यक्ति के द्वारा भी अशक्य कौटि का प्राण वध हो जाता है, वह भी निषेधात्मक अहिंसा हिंसा नहीं है। निषेधात्मक अहिंसा में केवल हिंसा का वर्णन होता है, जबकि विध्यात्मक अहिंसा में सत्क्रियात्मक सक्रियता होती है। हिंसा न करने वाला यदि आंतरिक प्रवृत्तियों को शुद्ध न करे तो वह अहिंसा नहीं होगी। व्यवहार में निषेधात्मक अहिंसा को निष्क्रिय अहिंसा और विध्यात्मक अहिंसा को सक्रिय अहिंसा कहा जाता है।

जैन ग्रंथ आचारांगसूत्र में, जिसका समय संभवतः तीसरी–चौथी शताब्दी ई.पू. है, अहिंसा का उपदेश इस प्रकार दिया गया है– भूत, भावी और वर्तमान के अर्हत् यही कहते है– किसी भी जीवित प्राणी को, किसी भी जन्तु को, किसी भी वस्तु को जिसमें आत्मा है, न मारो, न उससे अनुचित व्यवहार करो, न अपमानित करो, न कष्ट दो और न सताओ। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति ये सब अलग जीव है। सभी में भिन्न–भिन्न व्यक्तित्व के धारक अलग–अलग जीव है। इन स्थावर जीवों के अतिरिक्त जंगम प्राणी है, जिनमें चलने–फिरने का सामर्थ्य होता है। ये जीवों के छः वर्ग है। जंगम हो या स्थावर, सभी जीवों को दुःख अप्रिय होता है। यह समझकर मुमुक्षु सभी जीवों के प्रति अहिंसा का भाव रखे।[5]

सब जीव जीना चाहते है, मरना कोई नहीं चाहता। इसलिये निग्रंथ प्राणी वध का वर्जन करते है। आत्मा की अशुद्ध परिणति मात्र हिंसा है। इसका समर्थन करते हुए **आचार्य अमृत चंद्र ने लिखा है–** असत्य आदि सभी विकार आत्म परिणति को बिगाड़ने वाले है। इसलिये वे सब भी हिंसा है। संक्षेप में रागद्वैष का अप्रादुर्भाव अहिंसा और उनका प्रादुर्भाव हिंसा है। रागद्वैष रहित प्रवृत्ति से अशक्य कोटि का प्राणवध हो जाये तो भी नैश्चयिक हिंसा नहीं होती। रागद्वैष रहित प्रवृत्ति से, प्राणवध न होनें पर भी वह होती है। जो रागद्वैष की प्रवृत्ति करता है वह अपनी आत्मा का ही घात करता है। फिर चाहे दूसरे जीवों का घात करे या न करे। हिंसा से विरत न होना भी हिंसा है और हिंसा में परिणत होना भी हिंसा है।

- **बौद्ध एवं ईसाई धर्म तथा अहिंसा**

वैदिक हिंसात्मक यज्ञों का उपनिषदकालीन मनीषियों ने विरोध कर जिस परंपरा का आरंभ किया था, उसी परंपरा की पराकाष्ठा जैन और बौद्ध धर्मो ने की। बौद्ध अहिंसा निःसंदेह आस्था में जैनधर्म के समान महत्व की न थी, परन्तु उसका प्रभाव भी संसार पर अकूत पड़ा। उसी का यह परिणाम था कि रक्त और लूट के नाम पर दौड़ पड़ने वाली मध्य एशिया की विकराल जातियाँ प्रेम और दया की मूर्ति बन गई।

बौद्ध धर्म के प्रभाव से ईसाई भी अहिंसा के प्रति विशेष आकृष्ट हुए। ईसा ने जो आत्मोत्सर्ग किया वह प्रेम और अहिंसा का ही उदाहरण था। उन्होनें अपने हत्यारों तक कि सद्गति के लिए भगवान से प्रार्थना की और अपने अनुयायियों से स्पष्ट कहा है कि यदि कोई एक गाल पर प्रहार करे तो दूसरे को भी प्रहार स्वीकार करने के लिये आगे कर दो। यह हिंसा का प्रतिशोध नष्ट करने के लिये ही था। टॉलस्टाय और गाँधी ईसा के इस अहिंसात्मक आचरण से बहुत प्रभावित हुए।

अहिंसा के संबंध में पारंपरिक निषेधात्मक धारणा के अनुसार अहिंसा का अर्थ है–

1. किसी प्राणी की हत्या न करना।
2. किसी को शारीरिक क्षति या कष्ट न पहुँचाना।
3. किसी को मानसिक कष्ट न पहुँचाना।
4. किसी के प्रति अपने मन में द्वैष, घृणा अथवा द्रोह का भाव न रखना।

गाँधीजी एवं अहिंसा

अहिंसा के संबंध में गाँधीजी ने मध्यम मार्ग का अनुसरण किया। उनकी अहिंसा यदि एक ओर जैन मत की अतिवादी और कठोर अहिंसा है तथा दूसरी ओर मनु द्वारा प्रतिपादित कुछ अधिक लचीली परिभाषा वाली अहिंसा के मध्य में है।[6] व्यावहारिकता एवं मानवीयता के साथ गाँधीजी की अहिंसा में केवल बाह्य एवं स्थूल हिंसा का निषेध ही नहीं, बल्कि यह उच्च नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों पर टिकी है। हिंसा के विषय में वे मनु द्वारा दी गई छूट को स्वीकार नहीं करते। इसलिये उनका दृष्टिकोण टॉलस्टाय के समान है।[7] स्थूल रूप से अधिकांश लोग केवल किसी को न मारना ही अहिंसा समझते है, परंतु गाँधीजी के अनुसार यह केवल आंशिक अर्थ है। उनकी अहिंसा में वैचारिक सावधानी भी नितांत आवश्यक है। वाणी एवं संवेगों को भी नियंत्रित करना अनिवार्य है। जीवन की आवश्यकताओं में संयम रखना अपेक्षित है। इस प्रकार गाँधीजी की अहिंसा की अवधारणा मन, वचन और कर्म से संबंधित है।[8]

गाँधीजी के अनुसार अहिंसा मानव का प्राकृतिक गुण है। मनुष्य प्राकृतिक रूप से या स्वभावतः अहिंसा प्रिय है। परिस्थितियों के कारण ही वह हिंसक बनता है। मनुष्य आदिकाल में नरभक्षी था लेकिन धीरे–धीरे वह सुसभ्य एवं सुसंस्कृत बना। मानव की अहिंसक प्रवृत्ति का विकास हुआ है। इसी कारण मानव जाति का भी विकास हुआ है।[9]

गाँधीजी ने कहा कि अहिंसा के आधार पर ही सुव्यवस्थित समाज की स्थापना व मानव प्रगति निर्भर है। अहिंसा समस्त जीवों का शाश्वत नियम है।

अहिंसा समस्त शक्तियों से अधिक शक्तिशाली है। यह आत्मिक एवं आध्यात्मिक शक्ति का रूप है। अहिंसा में कठोर से कठोर दृश्य को पिघलानें की शक्ति है। यह विद्युत से अधिक निश्चयात्मक और ईथर से भी अधिक शक्तिशाली है।[10]

गाँधीजी मानव समाज पर अत्याचार करने वालो एवं अन्य विरोधियों को बलपूर्वक समाप्त कर देने को उचित नहीं समझते। क्योंकि उनका मत था कि बुरे से बुरे मनुष्य का भी सुधार होने की संभावना होती है। अहिंसा का अर्थ अन्याय व अत्याचार के प्रति उदासीन बने रहना नहीं, वरन् उनका सक्रिय किंतु शांतिपूर्ण विरोध करना है। अहिंसावादी अपने प्रतिद्वंदी के अनुचित कार्यो का विरोध अवश्य करता है, परंतु ऐसा करते हुए भी वह अपने प्रतिद्वंदी से उसी प्रकार प्रेम रखता है, जिस प्रकार अनुचित कार्य करने वाले पुत्र का पिता यह प्रयत्न करते हुए भी कि पुत्र अनुचित कार्य करना छोड़ दे, उससे स्नेह बनाए रखता है। वह अपने प्रतिद्वंदी की अच्छाई को स्वीकार करने व उसके अपराध को क्षमा करने के लिये सदा तैयार रहता है। वह बुराई से घृणा करता है, बुराई करने वाले से नहीं।[11]

विश्व मे अहिंसा की विचारधारा कई वर्ष पुरानी है। परंतु गाँधीजी का अहिंसा दर्शन एक नवीन मौलिक दर्शन है। क्योंकि गाँधीजी की अहिंसा में व्यावहारिकता समाहित है। उन्होनें अहिंसा संबंधी केवल विचार ही प्रस्तुत नहीं किए बल्कि अहिंसा का प्रयोग स्वयं अपने जीवन में किया और संपूर्ण देश का इस सिद्धांत के साथ तादात्म्य करवाया।

उन्होनें अपने जीवन की प्रयोगशाला में अहिंसा का निरंतर परीक्षण किया। अहिंसा को व्यावहारिक बनाकर इसकी पुरातन अर्थो की सीमाओं का विस्तार किया। उसके वैयक्तिक तत्व में सामाजिकता का समावेश कर उसके निष्क्रिय एवं सैद्धांतिक पक्ष को अत्यंत सक्रिय बना दिया। पहले अहिंसा का प्रयोग व्यक्तिगत साधना तथा राजनीति के लिये किया जाता था, किंतु गाँधीजी ने ही सर्वप्रथम इसे समाज की साधना का अर्थात् समष्टि की साधना का अंग बना दिया। उन्होनें कहा कि, अहिंसा सभी धर्मो का तार्किक पूर्वाधार है।

गाँधीजी के अनुसार अहिंसा केवल व्यक्तिगत सद्गुण ही नहीं है, अपितु यह एक सामाजिक सद्गुण भी है। समाज का नियमन लोगों के आपसी व्यवहार में अहिंसा के प्रकट होने से होता है।[12]

प्राचीन काल में अहिंसा का क्षैत्र बहुत सीमित था। अहिंसा को केवल संत–महात्माओं तक ही सीमित माना गया था। सर्वप्रथम गाँधीजी ने अहिंसा को समष्टि के द्वारा समाज के साधनों का अंग बना दिया। उन्होनें अपनी कार्यप्रणाली के द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि व्यष्टि स्तर पर यदि अहिंसा व्यक्ति के जीवन में द्वेष और घृणा को समाप्त करने और प्रेम स्वरूप परमात्मा को प्राप्त करने के लिए यदि निष्ठा का पर्याय बन सकती है, तो समष्टि स्तर पर समाज और देश की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक पराधीनता जैसी विकट समस्याओं के समाधान में भी अहिंसा से सहायता ली जा सकती है।

अहिंसा महानतम विधेयात्मक शक्ति है जो सृजनात्मक है और विश्व को संगठित एवं नियोजित करती है। यह दैनिक जीवन से लेकर सामाजिक उत्थान, सांस्कृतिक संवर्धन, आर्थिक सुधार, राजनीतिक परिशुद्धि, व्यक्तिगत शुद्धि, नैतिक उन्नयन, धार्मिक उत्थान आदि सभी जीवन क्षैत्रों में प्रयुक्त की जा सकती है। सभी प्रकार की अव्यवस्थाओं को सुव्यवस्थित रूप देने में अहिंसा सक्षम है।[13]

इस प्रकार गाँधीजी ने अहिंसा को प्राचीन संकीर्ण धारणाओं से निकालकर विस्तृत रूप प्रदान किया। इसे व्यावहारिक रूप प्रदान किया। उन्होनें अहिंसा को अध्यात्म एवं व्यावहारिक दोनों जीवनों के लिये आवश्यक माना। इसीलिये गाँधीजी की अहिंसा संबंधी मान्यताओं को प्रगतिशील कहा गया है।

अहिंसा के रूप

गाँधीजी के अनुसार अहिंसा सर्वोच्च, नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति की प्रतीक है। व्यवहार के धरातल पर अहिंसा निम्न रूपों में अभिव्यक्त होती है :–

- **जाग्रत अहिंसा** – यह अहिंसा का सर्वोत्कृष्ट रूप है। यह व्यक्ति की अंतर्रात्मा की पुकार पर स्वाभाविक रूप से जन्म लेती है। इसे व्यक्ति अपने आंतरिक विचारों की उत्कृष्टता तथा नैतिकता के कारण स्वीकार करता है। यह असंभव को भी संभव बना सकती है। इस अहिंसा का प्रयोग साधन संपन्न और बहादुर व्यक्ति लाचारी, विवशता या भय के कारण नहीं, अपितु नैतिक मूल्यों में दृढ़ आस्था के कारण करते है। अतः यह वीरों या बहादुरों की अहिंसा है।[14] इस अहिंसा में आवश्यकता या नीति इतनी महत्वपूर्ण नहीं होती जितना आंतरिक विश्वास। यह अहिंसा जीवन के सभी क्षैत्रों में लागू हो सकती है। इसकी न कोई सीमा है, और न कोई अपवाद। यह अहिंसा समूहों के बस की नहीं है। इसका पालन कुछ व्यक्ति ही कर सकते है। गाँधीजी ने इसे 'परम् पुरूषार्थ' एवं 'वीरों का धर्म' कहा है। व्यक्ति में सच्ची अहिंसा आने के बाद वाणी से, आचार से, व्यवहार से अमृत झरने लगता है। संपूर्ण आत्म शुद्धि के प्रयत्न में मर–मिटना इस अहिंसा की शक्ति है।
- **औचित्यपूर्ण अथवा व्यावहारिक अहिंसा** – अहिंसा के इस स्वरूप को जीवन के किसी भी क्षैत्र में विशेष आवश्यकतानुसार एक नीति के रूप में स्वीकार किया जाता है। यह निर्बल एवं असहाय व्यक्तियों से संबंध रखती है। ऐसे व्यक्ति अहिंसा को नैतिक विश्वास एवं श्रद्धा के कारण स्वीकार नहीं करते, अपितु वे अपनी निर्बलता के कारण ही हिंसा का प्रयोग नहीं कर पाते है। यद्यपि यह अहिंसा दुर्बल व्यक्तियों की है, पर यदि इसका पालन ईमानदारी और दृढ़ता से किया जाए तो यह पर्याप्त शक्तिशाली और लाभदायक सिद्ध हो सकती है। गाँधीजी ने इस प्रकार की अहिंसा को निष्क्रिय प्रतिरोध कहा है।
- **कायरों की अहिंसा** – यह अहिंसा का सबसे हीन रूप है। यह अहिंसा भय या डर आधारित है। कायर व्यक्ति अहिंसा का दम इसलिये भरता है, क्योंकि वह कायर है। वह परिस्थिति का सामना करने की अपेक्षा भाग खड़ा होता

है। गाँधीजी कायरता के बिल्कुल पक्ष में नहीं थे। वे कायरता की अपेक्षा हिंसा को, यदि न्याय के लिए की गई हो, स्वीकार करने को तैयार थे। उनका मत था कि कायरता और अहिंसा आग और पानी की तरह एक साथ नहीं हो सकते।[15] यदि कायरता और हिंसा में से किसी एक को चुनना हो तो कायरता की बजाय हिंसा का चुनाव ठीक है।[16] गाँधीजी ने इसे निष्क्रिय अहिंसा की संज्ञा दी है।

गाँधीजी का अहिंसा का व्यावहारिक दृष्टिकोण

गाँधीजी बचपन से ही जैन अभिमत से प्रभावित थे, अतः वे मनु की अपेक्षा जैन दर्शन के अधिक निकट थे। किंतु उन्होनें जैन अतिवाद को स्वीकार नहीं किया। गाँधीजी स्वयं अपने को व्यावहारिक आदर्शवादी कहते थे, इसलिये गाँधीजी की अहिंसा कल्पना काफी लचीली है। एक ओर तो वे फसल को नष्ट करने वाले कीड़ों को बढ़ने देने के पक्ष में नहीं थे। वे नहीं चाहते थे कि कीड़े फसल को नष्ट करे और मानव जीवन असाध्य और दुर्वह बन जाए। ऐसे कीड़ों को नष्ट करने में वे कोई पाप नहीं समझते थे। किंतु दूसरी ओर वे अनावश्यक रूप से प्राणी को क्या, वनस्पति जीवन को भी नष्ट नहीं करना चाहते थे।

गाँधीजी के अनुसार, ''मेरी अहिंसा अपने ढंग की है। मैं जानवरों को न मारने का सिद्धांत पूरी तरह स्वीकार नहीं कर सकता। जो पशु मनुष्य को खा जाते है या नुकसान पहुँचाते है, उनकी जान बचाने की मुझमें कोई भावना नहीं है। उनकी वंशवृद्धि में सहायक होना मैं अनुचित मानता हूँ।''[17] अतः गाँधीजी जानवरों को न मारने का सिद्धांत पूरी तरह से स्वीकार नहीं करते थे। अपनी आत्मकथा में उन्होनें स्पष्ट किया है कि, ''पूर्ण अहिंसा में विश्वास करने वाले व्यक्ति के लिए व्यावहारिक जीवन भी धर्म संकट है। ज्ञात तथा अज्ञात रूप से स्थूल हिंसा किए बिना मनुष्य एक क्षण भी जी नहीं सकता, चाहे वह हमारा भोजन हो या जल ग्रहण या हमारा चलना या घूमना। इन सब में कुछ न कुछ हिंसा होती ही है।''[18]

हिंसा चाहे व्यावहारिक हो या मानसिक, वह सभी प्रकार से त्याज्य है। परंतु लोककल्याण की दृष्टि से कभी–कभी हिंसा का सहारा लेना पड़ता है। गाँधीजी परिस्थिति के अनुसार जीव–हत्या को भी स्वीकृत मानते है। उदाहरणार्थ यदि कोई पागल व्यक्ति नंगी तलवार हाथ में लेकर घूमता है और अकारण हीं व्यक्तियों की हत्या करता है, उसे कोई भी पकड़नें में असमर्थ हो तो उसकी हत्या कर देनी चाहिए। इसे उन्होनें एक कर्तव्य माना है। उन्ही के शब्दों में, जो व्यक्ति पागल हत्यारे की हत्या करेगा, उसे समुदाय की कृतज्ञता प्राप्त होगी।

अहिंसा का अधिष्ठान हमारा अन्तः स्थल होना चाहिए। इसके मूल में प्रेम और करूणा है। प्रेम और करूणा को हम आचरण में जितना स्थान देंगे, उतना ही अहिंसा का पालन कर सकते है, साथ ही नैतिक दृष्टि से भी ऊपर उठ सकते है। जिसका अपने अन्तःकरण से संबंध नहीं रहता, वह कभी नैतिक नहीं हो सकता है।

हिंसा का जन्म कायरता से होता है जबकि, अहिंसा हिम्मत से पैदा होती है। गाँधीजी ने यहाँ तक कहा कि, ''जहाँ केवल कायरता और हिंसा के बीच हीं चुनाव करना हो वहाँ मैं हिंसा चुनाव की सलाह दूँगा।''[19] अहिंसा और कायरता का कोई मेल नही। उन्होनें कहा, मैं पूरी तरह शस्त्रसज्जित मनुष्य के हृदय से कायर होने की कल्पना कर सकता हूँ। हथियार रखना कायरता नही तो कुछ डर होना तो जाहिर करता ही है, परंतु सच्ची अहिंसा शुद्ध निर्भयता के बिना असंभव है।

अहिंसा की आवश्यकताएँ

- **सत्य –** सत्य अहिंसा का मूल तत्व है। **गाँधीजी के शब्दों में,** ''सत्य एक ऐसा प्रभुसत्तात्मक सिद्धांत है जिसमें कई अन्य सिद्धांत सम्मिलित है। यह सत्य मात्र शब्दों की ही सत्यता नहीं है, किंतु विचारों की भी और इसके अतिरिक्त वह न केवल हमारे परिज्ञान की अपेक्षा में सत्य हो, वरन्

संपूर्ण सत्य जो कि 'ईश्वर' है।''[20] **हॉरेस ने ठीक ही कहा है,** ''सत्य तथा अहिंसा यह दो शब्द गाँधीवाद के ध्वज पर उज्ज्वल रूपेण अंकित प्रेरणात्मक शब्द है। स्वयं गाँधीजी की सार्वजनिक जीवनावधि में यह उनके लिये प्रेरणात्मक रहे है।[21]

- **आंतरिक शुद्धता** – अहिंसा में सच्चा विश्वास रखने वाले व्यक्ति से यह आशा भी की जाती है कि वह आंतरिक शुद्धता का भी पालन करे। क्योंकि अहिंसा की लड़ाई एक तपस्वी की लड़ाई है, अतः इसे छेड़ने वाले को अपने आपको आत्मानुशासन, शालीनता तथा पवित्रता के लिए तैयार करना चाहिए। गाँधीजी के शब्दों में, ''ब्रह्मचर्य सबसे बड़े अनुशासनों में से एक ऐसा अनुशासन है जिसके बिना मन में पूरी दृढ़ता नहीं आती।[22]
- **उपवास** – उपवास आंतरिक शुद्धता का साधन है तथा एक राष्ट्रीय आंदोलन मे राष्ट्रीय पश्चाताप का साधन है। गाँधीजी के अनुसार एक विशुद्ध उपवास शरीर, मन तथा आत्मा को भी शुद्ध कर देता है। यह शरीर का जिस सीमा तक दमन करता है, उस सीमा तक आत्मा को स्वतंत्र बना देता है। एक पूर्ण उपवास पूर्ण आत्मत्याग भी है। यह एक अहिंसक सैनिक का सशक्त हथियार है।[23]
- **निर्भीकता** – गाँधीजी ने कहा था, एक मात्र आश्वासन व्यक्तियों के निजी साहस में ढूँढना चाहिए। शेष सब कुछ उसी पर निर्भर है। व्यक्तिगत चरित्र की पूर्णता से और ईश्वर के अस्तित्व में गहन विश्वास से निर्भीकता प्राप्त की जा सकती है। अहिंसा का अर्थ है पूर्ण निर्भीकता। अहिंसा के लिये युद्ध के सैनिक से भी बड़े साहस की अपेक्षा होती है।[24]
- **अपरिग्रह** – अपरिग्रह का सिद्धांत विचारों पर भी उतना ही लागू हो सकता है जितना वस्तुओं पर। ऐसे विचार जो हमें ईश्वर की ओर प्रवृत्त नहीं करते या हमें ईश्वर से दूर ले जाते हैं, हमारे मार्ग में बाधाएँ बनते

है। मनुष्य मात्र के अंदर अपरिग्रह की प्रवृत्ति की रिक्तता उसकी भौतिक इच्छाओं की वृद्धि करती है जो हिंसा का कारण बनती है। अतः एक अहिंसक सिपाही से यह अपेक्षा की जाती है कि वह जीवन में एक उदासीन दृष्टिकोण अपनाए और जीवन के भौतिक पदार्थो के प्रति भी वह निस्संग रहे।

गाँधीवादी अहिंसा के लक्षण

- **अहिंसा कायरता नहीं है –**

गाँधीजी ने कहा, ''मेरा अहिंसा धर्म एक अत्यंत सक्रिय बल है। इसमें कायरता या दुर्बलता की गुंजाइश नहीं है। किसी हिंसक मनुष्य के किसी दिन अहिंसक बन जाने की आशा हो सकती है, मगर बुज़दिल के लिए ऐसी कोई आशा नहीं होती।''[25] अहिंसा तो वीरता की चरम सीमा होती है। उनके अपने अनुभव में, उन्हें हिंसा में विश्वास रखने वाले लोगों को अहिंसा की श्रेष्ठता सिद्ध करने में कोई कठिनाई नहीं हुई। अतः व्यक्ति का हृदय परिवर्तन कर उसे कायर से निडर बनाया जा सकता है। अहिंसा का मार्ग हिंसा के मार्ग की तुलना में कहीं ज्यादा साहस की अपेक्षा रखता है।[26]

वीर की अहिंसा को अपने आचरण में उतारने के इच्छुक व्यक्ति को कम–से–कम इतना तो करना ही होगा कि पहले अपनी कायरता से पिंड छुड़ाये और तब निर्भय होकर अपने कार्यकलापों का नियमन करे।

- **अहिंसा धनात्मक है –**

गाँधीजी की अहिंसा इस रूप में धनात्मक है कि एक संगठित अहिंसा से समाज परिष्कृत होता है, युद्ध को रोका जा सकता है और मानव संस्कृति को सुरम्य बनाया जा सकता है। वैरभाव का सर्वथा त्याग, दृढ़ता, वीरता, निश्छलता अहिंसा में होना आवश्यक है। ये ही तत्व अहिंसा के धनात्मक एवं सृजनात्मक पक्ष को प्रबल करते है।

- **अहिंसा मानव की मूल प्रकृति –**

मानव स्वभाव की मूल प्रकृति अहिंसक मानी गई है। परिस्थितिवश मानव का स्वभाव परिवर्तित होता रहता है। अहिंसा में दया एवं करूणा की भावना जाग्रत रहनी चाहिए। जहाँ दया नहीं, वहाँ अहिंसा नहीं। अतः यह कह सकते है कि जिसमें जितनी दया है, उसमें उतनी ही अहिंसा है। ईश्वर ने मनुष्य को जो शक्तियाँ प्रदान की है, अहिंसा उनमें प्रबलतम है।

- **अहिंसा में घृणा वर्जित है –**

गाँधीजी के अनुसार सच्चा अहिंसक वही है जो हिंसा के विरूद्ध भी हिंसा नहीं करता। वह हँसते–हँसते पीड़ा सहते रहने की स्थिति में भी अन्यायी से घृणा नहीं करता और न ही उससे प्रतिशोध की बात मन में लाता है। उस समय भी वह आततायी में सुधार कर उसके हित की बात सोचता है। उसके व्यवहार में घृणा का भाव नही होना चाहिए, क्योंकि यदि घृणा का समावेश हुआ तो स्वाभाविक रूप से उसमें हिंसा भी आ जाएगी।[27] घृणा निम्नतम कोटि की अहिंसा है। हम अपने अंदर घृणा रखते हुए अहिंसक नहीं बन सकते।

- **अहिंसा एवं प्रेम –**

गाँधीजी की अहिंसा सकारात्मक रूप में प्रेम से संबंधित है।[28] प्रेम अहिंसा को जीवन देता है। अहिंसा प्रेम में पनपती और बढ़ती है।[29] गाँधीजी का दृढ़ विश्वास है कि विश्व का संचालन प्रेम द्वारा होता है। आकर्षण पर आधारित विश्व की संयोगात्मक शक्ति का नाम ही प्रेम है तथा यही अहिंसा की प्रेरक शक्ति है। प्रेम ही जीवन तथा घृणा ही विनाश है।

भावात्मक रूप में अहिंसा को प्रेम माना जाता है। गाँधीजी की अहिंसा के मूल में प्रेम और अपनत्व विद्यमान है। बिना अहिंसा के मन निर्मल नहीं हो सकता। अहिंसा के अभाव में आत्मशुद्धि संभव नहीं है।

आत्मा की शुद्धि जो प्रेम और अहिंसा से संभव है, के द्वारा ही परमात्मा के दर्शन हो सकते है।[30]

- **अहिंसा से हृदय परिवर्तन संभव –**

गाँधीजी की मान्यता थी कि अपने कार्यो से दूसरों के हृदय पर विजय पाई जाए। उनके द्वारा संचालित अहिंसक सत्याग्रह हृदय परिवर्तन की स्पष्ट आकांक्षा है। इसके लिए सर्वप्रथम आत्मशुद्धि आवश्यक है, तत्पश्चात् ही हृदय परिवर्तन की बात करना सार्थक है।

अहिंसक व्यक्ति मानव मात्र को अपना बंधुत्व समर्पित करता है। परिणामस्वरूप उसे जीवन में घृणा की अनुभूति नहीं होती है। हृदय परिवर्तन किये बिना मनुष्य में व्याप्त आसुरी शक्ति का लोप नहीं हो सकता। वे यह मानते थे कि यदि दुनिया बैर से भरी होती तो इसका कभी का अंत हो गया होता। विश्व का आधार प्रेम है। सच्ची अहिंसा हृदय परिवर्तन की प्रक्रिया को सहज एवं सरल बना देती है।

- **अहिंसा एक शक्ति के रूप में –**

गाँधीजी अहिंसा को प्रचण्ड शस्त्र, परम् पुरूषार्थ, वीर पुरूष की शोभा, मानव की सर्वोच्च शक्ति और ईश्वर का पर्याय मानते है। अहिंसा शुष्क, नीरस और जड़ मस्तिष्क पदार्थ नहीं अपितु आत्मा का विशिष्ट गुण एवं सृजनात्मक चेतना है।[31]

अहिंसा अपरिमेय शक्ति है, जिसे सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता। उनका विचार है कि पूर्ण अहिंसक व्यक्ति गुफा में बैठा हुआ भी संपूर्ण जगत को हिला सकता है, बशर्ते कि इस विचार के पीछे पूर्ण एकाग्रता, पूर्ण सद्भाव और पूर्ण शुद्धि का भाव हो।[32]

अहिंसा चेतन शक्ति है, क्योंकि सत्य की उपलब्धि के साधन के रूप में प्रतिष्ठित सर्वोच्च शक्ति जड़ नहीं हो सकती। जड़ता आते ही उसका साधन रूप नहीं रह जाता। कोई भी शक्ति साधन का काम तभी कर

सकती है जब उसमें प्रेरक तत्व विद्यमान रहते है। प्रेम अहिंसा की प्रेरक शक्ति है।[33] अपनी गत्यात्मक स्थिति में, अहिंसा का अर्थ है, सचेतन कष्ट सहन।

संघर्ष की शक्ति के रूप में अहिंसा प्रतिकार की अपेक्षा दुष्ट के विरूद्ध संघर्ष करने का ही कहीं ज्यादा सक्रिय और सबल साधन है। प्रतिकार की प्रकृति तो दुष्टता में वृद्धि करने की है। इसलिये अनैतिकता को मानसिक और नैतिक विरोध से समाप्त किया जा सकता है। गाँधीजी ने कहा, मैं अत्याचारी के विरूद्ध जो आत्मिक प्रतिरोध करूंगा उससे वह भ्रांत हो जाएगा। मेरा आत्मिक प्रतिरोध पहले तो उसे चकित कर देगा, पर अंततः वह उसका लोहा मान लेगा। ऐसा करने से उसकी अवमानना नहीं होगी, बल्कि उत्थान होगा।[34]

अहिंसा मानवता की सर्वोच्च शक्ति है। मानवीय आत्मा की यह सर्वोच्च शक्ति दुर्बल से दुर्बल शरीर में भी अर्जित की जा सकती है।[35] मनुष्य ने अपनी होशियारी से विनाश के जो शक्तिशाली अस्त्र–शस्त्र बनाए है, अहिंसा उनसे भी अधिक शक्तिशाली है। विनाश मनुष्यों का नियम नहीं है। मनुष्य कभी अपने भाई को मारकर नहीं, बल्कि जरूरत पड़े तो उसके हाथों मरने के लिये तैयार रहकर आजादी से जीता है। प्रत्येक कत्ल अथवा दूसरे को पहुँचाई गई चोट, वह चाहे जिस कारण से हो, मानवता के प्रति अपराध है।[36]

अहिंसा शस्त्रबल की तुलना में अधिक वेगीय शक्ति है। हथियारबंद सिपाही अपनी ताकत के लिये अपने हथियार पर निर्भर रहता है। उससे उसका हथियार बंदूक या तलवार छीन लो तो वह बेबस हो जाता है। लेकिन जिस व्यक्ति ने अहिंसा के सिद्धांत को ही सही अर्थ में हृदयंगम कर लिया है, उसका हथियार ईश्वर प्रदत्त शक्ति होती है, जिसके तोड़ का हथियार दुनिया के पास आज तक नहीं है।[37] अहिंसा के अपने जीवन

ध्येय में अदम्य आस्था से प्रेरित दृढ़ संकल्प वाले मुठ्ठीभर लोग इतिहास का रूख बदल सकते है।

अहिंसा जीवन की अनुशासनात्मक शक्ति है। गाँधीजी के अनुसार संपूर्ण अनुशासनों की जड़ व्यक्तिगत अनुशासन है। जब तक कोई भी व्यक्ति स्वयं अनुशासन या नियम पालन में नहीं बंध जाता, तब तक उसे दूसरे से वैसा कराने की आशा करना व्यर्थ है।[38] अनुशासन का पालन तभी हो सकता है, जब मनुष्य का उस काम में अनुराग हो जिसमें वह लगा हुआ है। इसके बिना अनुशासन अनुकरण मात्र होगा।

- **अहिंसा एक विज्ञान के रूप में –**

गाँधीजी का मानना है कि अहिंसा एक विज्ञान है। विज्ञान के शब्दकोश में 'असफलता' का कोई स्थान नहीं होता। अपेक्षित परिणाम को प्राप्त करने की असफलता प्रायः नई खोजों की पूर्वगामी सिद्ध होती है।[39] अगर हिंसा का काम अपने सामने पड़ने वाली हर चीज का भक्षण है, तो अहिंसा का काम हिंसा के मुँह को भर देना है। अहिंसा के वातावरण में व्यक्ति अपनी अहिंसा की परख करने का अवसर नहीं पा सकता। इसकी परख तो हिंसा के माहौल में ही की जा सकती है।[40]

हिंसा का जवाब अहिंसा से देने में महसूस की जाने वाली कठिनाई चित्त की दुर्बलता के कारण पैदा होती है।[41] पाप से घृणा करो, पापी से नहीं, एक ऐसा नीतिवचन है जिसे समझना तो काफी आसान है, पर जिस पर आचरण शायद ही कभी किया जाता है। इसलिये दुनिया में घृणा का विष फैलता जा रहा है।

अहिंसा सत्य की शोध का आधार है। वास्तव में, सत्य की शोध तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि उसका आधार अहिंसा न हो।[42]

➢ **अहिंसा सत्य का मार्ग है –**

गाँधीजी ने सत्य और अहिंसा में घनिष्ठ संबंध बताया। दोनों को एक सिक्के के दो पहलू माना है। उनके अनुसार अहिंसा का मार्ग ही सत्य का मार्ग है। अहिंसा के बिना सत्य का साक्षात्कार संभव नहीं है। ब्रह्मचर्य, अस्तेय आदि भी अहिंसा के अंतर्गत है। ये अहिंसा को सिद्ध करने वाले है। उनका कहना है सत्य न बोलना ही अच्छा है, यदि कोई अहिंसक तरीके से नहीं बोल सकता।

गाँधीजी ने सत्य को ही ईश्वर माना है। अतः मनुष्य का लक्ष्य है ईश्वर साक्षात्कार इसलिये मनुष्य का हर कार्य सत्य की प्राप्ति के लिये होता है। सत्य की खोज अहिंसा के बिना असंभव है। सत्य लक्ष्य है और अहिंसा साधन है। अहिंसा के बिना सत्य वास्तविक सत्य नहीं है बल्कि वह असत्य है।[43]

गाँधीजी के विचार से दुनिया में सत्य और अहिंसा से बढ़कर कोई ताकत नहीं है। उसके मुकाबले अणुबम कोई चीज नहीं है। एक नैतिक और आध्यात्मिक ताकत है, दूसरी शारीरिक और भौतिक ताकत। इन दोनों ताकतों के बीच जमीन–आसमान का फर्क है। एक में आत्मा की अथाह शक्ति मौजूद है, जबकि दूसरी स्वभाव से ही नाशवान है। आत्मा की शक्ति हमेशा आगे बढ़ाने वाली एवं अनंत है। जब इस शक्ति का पूरा उदय होता है, तो यह संसार में अजेय बन जाती है।[44] गाँधीजी का कहना है, मेरी अहिंसा लूली नहीं, दुर्बल भी नही, वह सबसे बढ़ी–चढ़ी चीज है। क्योंकि जहाँ अहिंसा है वहाँ सच है और सच तो परमेश्वर है। जहाँ वह है सब खैर ही है। यानि वहाँ सबके लिए एक सा न्याय ही है। दुनिया के जिस हिस्से में अहिंसा का सिक्का चलेगा वहीं परम् शांति और परम् सुख होगा।

अतः गाँधीजी ने वर्तमान विश्व में मिथ्या धारणाओं को परखने का आधार सत्य–अहिंसा को माना है। यही विश्व कल्याण का उचित मार्ग है।

➢ **अहिंसा दिखावा मात्र नहीं –**

गाँधीजी के अनुसार कोई मनुष्य यदि अपने दायरे में अहिंसक रहे और उसके बाहर हिंसा का आचरण करे, तो मानिये कि वह अपने दायरे में भी सच्ची अहिंसा का आचरण नहीं कर रहा, उसकी अहिंसा दिखावे की है। इसी प्रकार यदि कोई मनुष्य दूसरों के साथ अपने व्यक्तिगत संबंधों में अहिंसा का व्यवहार न करे, और उसका इस्तेमाल बड़े मसलों में करने की आशा करे तो यह उसकी भूल है।

पारस्परिक सहिष्णुता अहिंसा है। इसलिये आपको जैसै ही इस बात की प्रतीती हो जाये कि अहिंसा जीवन का नियम है, उसे उन पर आजमाना चाहिए जो आपके प्रति हिंसक व्यवहार कर रहे है, और यह नियम जिस प्रकार व्यक्तियों पर लागू होता है, उसी प्रकार राष्ट्रों पर भी लागू होता है।[45]

➢ **अहिंसा सार्वभौमिक है –**

गाँधीजी का विश्वास था कि अहिंसा धर्म का रूप तभी ले सकती है जब वह सर्वव्यापी हो। यह नहीं हो सकता कि हम अपने एक काम में तो अहिंसक रहे और दूसरे में हिंसक बन जाये। यह कहना सरासर गलत है कि अहिंसा का आचरण केवल व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है, राष्ट्रों द्वारा कभी नहीं, जो कि व्यक्तियों के समूह ही है।[46]

गाँधीजी अदम्य आशावादी थे। उनका आशावाद इस विश्वास पर टिका था कि व्यक्ति द्वारा अहिंसा के विकास की संभावनाएँ असीम है। उनका कहना है कि आप अपने जीवन में इसका जितना अधिक विकास करेंगे, उतना ही संक्रामक रूप लेकर यह आपके परिवेश को व्याप्त कर लेगी और हो सकता है कि शनैः शनैः सारी दुनिया पर छा जाए।[47]

गाँधीजी का कहना है कि, ''यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम बड़े पैमाने पर वीर की अहिंसा से परिचित नहीं है। लोगों को, बड़े जन–समूहों की

बात तो छोड़िये, छोटे–छोटे वर्गो द्वारा अहिंसा के प्रयोग के विषय में भी संदेह है। वे अहिंसा के व्यवहार को असाधारण व्यक्तियों तक सीमित मानते है। यदि यह केवल व्यक्तियों के लिए ही सुरक्षित है तो फिर, संपूर्ण मानव जाति के लिए इसका क्या उपयोग है ?[48]

आज विश्व में गाँधीजी और उनके विचारों को बहुत तेजी से उन लोगों द्वारा भी मान्यता दी जा रही है, जो पहले उन्हें कोई महत्व नहीं देते थे। उदाहरण के लिये कुछ वर्ष पहले ही पूर्व सोवियत संघ के नेता गोर्बाच्योव और स्व. राजीव गाँधी ने 'दिल्ली घोषणा' पर हस्ताक्षर किए। लोग गाँधीजी की इस विचारधारा से प्रभावित थे। इस घोषणा में दुनिया में अहिंसक वातावरण तैयार करने की बात पर जोर दिया गया और हिंसा के द्वारा विश्व की समस्याओं के समाधान की प्रवृत्ति को निरर्थक बताया गया। जो बात आज से कई वर्षो पूर्व महात्मा गाँधी ने की थी, उसे लोग आज कह रहे हैं।[49]

- **अहिंसा : अहिंसक समाज की निर्माता है –**

गाँधीजी ने कहा था, सभी सुविकसित समाज अहिंसा के कानून पर आधारित है। इसी नियम के तहत कोई भी सुव्यवस्थित समाज समझदार बन सकता है और जीवन सार्थक कहा जा सकता है। जहाँ भी आपका मुकाबला अपने प्रतिद्वंदी से हो, उसे प्यार से जीतिए।[50]

गाँधीजी की दृष्टि में अहिंसा केवल व्यक्तिगत सद्गुण ही नहीं अपितु एक सामाजिक सद्गुण भी है, जिसका विकास अन्य सद्गुणों की तरह ही किया जाना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि पारस्परिक व्यवहार में समाज प्रायः अहिंसा की अभिव्यक्ति से ही संचालित होता है। इसीलिये उनका कहना है कि इसका और बड़े पैमाने राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय पर विस्तार किया जाना चाहिए।[51]

➢ **अहिंसा : विशुद्ध लोकतंत्र का मार्ग –**

गाँधीजी का दृढ़ अभिमत था कि युद्ध का विज्ञान हमें विशुद्ध तानाशाही की ओर ले जाता है। अहिंसा का विज्ञान ही शुद्ध लोकतंत्र की ओर ले जा सकता है। गाँधीजी संसदात्मक लोकतंत्र के पक्ष में थे किंतु वे इसे आधुनिक अर्थो में प्रयुक्त करना चाहते थे। उनके अनुसार, लोकतंत्र का अर्थ है मिलावट विहीन अहिंसा का शासन।[52]

उनका कहना था कि लोकतंत्र और हिंसा साथ–साथ नहीं चल सकते। जो राज्य आज कहने के लिए लोकतंत्र है उन्हें या तो खुलकर सर्वसत्तात्मक बन जाना होगा या अगर वे सच्चे लोकतांत्रिक बनना चाहते है तो साहसपूर्वक अहिंसक रूप अपनाना होगा।[53]

गाँधीजी अपनी शक्ति अहिंसा को जीवनभर व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय के नियम को प्रचारित करने में लगे रहे। उनके विचारों के संबंध में **रजनी कोठारी ने लिखा है**, लोकतंत्रात्मक भावना पाये जाने पर ही युवा एवं समाजसेवी वर्ग गाँवों, अल्पसंख्यकों तथा दूसरे निर्धन समूहों की सेवा करने के लिए प्रेरित हो सकते है, उसे सर्वोदय भावना कहा जा सकता है।[54] गाँधीजी प्रजातंत्र में विश्वास रखते थे, लेकिन वे इस पर पश्चिमी परंपराओं द्वारा लगाई गई सीमाओं को तोड़ने के हक में थे। उनका मानना था कि प्रजातंत्र को बहुमत के हितों का संरक्षक होने के बजाय गरीबों और शोषितों की सेवा करनी चाहिए।

➢ **अहिंसा : स्वराज का आधार –**

गाँधीजी की दृष्टि में स्वराज सत्य, अहिंसा का ही भाग है। सत्य स्वयं ईश्वर है एवं अहिंसा उसकी प्राप्ति का साधन। ऐसा मान लेने पर स्वराज आत्म–साक्षात्कार का पर्याय बन जाता है और आत्म–साक्षात्कार आत्मानुशासन के बिना संभव नहीं है। स्वराज व्यक्ति की आंतरिक शक्ति

पर निर्भर करता है। ऐसी शक्ति बड़ी से बड़ी कठिनाईयों का सामना करने के लिये व्यक्ति को समर्थ बनाती है। वह शक्ति है अहिंसा।[55]

गाँधीजी की राय में अहिंसक स्वराज की कुछ अपेक्षाएं है–

1. अहिंसा पर आधारित स्वराज में, लोगों को अपने अधिकारों की जानकारी रखने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि अपनें दायित्व को जानना आवश्यक है। प्रत्येक व्यक्ति से ही तद्नुरूप अधिकार जन्म लेता है, और वे ही अधिकार सच्चे है जो मनुष्य के सम्यक् कर्तव्यपालन से उत्पन्न होते है।
2. अहिंसा पर आधारित स्वराज में कोई किसी का शत्रु नहीं होता, प्रत्येक व्यक्ति सार्वजनिक हित के लिए अपने हिस्से का योगदान करता है।
3. अहिंसक स्वराज बल पर आधारित नहीं होता क्योंकि बल पर आधारित राज्य, बाह्य या आंतरिक अव्यवस्था की ताकतों का अहिंसक तरीके से मुकाबला नहीं कर सकता। मनुष्य ईश्वर और धन लिप्सा की पूजा साथ–साथ नहीं कर सकता।[56] अतः यह दावा किया जाता है कि राज्य का अहिंसा पर आधारित होना संभव है अर्थात् वह सैन्यबल पर आधारित किसी विश्व गुटबन्दी के विरूद्ध अहिंसक प्रतिरोधक का आश्रय ले सकता है।
4. किसी हिंसा पर आधारित राष्ट्र का अहिंसक स्वराज में तब्दील होना संभव है। यदि ऐसा कोई देश अहिंसा की अभिव्यक्ति करना चाहे तो उसे अपनी समस्त हिंसक शक्ति का त्याग करना होगा।[57] जो बात सही है वह यह है कि जो राष्ट्र कभी सैनिक दृष्टि से प्रबल रहे है, वे यदि अपना मन बदल लें तो ये दुनिया और अपने विरोधियों के समक्ष अहिंसा का प्रदर्शन ज्यादा बेहतर ढंग से कर सकते है।

➢ **राज्य शक्ति का अहिंसात्मक संतुलन : न्यासिता**

गाँधीजी को विश्वास था कि यदि राज्य ने हिंसा का प्रयोग करके पूँजीवाद का दमन करना चाहा तो वह हिंसा के शिकंजे में स्वयं फंस जायेगा और कभी अहिंसा का विकास नहीं कर पायेगा। राज्य संकेंद्रित और संगठित रूप में हिंसा का प्रतिनिधित्व करता है।

अहिंसा को प्रोत्साहित करने हेतु न्यासिता की भावना बढ़ानें के क्रम में गाँधीजी ने कहा है कि, ''मैं व्यक्तिगत रूप से इस बात को तरजीह दूँगा कि राज्य के हाथों में शक्ति के केंद्रीकरण के बजाय न्यासिता की भावना का विस्तार किया जाए क्योंकि, मेरी सम्मति में निजी स्वामित्व की हिंसा राज्य की हिंसा से कम हानिकारक है। लेकिन अपरिहार्य हो तो मैं न्यूनतम राज्य–स्वामित्व का समर्थन करूँगा। मैं राज्य की शक्ति में वृद्धि से बड़ा भयभीत हूँ क्योंकि यह जाहिर तौर पर शोषण को न्यूनतम करके लोगों की भलाई करने का प्रयास करता है, पर वह वैयक्तिकता को विनष्ट करके मानव जाति की सबसे बड़ी हानि करता है, क्योंकि वैयक्तिकता ही तो संपूर्ण प्रगति की कुँजी है।[58]

➢ **अहिंसा एवं राष्ट्रधर्म –**

गाँधीजी का स्पष्ट मत रहा है कि जो राष्ट्र अहिंसा को जितना हृदयंगम करेगा, उतना ही वह स्वाधीन होगा। एक बात निश्चित है, अहिंसा का आधार रखने वाले समाज में छोटे से छोटा राष्ट्र भी बड़े से बड़े राष्ट्र के समान ही रहेगा, बड़प्पन और छोटेपन का भाव बिल्कुल नहीं होगा। उनके विचार में हर एक सच्चे विचार का महत्व एवं हर एक सच्ची आवाज की पूरी–पूरी कीमत अहिंसा के साम्राज्य में होती है।

➢ **अहिंसा बनाम पुलिसबल –**

गाँधीजी के अनुसार, एक पद्धति के रूप में, पुलिस निगरानी बड़ी घटिया चीज है और अच्छी सरकार के लिए यह शोभाजनक नहीं है।

यह कर के बोझ से दबे करदाता के ऊपर बेकार का भार है। क्योंकि यह पूरा–का–पूरा असाधारण व्यय करोड़ों मेहनतकशों की जेबों से आता है।

गाँधीजी ने ऐसे राज्य की कल्पना की जिसमे पुलिस की जरूरत नहीं होगी। क्योंकि उनकी धारणा थी कि अहिंसक राज्य में श्रमिकों और पूँजीपतियों के झगड़े और हड़तालें कभी–कभार ही होगी। क्योंकि अहिंसक बहुमत का प्रभाव इतना अधिक होगा कि समाज के सभी प्रमुख वर्ग उसकी बात आदर के साथ मानेंगे। इसी प्रकार सांप्रदायिक दंगो की भी गुँजाइश नहीं रहेगी।[59]

गाँधीजी ने कहा कि, मेरी कल्पना की पुलिस आज के पुलिस बल से बिल्कुल भिन्न होगी। इसमें अहिंसा में विश्वास करने वाले लोग भर्ती किए जाएँगे। वे जनता के स्वामी नहीं बल्कि सेवक होंगे। लोग सहज रूप से उनकी सब प्रकार की सहायता कर सकेंगे। सही रूप में पुलिसकर्मी सुधारक के रूप में काम करेंगे। इस प्रकार वर्तमान सुधारक जैलों का विचार गाँधी दर्शन से ही प्रेरणा लेता प्रतीत होता है।

➢ **अहिंसा बनाम अपराध और दण्ड –**

गाँधीजी मानते है कि अहिंसा हिंसा से कही अधिक श्रेष्ठ है। क्षमा में सजा से अधिक बहादुरी है। ''क्षमा वीरस्य भूषणम् अर्थात् क्षमा वीरों का भूषण है।'' परंतु दंड का अधिकार एवं शक्ति रहने के बावजूद भी दंड न देना ही सच्ची क्षमा है। गाँधीजी चोरों तक को सजा देने के पक्ष में नहीं थे। उनका विचार था कि प्रेम से उनका सुधार किया जा सकता है।

जैल कर्मचारियों को कैदियों के साथ मित्रवत् व्यवहार करना चाहिए। जिस प्रकार अस्पताल में रोगी के रोग का पता लगाकर उसका उपचार किया जाता है, उसी प्रकार अपराधी का व्यक्तिशः अध्ययन कर

उसके अपराध के कारणों का पता जैल प्रशासन को लगाना चाहिए तत्पश्चात् उसके सुधारात्मक प्रयास प्रारंभ करने चाहिए।

गाँधीजी ने कैदियों के भी कर्तव्य बताए हैं जैसै– उन्हें आदर्श कैदियों की तरह व्यवहार करना चाहिए। उन्हें जैल के अनुशासन तोड़ने से बचना चाहिए। उन्हें जैल मे जो भी काम मिले, उसे दिल लगाकर करना चाहिए। उन्हें अपने छोटे से जैल समुदाय में इस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए कि जब वहाँ से छूटे तो एक बेहतर नागरिक बनकर निकलें।[60]

- **अहिंसा बनाम क्रांतिकारी –**

गाँधीजी का स्पष्ट कहना था कि, ''मैं क्रांतिकारी की वीरता और बलिदान की भावना से इंकार नहीं करता, लेकिन बुरे उद्देश्य के लिये प्रदर्शित वीरता और किया गया बलिदान उत्तम उर्जा का अपव्यय है। उनकी दृष्टि में सरफरोशी की तमन्ना से भरकर फाँसी के तख्ते पर झूल जाने की अपेक्षा भूखी जनता के बीच उसके साथ–साथ धीरे–धीरे स्वेच्छापूर्वक भूखमरी का शिकार होना ज्यादा वीरतापूर्ण कृत्य है। उन्होनें क्रांतिकारियों की राष्ट्रभावना का तो आदर किया किन्तु वे आजादी की लड़ाई के लिए हिंसा के पूर्णतः खिलाफ थे।

- **अहिंसा : सुरक्षा प्रहरी –**

प्रश्न उठता है कि किस प्रकार एक राष्ट्र अपनी संपत्ति को बाहरी आक्रमण एवं आंतरिक उथल–पुथल से अहिंसा द्वारा सुरक्षित रख सकता है ? गाँधीजी का विचार था कि प्रत्येक प्रकार की संपत्ति की रक्षा अहिंसा द्वारा की जा सकती है। सर्वप्रथम, एक राष्ट्र को स्वेच्छा से अपनी कुअर्जित संपत्तियों और अन्य प्राप्तियों को त्यागना पड़ता है, पूर्व इसके कि वह उन आक्रमणकारियों को जो उसकी अहिंसा से प्राप्त संपत्ति से उसे वंचित करना चाहते है, खदेड़ा जा सके। तत्पश्चात्

अहिंसा के प्रत्याशी को सर्वप्रथम अपनी ही जाति में सामाजिक सुधारों में परिवर्तन लाना चाहिए, रचनात्मक कार्यक्रम एवं सत्याग्रह के द्वारा।

यदि बाहर से आक्रमण होता है और भीतर से तोड़–फोड़ और अव्यवस्था की आशंका हो तो, अहिंसक का आचरण किस प्रकार का होगा ? इसके प्रत्युत्तर में गाँधीजी ने सत्याग्रहियों की एक सेना संगठित करने का सुझाव दिया। यह सेना विरोधी लोगों से बात करेगी, यहाँ तक कि अपनी हत्या के लिए भी अपने को प्रस्तुत कर देगी, किंतु अपने शत्रु को हानि पहुंचाने के लिए अपनी छोटी उँगली भी नहीं उठाएगी। वह अपने धैर्य द्वारा उस पर विजय पाएगी।

सत्याग्रहियों के प्रति यदि विरोधी तत्व हिंसा का प्रयोग करे तो ऐसी स्थिति में क्या किया जाये ? गाँधीजी के पास इसका ठोस समाधान है। अहिंसक सत्याग्रहियों को शत्रुदल के साथ अहिंसात्मक सहयोग का संगठन करना चाहिए। उन्हें यह बता देना चाहिए कि उनके पास जो भी है, वह उसी को उनके साथ मिल बांटने को तैयार होंगे, यदि वे सैनिक न्याय तथा समानता पर आधारित एक नया जीवन निर्माण करने को तैयार हो। किंतु सत्याग्रही किसी भी मूल्य पर उनके इशारों पर नहीं चलेंगे।[61]

क्या इस प्रकार का अहिंसात्मक प्रतिरोध मानवीय दृष्टि से संभव है ? इस प्रश्न के उत्तर में उन्होनें स्पष्ट कहा कि, हाँ, ऐसा संभव है। किंतु इसके लिये अत्यंत उच्चकोटि के साहस की आवश्यकता है। उनका अनुभव था कि जब तक मानवता इस प्रकार के साहसपूर्ण कदम के लिए तैयार नहीं होती तो लोग भयानक संहारक शस्त्रों की होड़ में प्रवृत्त होते रहेंगे और फलतः अधिक से अधिक नैतिक पतन होता जाएगा।

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कि हिटलर जैसै भयानक तानाशाह के हृदय को प्रभावित करना कैसै संभव है ? गाँधीजी ने विचार दिया कि इस प्रकार के व्यक्ति में चाहे, हृदय परिवर्तन संभव ना हो तथापि

हिटलर अकेला ही तो लड़ने वाला नहीं होगा। उसके अधीन लड़ने वाले अनेक सैनिक होंगे। सत्याग्रह का प्रभाव उनके हृदय पर तो पड़ सकता है। जब भी इस प्रकार सैनिकों का हृदय प्रभावित होगा, हिटलर तथा उसके अन्य सेनापतियों की विचारधारा का जादू समाप्त हो जाएगा और इस प्रकार हिटलर अकेला पड़ जाएगा। इस प्रकार हिंसा की केंद्रीय शक्तियों का अकेले पड़ जाना ही वह सबसे बड़ा फल था, जिसकी उस परिस्थिति में गाँधीजी आशा कर सकते थे।[62]

➢ **अहिंसा : रामराज्य का आधारसूत्र**

गाँधीजी ने केवल अहिंसा का संदेश ही नहीं दिया बल्कि उसे रचनात्मक तरीके से जी कर दिखाया। उन्होनें करूणा, प्रेम, सर्वधर्म समभाव, विश्व बंधुत्व, वसुधैव कुटुम्बकम्, सर्वे भवन्तु सुखिनः, जीओ और जीने दो, प्राणियों में सदभावना हो, विश्व का कल्याण हो आदि शुभकामनाओं से विश्व को प्रेरित किया। मानव ही नहीं प्राणीमात्र और वनस्पति जगत के लिये भी मंगलमय भावना उनके अहिंसात्मक विचारों में दिखाई देती है। उपरोक्त सभी शुभ संकल्पों का सूत्रपात अहिंसा से ही होता है।

भारतीय धर्म और दर्शन ही नहीं, दुनिया का कोई धर्म अहिंसा से असहमत नहीं हो सकता। क्या कोई धर्म हिंसा करने, मारपीट झगड़ा करने, भेदभाव करने के लिए कह सकता है ? ईसाई, यहूदी, इस्लाम, पारसी, बौद्ध कोई भी धर्म हिंसा की इजाजत नहीं देता है।

उन्होनें रंगभेद, लिंगभेद, असमानता, दासता, पराधीनता आदि मसलों को अहिंसा के माध्यम से हल करके मानवता को अचंभित कर दिया। दैनिक जीवन को शाकाहार, नशा मुक्ति, सुखी परिवार संबंध आदि व्यावहारिक तरीकों से अहिंसामय बनाने का रास्ता बताया। प्रेम, भाईचारा, सद्भाव का रास्ता दिखाया। गाँधीजी के वृतांतो से प्रभावित, विश्व युद्ध से प्रताड़ित विश्व के प्रमुख राष्ट्रों ने राष्ट्र संघ की स्थापना अहिंसा, प्रेम,

निःशस्त्रीकरण के आधार पर की। ब्रिटेन से भारत को आजादी अहिंसा के प्रयोग से बिना खूनी क्रांति के मिली। भारतीय लोकतंत्र का संविधान भी अहिंसा के आधार पर बना। बीसवी सदी में पराधीनता से मुक्त अनेकानेक राष्ट्रों ने अहिंसा को अपनाया। राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध, नानकदेव का रास्ता ही गाँधी का रास्ता है। भारत के प्रधानमंत्री **नरेन्द्र मोदी ने अपने जापान दौरे में कहा,** ''भारत के डी.एन.ए. में बस अहिंसा ही रची बसी है।'' विश्व का जीवन मंगलमय, अहिंसा व सत्य से ही हो सकता है।[63]

अहिंसा प्रशिक्षण के सूत्र

गाँधीजी ने अहिंसा का दर्शन ही नहीं दिया, अपितु उसको सीखने की तकनीक भी दी है। उन्होनें अहिंसा का तत्वज्ञान ही नहीं, वरन् उसका वैज्ञानिक स्वरूप, प्रविधि तथा ग्रहण करने का तरीका भी बतलाया। यद्यपि अहिंसा की विशाल परंपरा और प्रेरक शक्तियाँ भारत में ही नहीं वरन् विश्व में आदिकाल से ही विद्यमान रही है।[64] अहिंसा कोई यंत्र नहीं है, यह व्यक्ति के मन का सद्गुण है। प्रशिक्षण के आधार पर ही इसे प्राप्त किया जा सकता है।

1. व्यक्ति अपने जीवन में अहिंसा धर्म का अनुसरण करे और उसका जीवन दूसरों के लिये एक जीता–जागता उपदेश बनें।
2. अहिंसा के प्रशिक्षण में शास्त्रों की कोई आवश्यकता नहीं है। जिसके पास शस्त्र है उसे उन्हें फेंकना होगा। जिस प्रकार हिंसा के प्रशिक्षण में मारने की कला सीखना जरूरी है, उसी प्रकार अहिंसा के प्रशिक्षण में मरने की कला सीखना जरूरी है। हिंसा करने वाला व्यक्ति भय से मुक्ति के भ्रम में साधनों की खोज करता है, किंतु अहिंसा के पुजारी को एक ही भय होता है– ईश्वर का भय। बाह्य वस्तुओं की रक्षा के लिये हिंसा की आवश्यकता होती है, जबकि जीव आत्मा की रक्षा के लिये, आत्मसम्मान की रक्षा के लिये अहिंसा की आवश्यकता

होती है। इस प्रकार अहिंसा का प्रशिक्षण हिंसा के प्रशिक्षण का बिल्कुल विपरीत है।

3. अहिंसा घर बैठकर नही सीखी जा सकती। इसके लिये उद्यम करना पड़ता है। अपनी परीक्षा लेने के लिये हमें खतरे और मौत को ललकारना, देह का दमन करना और सभी प्रकार की कठिनाईयों को सहन करने की क्षमता का विकास करना सीखना चाहिए।
4. गाँधीजी का मानना है कि अहिंसा के लिए किसी बाह्य प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं है। इसके लिये दो बातें चाहिए– बदला लेने के लिये भी मरने की इच्छा से विरति और प्रतिरोध की भावना मन में लाये बगैर मौत का सामना करने का साहस यह अहिंसा का सार्वभौम नियम है।[65]
5. व्यक्तिगत की अपेक्षा सामाजिक अहिंसा के प्रयास ज्यादा उपयोगी सिद्ध होते है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसकी उपलब्धियाँ तभी उपयोगी मानी जा सकती है जबकि कोई भी अध्यवसायी मनुष्य उन्हें हासिल कर सके।
6. अहिंसा के लिये व्यक्ति में विनम्रता का होना आवश्यक है। यदि मनुष्य में गर्व और अहंकार हो तो उसमें अहिंसा नहीं टिक सकती।
7. सच्चे अहिंसक व्यक्ति को केवल ईश्वर का भय होता है। जिस व्यक्ति को ईश्वर में जीती–जागती आस्था न हो तो उसकी अहिंसा में पूर्ण आस्था हो ही नहीं सकती। ईश्वर की सर्वव्यापकता का अर्थ है, उन व्यक्तियों के जीवन के प्रति भी आदरभाव जिन्हें हमारा विरोधी कहा जा सकता है।
8. अहिंसा के प्रशिक्षण हेतु हमें सत्य एवं पवित्रता को स्वीकार करना आवश्यक है। क्योंकि यह नहीं हो सकता कि मनुष्य ईश्वर के प्रति तो प्रबल आस्था रखने का दावा करे और वह पवित्र व सत्यनिष्ठ नहीं हो। क्योंकि सत्य एवं ईश्वर परस्पर पर्याय है।

9. मानव में अहिंसा की भावना हृदय में होनी चाहिए। उसके भीतर पापी के प्रति प्रेम और दया की बाढ़ आनी चाहिए। जब वह भाव होगा तो, किसी न किसी कर्म द्वारा प्रकट होगा। वह कर्म संकेत, दृष्टिपात या मौन मात्र भी हो सकता है। उसका रूप कुछ भी हो, उससे पापी का हृदय पिघल जाएगा और उसे पाप से बचा लेगा।
10. अहिंसा का आरंभ और अंत आत्म निरीक्षण में होता है– 'जिन खोजा तिन पाइया गहरे पानी पैठ।' आत्म निरीक्षण से ही व्यक्ति में आत्मत्याग एवं आत्मसंयम का पता लगाना संभव हो पाता है।[66]
11. अहिंसा में प्रतिशोध की भावना नहीं होती। इसलिये व्यक्ति को अपने मन से अशुभ विचार, अनुचित शीघ्रता, झूठ बोलने, घृणा करने, बदला लेने आदि विचारों का त्याग करना चाहिए।
12. अहिंसा के प्रशिक्षण हेतु आवश्यक है व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में सच्चाई, विनम्रता, सहिष्णुता तथा प्रेममय दयालुता का व्यवहार करें। यह व्यवहार उस समय खासतौर पर असरकारक होगा जब यह अहिंसा के विरूद्ध होगा।
13. अहिंसा के विकास के लिये लंबे अभ्यास की आवश्यकता है। अहिंसा के मार्ग पर चलते हुए, यात्री को प्रतिदिन एक–से–एक सुंदर अनुभव होते हैं ताकि वह उस सौंदर्य की झलक पा सके, जो उसे शिखर तक पहुंचने पर दिखायी देगा।

अहिंसा व विश्व राजनीति

गाँधीजी की यह आकांक्षा थी कि अंतर्राष्ट्रीय क्षैत्र में तनावों व संघर्षो का निवारण करने की तकनीक के रूप में अहिंसा की प्रयुक्ति हो व इस सिद्धांत का विश्व के नेता व राजविद् प्रयोग करें।

जब गाँधीजी से यह प्रश्न किया गया कि क्या तानाशाहों के सम्मुख, जिनके हृदय में दया व नैतिकता जैसी कोई चीज नहीं है, विश्व जनमत की जिन्हें परवाह नहीं है, क्या अहिंसा सफल हो सकेगी ? गाँधीजी ने उत्तर दिया

कि, ''अहिंसा अपना काम करने के लिए दमनकारी की सद्भावना या दृष्टि के लिए रूकी नहीं रहती, न वह उस पर निर्भर है, वह आत्मनिर्भर है।'' लेकिन फिर प्रश्न उठता है कि हवाई हमलों और परमाणु शस्त्रों का मुकाबला करना क्या अहिंसा के लिए संभव होगा, जहां विरोधियों के वैयक्तिक संपर्क की कोई गुंजाइश ही नहीं है ? गाँधीजी ने जवाब दिया, ''मौत ढाहने वाले बम के पीछे कोई मानवीय हाथ है जो उसे फैंकता है और उसके पीछे मानवीय हृदय भी है, जो उस हाथ को प्रेरित करता है। उसके हृदय में और वह जिसका हुक्मबरदार है, उन नृशंस शासकों के हृदय में भी भगवान बसता है और वह प्रार्थना की पुकार के लिए जो कि अहिंसा का सर्वोच्च सुरक्षा शस्त्र है, खुला है।''[67]

अहिंसा की शक्ति में अनन्य विश्वास के आधार पर ही उन्होनें अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के अहिंसक विकल्प दिए। गाँधी चाहते थे कि फिलीस्तीन के यहूदी अरबों के विरूद्ध सत्याग्रह करें, जर्मनी के यहूदियों से भी वे चाहते थे कि वे नाजी आक्रमणकारियों के विरूद्ध अहिंसक प्रतिरोध करें। इसके लिए वे यहूदियों को योजनाबद्ध और दूरदृष्टि से सत्याग्रह करने को प्रेरित करते है। उनका मानना था कि जर्मनी के यहूदी एकरूप है एवं विश्व जनमत भी उनके साथ है।

1939 के मार्च संकट के समय चेकोस्लोवाकिया के प्रश्न पर गाँधीजी ने लोकतांत्रिक शक्तियों के लिए, विश्व राजनीति की इस खतरनाक परिस्थिति में निःशस्त्रीकरण की बात कही। इस समय उन्होनें इंग्लैण्ड को अहिंसात्मक युद्ध करने को प्रेरित किया। हालांकि उन्हें इस बात का ज्ञान था कि इन बातों पर संसार उन्हें अव्यावहारिक और स्वप्न–दृष्टा कहता है। 1942 में गाँधीजी का पूर्ण विश्वास था कि भारत जापान का प्रतिरोध अहिंसा के माध्यम से कर सकता है।

यदि गाँधीजी के विकल्पों का मूल्यांकन किया जाए तो ऐसा लगता है कि, वे कुछ यूरोपियन है। अंतर्राष्ट्रीय संघर्ष व तनावों के निवारण की तकनीक के रूप में अहिंसा के प्रयोग के सुझाव बड़े अव्यावहारिक लगते है। अंतर्राष्ट्रीय क्षैत्र में अहिंसक प्रतिरोध के इन विकल्पों के अव्यावहारिक लगने का कारण यह था कि गाँधीजी को इन विकल्पों की व्यावहारिक प्रयुक्ति का अवसर नहीं मिला

था। उन्होनें देश में अहिंसक प्रतिरोध तो किए मगर देशों के मध्य नहीं। इसीलिये इस क्षैत्र की जटिल समस्याओं से वे अनभिज्ञ रहे। आरंभ में अहिंसा के संबंध में भी उनके विचार कुछ इसी प्रकार के थे पर निरंतर प्रयोगों ने उन्हें इस बात को प्रेरित किया कि अहिंसा को लेकर उन्हें कुछ समझौते करने होंगे जैसै अनिवार्य हिंसा को स्वीकार करना होगा। अतः अगर अंतर्राष्ट्रीय क्षैत्र में भी गाँधीजी कुछ प्रयोग कर पाते तो अंतर्राष्ट्रीय संघर्ष निवारण में वे कुछ व्यावहारिक तकनीक दे पाते।

आक्रमण एवं हिंसा का प्रतिरोध

गाँधीजी के अनुसार सच्चा लोकतांत्रिक वह है जो अपनी और अपने देश की तथा अन्ततः समूची मानव जाति की आजादी की रक्षा विशुद्ध अहिंसक तरीके से करता है। लेकिन प्रतिरोध का कर्तव्य केवल वे ही उपार्जित कर सकते है जो अहिंसा को धर्म मानते है– वे नहीं जो गणित लगाए और प्रत्येक मामले के गुणावगुण पर विचार करने के बाद निर्णय ले कि अमुक युद्ध का समर्थन करना है अथवा विरोध। इसका मतलब यह हुआ कि इस प्रकार के प्रतिरोध का निर्णय व्यक्ति को स्वयं को करना है और अपनी अंतर्वाणी का आदेश मानते हुए करना है, यदि वह अंतर्वाणी के आदेश को स्वीकारता है तो।[68]

प्रतिरोध के सही अर्थ को प्रायः समझा नहीं गया है और उसे विकृत भी किया गया है। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि अहिंसक व्यक्ति को आक्रांता की हिंसा के समक्ष घुटने टेक देने चाहिए। आक्रांता की हिंसा का जवाब हिंसा से न देते हुए उसे उसकी नाजायज मांग को मान लेने से इंकार कर देना चाहिए, चाहे इसमें उसे अपनी जान से भी हाथ धोना पड़े। प्रतिरोध का सही अर्थ यह है कि उसे हिंसा का जवाब हिंसा से नहीं देना है, बल्कि अपने हाथ को उठाने से रोकते हुए, आक्रांता की मांग को मानने से इंकार करके उसके आक्रमण को निष्प्रभावी बनाना है। दुनिया में मानव आचरण का यही एक मात्र सभ्य तरीका है। कोई और तरीका शस्त्रों की होड़ को बढ़ावा देगा। बीच–बीच

में शांति के दौर भी आएँगे, पर उनके पीछे वास्तविक कारण होगा उच्चतर कोटि की हिंसा के लिये तैयारी करते–करते पैदा होने वाली थकान। उच्चतर हिंसा के बल पर स्थापित शांति अणुबम और उससे जुड़ी तमाम चीजों को जन्म देती है। यह अहिंसा और लोकतंत्र को पूर्ण रूप से नकारना है। लोकतंत्र अहिंसा के बगैर नहीं चल सकता।[69] क्रूरता का जवाब क्रूरता से देना अपने नैतिक और बौद्धिक दिवालियापन को स्वीकार करना है। यह केवल एक दुष्चक्र को ही जन्म दे सकता है।[70]

गाँधीजी के अनुसार प्रतिरोध दो प्रकार के है– निष्क्रिय प्रतिरोध तथा अहिंसक प्रतिरोध। लेकिन प्रतिरोध की बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। यूरोप ने यीशु के बुद्धिमत्ता से युक्त दृढ़ प्रतिरोध को दुर्बल का प्रतिरोध मानकर उसका गलत अर्थ लगाया। क्या यीशु को निष्क्रिय प्रतिरोधी मानने की भारी कीमत पश्चिम को नहीं चुकानी पड़ी ?[71]

गाँधीजी का अभिमत है कि मारते हुए मरने की अपेक्षा बिना मारे मृत्यु का वरण करना ज्यादा वीरतापूर्ण है। मारना या मारते हुए मर जाना कोई प्रशंसनीय बात नहीं है। लेकिन जो व्यक्ति शत्रु की इच्छा के आगे घुटने टेकने के बजाय उसके आगे अपनी गर्दन कर देता है, वह कहीं ज्यादा उच्च कोटि के साहस का परिचय देता है।[72] इसी संदर्भ में गाँधीजी ने कहा कि, ''मुझे जीना है, किंतु मुझे किसी राष्ट्र या व्यक्ति का दास बनकर नहीं रहना। मैं या तो पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करूंगा या मर मिटूंगा। सशस्त्र संघर्ष में जीतने की आशा करना केवल बड़बोलापन होगा। लेकिन कोई मेरी आजादी से मुझे वंचित करे, उसकी शक्ति को चुनौती देना, उसकी इच्छा पालन करने से इंकार करना और इस प्रयास में निहत्थे जान दे देना बड़बोलापन नहीं है। इसमें मेरी जान तो जाएगी, मगर मेरी आत्मा अर्थात् मेरे सम्मान की रक्षा हो सकेगी।[73]

गाँधीजी का अभिमत है कि अहिंसा से भिन्न, मात्र निष्क्रिय प्रतिरोध में लोगों के हृदय परिवर्तन की शक्ति नहीं है। विष को अमृत में बदलने के लिये क्या करना होगा ? क्या ऐसा करना संभव भी है ? **गाँधीजी कहते है कि,** ''यह

संभव है और मैं समझता हूं कि मुझे इसका तरीका भी मालूम है। लेकिन जहाँ भारतीय मानस निष्क्रिय प्रतिरोध की कोशिश करने के लिये तैयार है, वहीं वह अहिंसा का पाठ हृदयंगम करने के लिये तैयार नहीं है, और शायद यही वह चीज है जिससे विष अमृत में बदल सकता है। बहुत से लोग यह स्वीकार करते है कि रास्ता तो यही है, पर उनमें स्वर्णिम पथ पर चलने का साहस नहीं है। मैं पूरा जोर देकर यह घोषणा करता हूँ कि अहिंसा असफल नहीं होती, लोग ही उसके अनुरूप होने में असफल हुए है।[74]

गाँधीजी ने स्पष्ट रूप में पूरी तरह यह स्वीकार किया है कि आजादी की शुरूआती लड़ाई के तीस वर्षो में हम जो आचरण करते रहे है, वह अहिंसक प्रतिरोध नहीं था बल्कि निष्क्रिय प्रतिरोध था, जो कमजोर लोगों का साधन है, क्योंकि ऐसे सशस्त्र प्रतिरोध करने की क्षमता अथवा इच्छा नहीं होती। अगर हम अहिंसक प्रतिरोध का इस्तेमान करना जानते होते, तो हम टुकड़ों में विभक्त भारत के बजाय दुनिया के समक्ष आजाद भारत की बिल्कुल दूसरी ही तस्वीर पेश कर सकते थे। आज ये टुकड़े आपसी संघर्ष में इस कदर व्यस्त है कि इन्हें उन लाखों भूखे–नंगों के भोजन और वस्त्र की व्यवस्था पर शांत मन से विचार करने का समय ही नहीं है। जो किसी धर्म को नहीं जानते और जिनका भगवान जीवन रक्षा के लिये आवश्यक वस्तुओं के रूप में ही उनके सामने प्रकट होता है।[75] वस्तुतः यह सबल हृदय की अहिंसा नहीं, बल्कि दुर्बल हृदय की निष्क्रियता ही थी। सबल हृदय अहिंसक तो आपसी हितों के टकराव की स्थिति में भी मानव एकता और भाईचारे की भावना का त्याग कभी नहीं करता और अपने विरोधी पर जोर–जबरदस्ती करने के बजाय उसके हृदय परिवर्तन का प्रयास करता है।

गाँधीजी को विश्वास था कि यदि भारत हिंसा के बल के उदात्तीकरण की विधि खोज सके और उसे रचनात्मक तथा शांतिपूर्ण तरीकों में बदल सके जिसमें हितों की भिन्नता को समाप्त किया जा सके, तो यह बड़े सौभाग्य की बात होगी।[76] यह कहने का अधिकार किसी को नहीं है कि जो

बात आजादी की लड़ाई में हासिल नहीं की जा सकी, वह कभी हासिल करना मुमकिन नहीं होगा। सच पूछा जाये तो अहिंसा की श्रेष्ठता के प्रदर्शन का वास्तविक अवसर तो आज उपस्थित हुआ है। माना कि हमारे लोग सार्वभौम सैन्यकरण के भँवर में फँस गये है, परंतु यदि कुछ लोग भी अपने को इससे बाहर रख सके तो उन्हें वीर की अहिंसा का उदाहरण प्रस्तुत करने का सौभाग्य प्राप्त होगा और उनकी गिनती भारत के प्रथम सेवकों में की जाएगी। इसे बुद्धि से सिद्ध नहीं किया जा सकता। इसलिये इसे जब तक अनुभव के द्वारा प्राप्त न किया जा सके, तब तक आस्था के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।[77]

गाँधीजी के अनुसार, ''इतिहास में ऐसा कोई उल्लेख नहीं मिलता कि किसी राष्ट्र ने अहिंसक प्रतिरोध को अपनाया हो। यदि हिटलर जैसा तानाशाह मेरी पीड़ा से अप्रभावित रहता है तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। क्योंकि इससे मेरा कुछ नही जाता। मेरी दृष्टि में रक्षणीय केवल मनुष्य का आत्मसम्मान है। इसके लिये हिटलर की क्या, किसी की कोई आवश्यकता नहीं है। परंतु अहिंसा का पुजारी होने के नाते मेरे लिये उसकी संभावनाओं को सीमित करना उचित नहीं होगा। अब तक हिटलर और उस जैसी मनोवृत्ति के लोगों ने अपने एक जैसै अनुभव के बल पर यह विश्वास दृढ़ किया कि मनुष्य ताकत के आगे घुटने टेकते है यदि उनके सामने निहत्थे स्त्री, पुरूष और बच्चे, अपने मन में कोई कटुता पैदा किये बगैर, अहिंसक प्रतिरोध करे तो यह उनके लिये अनूठा अनुभव होगा। यह कौन कर सकता है कि उच्चतर और सूक्ष्मतर शक्तियों के प्रति अनुक्रिया करना हिटलर और उन जैसै लोगों की प्रकृति में नहीं है ? उनमें भी वहीं आत्मा है जो मेरे अंदर है।'' इसके प्रमाण स्वरूप गाँधीजी ने कहा है कि, ''जब मैनें अहिंसक सत्याग्रह की शुरूआत की तो मेरा कोई सहचर नहीं था। सत्याग्रह के दौरान हम तेरह हजार स्त्री, पुरूष और बच्चे एक समूचे राष्ट्र के विरोध में खड़े हो गये थे जो हम सबको नष्ट कर देने में समर्थ था। मुझे मालूम नहीं था कि मेरी बात कौन सुनेगा। मेरे सामने तो जैसै एक बिजली कौंध गयी थी। सभी तेरह हजार व्यक्तियों ने संघर्ष नहीं किया। बहुत से पीछे रह गये,

किंतु राष्ट्र के सम्मान की रक्षा हो गई। दक्षिण अफ्रीका के अहिंसक सत्याग्रह ने नये इतिहास की रचना की।''

गाँधीजी का दृढ़ विश्वास रहा कि अहिंसा व्यक्ति को अधिक शक्तिशाली एवं दृढ़ बनाती है। उन्होनें स्पष्ट किया कि अगर उनकी अहिंसा उन्हें हथियार को धारण करने और उनका इस्तेमाल करने की क्षमता के मुकाबले ज्यादा बहादुर नहीं बना सकती तो वे ऐसी अहिंसा–जो कायरता का ही दूसरा नाम होगी, का त्याग कर दे और अपने हथियार फिर उठा ले, जिसके लिये उन्हें कोई ओर नहीं बल्कि उनकी अपनी इच्छा–शक्ति ही रोक रही होगी।

प्रतिरोध हेतु अहिंसा का मार्ग

गाँधीजी का मानना है कि अहिंसा संसार के उन महान् सिद्धांतों में से है जिसे दुनिया की कोई ताकत मिटा नहीं सकती। इसकी सच्चाई प्रमाणित करने के प्रयास में मेरे जैसै हजारों लोग मर जाये, पर अहिंसा कभी नहीं मरेगी। वास्तव में अहिंसा का सिद्धांत उसमें आस्था रखकर उसके लिये बली हो जाने वाले व्यक्तियों द्वारा प्रचारित हो सकता है। अहिंसा उच्चतम आदर्श है। यह वीरों के लिये है, कायरों के लिये कदापि नहीं। औरों की बली से लाभ उठाना और इस भ्रम में रहना कि हम बड़े धार्मिक और अहिंसक है, केवल अपने को धोखा देना है।[78] गाँधीजी का विश्वास था कि, यदि आपके पास अहिंसा की तलवार हो तो दुनिया की कोई शक्ति आपको अपनी अधीनता में नहीं ले सकती। यह विजेता और विजित, दोनों का उदात्तीकरण करती है।[79]

इस समय संपूर्ण विश्व में जो हिंसा की लहर आयी हुई है, गाँधीजी के विचार में उसका सही कारण यह है कि अभी तक वीर पुरूष अपराजय अहिंसा की तकनीक को पूरी तरह खोजा नहीं गया है। उनका दृढ़ अभिमत है कि अहिंसक उर्जा का एक औंस भी कभी बेकार नहीं जाता। किंतु इस संदर्भ में गाँधीजी ने यह भी कहा है कि, ''मैं यह नहीं कहता कि हमारे ऊपर आक्रमण करने वाले लुटेरों, चोरों या राष्ट्रों से निपटने के लिये हिंसा का सहारा मत लो। लेकिन इसमें अच्छी तरह कामयाब होने के लिये हमें अपने ऊपर संयम रखना

सीखना चाहिए। जरा–जरा सी बात पर पिस्तौल उठा लेना मजबूती नहीं, बल्कि कमजोरी की निशानी है। आपसी घूसेंबाजी हिंसा का नहीं, बल्कि नामर्दगी का अभ्यास है।[80]

गाँधीजी के अनुसार यद्यपि हर प्रकार की हिंसा बुरी है और सिद्धांतः उसकी निन्दा की जानी चाहिए, परंतु अहिंसा में विश्वास रखने वाले व्यक्ति को न केवल आक्रामक और रक्षक के बीच भेद करने की अनुमति है, बल्कि यह उसका कर्तव्य भी है। ऐसा करने के उपरांत उसे अहिंसक तरीके से रक्षक का पक्ष लेना चाहिए अर्थात् उसकी रक्षा करने में अपनी जान लगा देनी चाहिए। उसके बीच में पड़ने से संभवतः द्वन्द की स्थिति जल्दी समाप्त हो जाएगी और यह भी हो सकता है कि लड़ाकू पक्षों के बीच शांति स्थापित हो जाये। गाँधीजी की अहिंसा रक्षक हिंसा और आक्रामक हिंसा के बीच भेद मानती है। यह भी सही है कि दीर्घकाल में यह भेद मिट जाता है, पर आरंभिक अच्छाई फिर भी कायम रहती है। अहिंसक व्यक्ति समय आने पर यह जरूर कहेगा कि, किसका पक्ष न्यायोचित है और किसका नही ? इसीलिये उन्होनें अबीसीनियाइयों, स्पेनियों, चैको, चीनियों और पौलेण्डवासियों की सफलता की कामना की थी, हालांकि उनकी अभिलाषा थी कि इनमें से प्रत्येक को अहिंसक प्रतिरोध का आश्रय लेना चाहिए था।

अहिंसक प्रतिरोध के मार्ग की बुनियादी पूर्वधारणाएँ

गाँधीजी का कहना है कि जिस तरह से हम अपने परिवार या कुल में प्रेम का बर्ताव करते है, उसी तरह से पूरी मानव जाति एक बड़ा परिवार ही तो है। यदि प्रेम की भावना पर्याप्त गहरी हो तो यह संपूर्ण मानव जाति पर लागू होनी चाहिए। यदि व्यक्तियों ने बर्बर लोगों के साथ व्यवहार में सफलता पाई है तो व्यक्तियों के समूह बर्बरों के समूह पर कामयाब क्यों नहीं हो सकते ? यदि हम अंग्रेजों के साथ कामयाब हो सकते है तो यह विश्वास करना आस्था का विश्वासभर है कि हम उनसे कम सभ्य और कम उदार हृदय राष्ट्रों के साथ भी कामयाब हो सकेंगे। मैं दृढ़तापूर्वक कहता हूँ कि यदि हम विशुद्ध अहिंसक

प्रयास से अंग्रेजों पर कामयाबी हासिल कर सकते है तो हम अन्य लोगों पर भी जरूर हासिल कर सकते है। यह उसी तरह की बात है कि अगर हम अहिंसा से आजादी प्राप्त कर सकते है तो अहिंसा से उसकी रक्षा भी कर सकेंगे। यदि हमारे अंदर यह आस्था नहीं है तो हमारी अहिंसा केवल तात्कालिक है, वह मिलावटी है, खरा सोना नहीं है।

यदि हमें संदिग्ध अहिंसा से आजादी मिल भी गई तो हम आक्रांताओं से उसकी रक्षा करने में अपने को कतई तैयार नहीं पाएँगे। अगर हमें इसमें संदेह है कि अहिंसा अन्ततः सफल होगी तो यह कहीं बेहतर होगा कि हम अपनी नीति बदल दे और राष्ट्र को हथियारों का प्रशिक्षण देना शुरू कर दे। यह बात हमारी गरिमा के अनुकूल नहीं होगी कि अपना मन पक्का किए बगैर हम लोगों को एक झूठे विश्वास की दिशा में प्रवृत्त कर दे। यह कायरता का काम होगा। यदि हम अहिंसा पर अपनी आस्था को त्याग दे ंतो इसका अनिवार्य अर्थ यह नहीं है कि हम हिंसक हो गए। इसका अर्थ सिर्फ यह होगा कि हमनें मुखौटा उतार फेंका और अपने सहज रूप में आ गये। यह पूर्णतः गरिमायुक्त आचरण होगा।[81]

गाँधीजी के अनुसार, कोई राष्ट्र या व्यक्ति समूह कितना ही छोटा हो, वह समूची दुनिया की शस्त्र एवं सैन्य शक्ति के विरूद्ध अपने सम्मान और स्वाभिमान की रक्षा करनें मे समर्थ हो सकता है बशर्ते कि उसका चित्त स्थिर हो और संकल्प दृढ़ हो। निहत्थे की अतुल शक्ति और खूबी इसी में है। यही अहिंसक रक्षा है जो किसी भी स्थिति में पराजय को न जानती है, न उसे स्वीकार करती है। इसलिये जिस राष्ट्र अथवा व्यक्ति समूह ने अहिंसा को अपनी अंतिम नीति मान लिया है, उसे अणुबम भी अपनी दासता के लिए मजबूर नहीं कर सकता।

गाँधीजी की दृष्टि में तो यह स्वतः स्पष्ट है कि यदि सभी को शारीरिक रूप से दुर्बलतम, अपंग और पंगु को भी आजादी मे बराबर की भागीदारी दी जानी है तो उसकी रक्षा में भी उन सभी को योगदान करना चाहिए। इस संदर्भ

में गाँधीजी ने कहा था कि, ''मैं अहिंसा यानी सत्याग्रह अथवा आत्मा के बल का कट्टर हिमायती हूँ और रहूँगा। इसमें शारीरिक असमर्थता बाधक नहीं बनती और कमजोर स्त्री तथा बच्चा तक बराबरी का भागीदार बनते हुए शक्तिशाली से शक्तिशाली हथियारों से लैस प्रबल शत्रु का मुकाबला कर सकता है।

गाँधीजी ने तत्कालीन कश्मीरी समस्या के समाधान हेतु जिस अहिंसक विधि का सुझाव दिया वह यह है कि कश्मीरी रक्षकों को हथियारों की कोई सहायता न दी जाये। सरकार उन्हें बेहिचक अहिंसक सहायता दे। लेकिन कश्मीरी रक्षक, उन्हें भारत से अहिंसक मदद मिले या न मिले, विशाल संख्या में जुटकर हमलावरों की शक्ति का प्रतिरोध करे। यदि कश्मीरी रक्षक अपने मन में हमलावरों के प्रति कोई दुर्भावना या क्रोध लाए बगैर और किसी प्रकार के हथियार, यहाँ तक कि अपनी मुठ्ठी का भी इस्तेमाल किए बगैर अपने मोर्चे पर डटे रहकर प्राणोत्सर्ग कर दे तो यह ऐसी बहादुरी होगी जिसकी मिसाल इतिहास में नहीं मिलेगी। तब कश्मीर एक ऐसी पवित्र भूमि बन जाएगी जिसकी सुगंध केवल भारत में ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व में फैल जाएगी।

अहिंसा एवं राष्ट्रीय आंदोलन

गाँधीजी राष्ट्रीय आंदोलन के अहिंसक स्वरूप के पक्षधर थे। सन् 1920 में लोकमान्य तिलक के देहान्त के पश्चात् जब राष्ट्रीय आंदोलन की बागडोर पूरी तरह उनके हाथ में आ गई तो स्वतंत्रता प्राप्ति तक उन्होनें अहिंसा के सिद्धांत पर आधारित संग्राम ही लड़ा और जब कभी आंदोलन के दौरान हिंसात्मक घटनाएं घटित हुई तो उन्होनें कभी आंदोलन स्थगित करके उसे हिंसा के मार्ग से बचाया तो कभी स्वयं ने अनशन तथा आमरण अनशन करके हिंसा के लिये पश्चाताप किया और आंदोलन को पुनः अहिंसा के मार्ग पर लाकर ही दम लिया।

गाँधीजी यह मानते थे कि साधन और साध्य दोनों की पवित्रता अनिवार्य है। उनका कहना था कि हमारा साध्य स्वतंत्रता प्राप्ति है तो उसकी प्राप्ति के जो साधन हम अपनायें वे भी उतने ही पवित्र होने चाहिए जितना पवित्र हमारा

साध्य है। अपनी पुस्तक **'हिन्द स्वराज'** में अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए उन्होनें लिखा है कि, साधन यदि बीज माना जाए तो साध्य वृक्ष के समान है। जिस प्रकार से साधन और साध्य के मध्य अंतर्सम्बन्ध है, उसी प्रकार का संबंध पेड़ तथा बीज के मध्य है। शैतान की साधना करने से ईश्वर आराधना का फल प्राप्त नहीं हो सकता है। हम जैसा बोते है, वैसा ही पाते है। साधन केवल साधना मात्र नहीं, अपितु सर्वस्व है। हिंसक साधनों से हिंसक स्वराज ही प्राप्त होगा। ऐसा स्वराज न केवल हमारे भारत अपितु समस्त विश्व के लिए खतरनाक सिद्ध होगा।[82]

गाँधीजी के हृदय में राजनैतिक स्वतंत्रता की उत्कट कामना के साथ ही नैतिक और आध्यात्मिक स्वतंत्रता आदर्शो के प्रति गहरी निष्ठा भी थी। वे स्वराज को सत्य का अंग मानते थे, अतः स्वाभाविक था कि राजनीतिक स्वातंन्र्य उनके लिये एक अत्यधिक पवित्र लक्ष्य था। उनका विश्वास था कि स्वतंत्रता अर्थात् स्वराज तीव्र संघर्ष और कष्ट–सहन के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है और ब्रिटिश सरकार के प्रति असंतोष का प्रसार करना भारतीयों का धर्म है।[83] वस्तुतः गाँधीजी ने राष्ट्रीय आंदोलन के अहिंसात्मक चरित्र पर संपूर्ण बल देते हुए सत्याग्रह एवं निष्क्रिय प्रतिरोध के माध्यम से स्वाधीनता संग्राम लड़ा और अंततः भारत के लिये आजादी हासिल की। सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा, निष्क्रिय प्रतिरोध और असहयोग उनके अस्त्र रहे और अहिंसा के इन्हीं हथियारों के बल पर उन्होनें अंग्रेजों को भारत छोड़कर जाने के लिये बाध्य कर दिया।

अहिंसा एवं हिन्दू–मुस्लिम सामंजस्य

गाँधीजी ने देश की आजादी के साथ हिन्दू–मुस्लिम सामंजस्य एवं एकता के लिये जो राष्ट्रीय चेतना की धारा प्रवाहित की, उसका इतिहास में विशिष्ट स्थान है। गाँधीजी के लिये स्वाधीनता केवल एक राजनैतिक तथ्य मात्र न थी, अपितु यह एक सामाजिक सच्चाई थी। वे भारत को विदेशी शासन से ही नहीं, अपितु सांप्रदायिक झगड़ों से मुक्ति दिलाने के लिये भी लड़े थे। गाँधीजी भारत में सांप्रदायिक एकता लाना चाहते थे। वे सभी तरह के तनावों एवं भेदभावों को

ऊपरी मानते थे और उनका दृढ़ विश्वास था कि ये मिटाये जा सकते है। नौआखली में हिन्दू–मुस्लिम तनाव के दौरान उन्होनें यह सिद्ध भी कर दिखाया कि धार्मिक समझे जाने वाले सांप्रदायिकता के उन्माद से हिंसक हुए लोगों को नजदीक लाया जा सकता है। वे भाई–भाई की तरह रह सकते है। वे चाहते थे कि भारत में हिन्दू अच्छे हिन्दू तथा मुसलमान अच्छे मुसलमान बन कर रहे तो सच्ची सांप्रदायिक एकता स्थापित हो सकती है।

गाँधीजी के सपनों के भारत में सांप्रदायिकता तथा ऊँच–नीच का कोई स्थान नहीं था। उनके अनुसार, ''मैं एक ऐसे भारत के लिए काम करूंगा, जिसमें सभी लोग यह महसूस करेंगे कि यह देश उनका है और उसके निर्माण में उनकी आवाज भी प्रभावकारी है। ऐसा भारत जिसमें ऊँच–नीच, जाति–धर्म के लोग नहीं होंगे और उसमें सभी संप्रदायों के लोग अहिंसात्मक रूप से पूर्ण सामंजस्य एवं प्रेम के साथ रहेंगे।[84] इसी क्रम में उन्होनें कहा कि हिन्दू–मुस्लिम एकता और अहिंसक उपायों के जरिये सच्ची स्वाधीनता तथा आत्माभिव्यक्ति हासिल करके भारत अंधकार से बाहर निकलने का मार्ग खोज सकता है। 1917 ई. में जब पहली बार उन्होनें सत्याग्रह आंदोलन छेड़ा तो उन्हें हिन्दू–मुसलमानों का भरपूर सहयोग मिला।

गाँधीजी ने मुसलमानों को स्वतंत्रता आंदोलन से जोड़े रखने तथा हिन्दू–मुस्लिम एकता को सुदृढ़ करने के लिए खिलाफत आंदोलन में सहयोग करने का निश्चय किया। परिणामतः खिलाफत आंदोलन हिन्दू–मुस्लिम एकता का प्रतीक बन गया। 1920 ई. में हिन्दू और मुसलमानों को साथ लेकर असहयोग आंदोलन छेड़ा। उन्होनें अपने राजनीतिक कार्यो में सबसे पहला स्थान हिन्दू–मुस्लिम एकता को दिया। गाँधीजी ने हिन्दू–मुस्लिम एकता की नींव को मजबूत करने तथा भारत को स्वतंत्रता दिलाने की दृष्टि से खिलाफत और असहयोग आंदोलन को साथ–साथ चलाया। इन आंदोलनों को दबाने के लिए सरकार ने दमनकारी नीतियाँ अपनायी। परंतु गाँधीजी का यह आंदोलन अहिंसा, सत्याग्रह तथा असहयोग पर आधारित रहा।

सन् 1924 के बाद देश मे उत्पन्न सांप्रदायिक तनाव से गाँधीजी का मन अत्यंत दुखी हुआ। हिन्दू–मुस्लिम सामंजस्य तथा एकता को बढ़ाने, सांप्रदायिक विद्वेष को समाप्त करने और अपने मन की शुद्धि के लिये उन्होनें 21 दिन का उपवास भी रखा। सांप्रदायिक दंगों के कारणों की समीक्षा करते हुए गाँधीजी ने इस बात पर बल दिया कि इस समस्या का हल हिन्दुओं और मुसलमानों के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाकर मानसिक क्रांति के जरिये ही हो सकता है। उनका मानना था कि बल प्रयोग अथवा हिंसा द्वारा इन समस्याओं को नहीं सुलझाया जा सकता है। इनका समाधान तभी संभव है, जब हिन्दू और मुसलमान दोनों ही स्वेच्छापूर्वक सही दृष्टिकोण अपनाते हुए एक–दूसरे के धर्मो का आदर करे तथा ऐसा कुछ भी न करें जिससे दूसरे पक्षों की भावनाओं को ठेस पहुंचती हो।

खिलाफत और असहयोग आंदोलन की समाप्ति के बाद हिन्दू–मुस्लिम सामंजस्य में निरंतर कमी आती गई और आपसी तनावों की तीव्रता बढ़ती चली गई। गाँधीजी ने इन दोनों समुदायों में पनपते तनावो के कारणों का पता लगाया और उसके उपायों की सिफारिश की। जातियों के आधार पर दी गई नौकरियाँ, शुद्धि आंदोलन, अहिंसा में अनास्था, धर्म के प्रति संकीर्णता, हिन्दुओं की कायरता, मुसलमानों की सीनाजोरी, सांप्रदायिक कट्टरपंथियों तथा धार्मिक नेताओं की संकुचित सोच। गाँधीजी के विचार से इस तनाव के ये ही प्रमुख कारण थे। इनके निवारण के लिये गाँधीजी ने सामाजिक न्याय, परस्पर सहिष्णुता, सर्वधर्म समभाव, मानसिक क्रांति, सार्वजनिक जीवन में प्रचलित प्रथाओं का समादर, अहिंसा और जाँच आयोग के जरिये ये गुत्थियाँ सुलझाने की सिफारिश की। गाँधीजी ने निम्न अहिंसात्मक एवं मानसिक उपायों का सहारा हिन्दू–मुस्लिम सामंजस्य बनाने हेतु अपने सुझाव स्वरूप प्रस्तुत किया –

1. धर्म के प्रति सही दृष्टिकोण आवश्यक है –

गाँधीजी के अनुसार हिन्दू–मुस्लिम तनाव का प्रमुख कारण दोनों ही वर्गो मे धार्मिक संकीर्णता का होना है। इसके निराकरण के लिये धर्म का आधार प्रेम

होना चाहिए न कि घृणा, धर्म नैतिकता के रूप में पवित्रता प्रदान करने वाला होना चाहिए, धर्म में उदात्त गुणों यथा– क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, द्वैष आदि का समावेश न हो। धर्म एक नीति के रूप में हो जिससे मनुष्य जीवन का प्रत्येक क्षैत्र प्रभावित हो। धर्मान्तरण का विरोध किया जाए, इसके स्थान पर सर्वधर्म समभाव पर बल दिया जाए। धर्म को सदाचार के रूप में ग्रहण किया जाये न कि दुराचार के रूप में, धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद को बल दिया जाये, धर्म को व्यावहारिकता में लाना चाहिए यही व्यावहारिकता रामराज्य का सपना साकार करेगी। मानव सेवा सर्वोत्कृष्ट धर्म माना जाना चाहिए।

2. धार्मिक एकता के प्रयास –

गाँधीजी ने धर्म को व्यापक रूप में देखा है। उन्होनें कहा है, हिन्दू–मुस्लिम एकता का अर्थ केवल हिन्दूओ और मुसलमानों के बीच एकता नहीं है, बल्कि उन सब लोगों के बीच एकता है जो भारत को अपना घर समझते है, भले ही उनका धर्म चाहे जो हो।[85] सभी धर्म सत्य के प्रतीक है क्योंकि सभी किसी न किसी रूप में ईश्वर को ही अपना संरक्षक मानते है। सभी धर्म श्रेष्ठता लिये हुए है। सर्वधर्म समभाव एवं धार्मिक एकता के प्रयास आवश्यक है।

3. सांप्रदायिकता के विरूद्ध संघर्ष आवश्यक है –

सांप्रदायिक अव्यवस्था एक बहुमुखी राक्षस है। यह उसके लिये जिम्मेदार लोगों सहित अन्ततः सभी को क्षति पहुंचाता है। यदि एक पक्ष जवाबी कार्यवाही बंद कर दे तो उपद्रव जारी नहीं रह सकता है। गलत काम करने वाले व्यक्ति के सहधर्मियों या रिश्तेदारों से बदला लेना कायरतापूर्ण कृत्य है।[86] इस विकट स्थिति के निराकरण के लिए सौजन्यपूर्ण संबंधों पर बल दिया जाना चाहिए, सभी धर्मावलम्बियों में समान आदर भाव होना चाहिए, नागरिकों को हथियारों के बजाय मनोधैर्य धारण करना चाहिए, भाषायी एकता, पारस्परिक मन मस्तिष्क में परिवर्तन, त्रुटिपूर्ण धार्मिक शिक्षा पर रोक, प्रशासन एवं सरकारी सेवा में नियुक्ति का आधार योग्यता होना चाहिए, न कि धर्म विशेष। नागरिकता की दृष्टि से

राष्ट्र का प्रत्येक नागरिक समकक्ष होना चाहिए, धार्मिक सहिष्णुता एवं पारस्परिक मध्यस्थता की स्थिति बनी रहनी आवश्यक है।

इस प्रकार गाँधीजी जीवनभर अहिंसक तरीके से हिन्दू–मुस्लिम सामंजस्य तथा एकता के लिये प्रयासरत रहे। हिन्दू–मुस्लिम एकता को उन्होनें देश–हित के लिए सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों रूपों में अतिआवश्यक समझा और जीवनपर्यन्त इसी कार्य में लगे रहे।

अहिंसा : अंतर्राष्ट्रीय आयाम के रूप में

वर्तमान विश्व के विभिन्न भागों में जो भीषण हिंसा का साम्राज्य है, उसके निराकरण में अहिंसा एक कारगर आयाम सिद्ध हो सकती है। बात चाहे मानवीय वातावरण के निर्माण की हो या जैविक अथवा पर्यावरणीय घटकों की सुरक्षा का गाँधीजी का अहिंसात्मक चिंतन विश्व की लगभग सभी समस्याओं के निराकरण के अहिंसात्मक उपाय सुझाता है। वर्तमान विश्व के समक्ष आतंकवाद एवं हिंसा का दंश विभिन्न स्तरों पर हमें दिखाई देता है चाहे वह स्थानीय स्तर हो, राष्ट्रीय स्तर हो या फिर अंतर्राष्ट्रीय स्तर। विश्व का लगभग प्रत्येक राष्ट्र आंतरिक एवं बाह्य रूप से किसी न किसी आतंकवादी संगठन का शिकार बना हुआ है। इस समस्या के निदान के लिये विश्व के राष्ट्रों को अहिंसात्मक कदम बढ़ाना होगा। स्वयं आतंकवादी संगठन इस दिशा में पहल करे ऐसा हम सोच भी नहीं सकते।

गाँधीजी की राय में जब तक बड़े राष्ट्र निःशस्त्रीकरण करने का साहसपूर्वक निर्णय नहीं करेंगे, तब तक शांति नहीं स्थापित हो सकती। उन्होनें कहा, ''मैरे हृदय में तो आधी सदी के निरंतर अनुभव और प्रयोग के बाद पहले कभी ऐसा विश्वास नहीं हुआ जैसा कि आज है कि केवल अहिंसा में ही मानव जाति का उद्धार निहित है। बाइबिल की शिक्षा भी यही है।''[87] अगर सचमुच आजादी और जनता को बचाना है, तो वह सिर्फ अहिंसात्मक प्रतिरोध से ही, जो कि हिंसात्मक प्रतिरोध से कहीं ज्यादा गौरवपूर्ण एवं संभव है।

गाँधीजी ने दुनिया के प्रत्येक आक्रांत से अपील एवं प्रार्थना की कि वह राष्ट्रों के परस्पर ताल्लुकात एवं दूसरे मामलों का फैसला करने के लिए युद्ध का मार्ग छोड़कर अहिंसा का मार्ग स्वीकार करें। युद्ध बंद किये जाए। इसलिये नहीं कि लोग लड़ने से थक गये, बल्कि इसलिये कि युद्ध दरअसल बुरी चीज है।

गाँधीजी का विश्वास एवं अनुभव था कि दुनिया के सभी शोषित, पीड़ित और दबाये हुए लोगों की और इसलिये संपूर्ण विश्व की मुक्ति उस सिक्के पर ही पूरी तरह निर्भर करती है, जिसके एक तरफ सत्य और दूसरी तरफ अहिंसा लिखा है। जैसै कोई रासायनिक मिश्रण तमाम आवश्यक पदार्थों के बिना नहीं बन सकता, उसी तरह शांति स्थापना के लिये भी यदि जरूरी शर्तो का पालन न किया जाये तो वह असाध्य ही है। विनाशकारी हथियारों पर काबू रखने वाले मनुष्य जाति के मान्य नेता, ज्ञानपूर्वक इन अस्त्र–शस्त्रों का उपयोग करना अगर पूर्णतया छोड़ दे, तो स्थायी शांति की स्थापना हो सकती है।

गाँधीजी के अनुसार, पूर्ण अहिंसा चंद लोगों के लिए नहीं है। यह समस्त मानव जाति के लिए है। अहिंसा के पालन में हमें जो विफलताएँ देखने को मिलती है वे वास्तव में इस सिद्धांत की नहीं, बल्कि इसका अनुसरण करने वाले उन लोगों की विफलताएँ है, जिनमें बहुतों को तो इसका भी भान नहीं होता कि वे चाहे–अनचाहे इस सिद्धांत के अधीन है।[88]

गाँधीजी ने कहा था अहिंसा के माध्यम से एक न्यायसम्मत अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था का निर्वाह किया जा सकता है। उनका मत था अहिंसा से किसी भी अंतर्राष्ट्रीय समस्या का समाधान संभव है। यदि राष्ट्र अपने मतभेदों व संघर्ष का समाधान अहिंसा द्वारा करे तो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर न्याय की व्यवस्था की जा सकती है। युद्ध व आक्रमण हिंसा के सिद्धांतों का स्वाभाविक परिणाम है। विश्व में युद्धों की निरर्थकता सिद्ध हो चुकी है। युद्धों से किसी समस्या का समाधान नहीं होता, वरन् समस्याएँ बढ़ जाती है तथा और भी जटिल बन जाती है। युद्ध एवं हिंसा द्वारा बड़े राष्ट्र छोटे राष्ट्रों का शोषण करते है। यह भौतिक बल की

श्रेष्ठता का ही पर्याय है। युद्ध का समर्थन पशुबल का समर्थन है। युद्ध के दौरान सज्जन व सद्गुणी व्यक्ति भी हिंसक व पशुवत् बन जाता है। युद्ध नैतिकता की अवहेलना करता है। अतः अहिंसा एक अंतर्राष्ट्रीय आयाम का पर्याय है।

*****

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. हरिजन, जून 21, 1940, पृष्ठ 140
2. दत्त धीरेन्द्र मोहन, ''महात्मा गाँधी का दर्शन'', बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1973, पृष्ठ 69
3. यंग इंडिया, मई 14, 1919, 'कम्युनल यूनिटी' में उद्धृत, पृष्ठ 985
4. हरिजन, अक्टूबर 7, 1939, पृष्ठ 296
5. अहिंसा विकीपीडिया
6. सिंह रामजी, ''गाँधी दर्शन मीमांसा'', बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1973, पृष्ठ 80
7. श्रीवास्तव प्रतिभा, ''श्री अरविन्द और महात्मा गाँधी के दर्शन का समीक्षात्मक अध्ययन'', क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नईदिल्ली, 1993, पृष्ठ 159
8. त्रिपाठी शंभूरत्न, ''गाँधी धर्म और समाज'', पृष्ठ 37
9. बहरवाल मनोज कुमार, ''भारतीय राजनीतिक चिन्तक'', हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर, 2014, पृष्ठ 394
10. हरिजन, मार्च 14, 1939, पृष्ठ 39
11. नारायण डॉ. इकबाल, ''आधुनिक राजनीतिक विचारधाराएँ'', ग्रंथ विकास, जयपुर, 2005, पृष्ठ 411
12. जैन माणक, ''गाँधीजी के विचारों की 21वी सदी में प्रासंगिकता'', आदि पब्लिकेशन, जयपुर, 2010, पृष्ठ 4
13. वही, पृष्ठ 5
14. आढ़ा डॉ. आर. एस., ''हमारे युग प्रवर्तक महापुरूष'', शिव बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ 115
15. धवन गोपीनाथ, ''सर्वोदय तत्व दर्शन'', नवजीवन प्रकाशन मण्डल, इलाहबाद, 1951, पृष्ठ 74

16. यंग इंडिया, सितंबर 16, 1926
17. हरिजन, मई 5, 1946
18. दत्त धीरेन्द्र मोहन, ''महात्मा गाँधी का दर्शन'', बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1973, पृष्ठ 60
19. यंग इंडिया, अगस्त 10, 1927
20. प्रधान आर. के., राव यू. आर., ''द माइंड ऑफ महात्मा कॉम्पाइल्ड'', 1945, पृष्ठ 228
21. हॉरेस अलेक्जेंडर, ''गाँधी थ्रो वेस्टर्न आई'', 1969, पृष्ठ 182
22. त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', विश्व भारती पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2013, पृष्ठ 392
23. वही, पृष्ठ 393
24. यंग इंडिया, दिसंबर 18, 1924
25. वही, जून 16, 1926
26. हरिजन, अगस्त 4, 1946, पृष्ठ 249
27. भाटिया डॉ. शोभा, शर्मा डॉ. अर्पणा, ''गाँधी वाणी'', पारीक बुक डिपो, 2010, पृष्ठ 58
28. गंगल एस. सी., ''दी गाँधीयन वे टू वर्ल्ड पीस'', वोरा एण्ड कंपनी बम्बई, 1960, पृष्ठ 74
29. ढेबर यू. एन., ''गाँधी–ए प्रैक्टिकल आइडियोलोजिस्ट'', भारतीय विद्या भवन, बम्बई, 1964, पृष्ठ 12
30. जैन माणक, ''गाँधीजी के विचारों की 21वी सदी में प्रासंगिकता'', आदि पब्लिकेशन, जयपुर, 2010, पृष्ठ 11
31. गुप्त विश्वप्रकाश, गुप्त मोहिनी, ''महात्मा गाँधी–व्यक्तित्व और विचार'', राधा पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 1996, पृष्ठ 116
32. वही, पृष्ठ 116

33. श्रीवास्तव प्रतिभा, ''श्री अरविन्द और महात्मा गाँधी के दर्शन का समीक्षात्मक अध्ययन'', क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नईदिल्ली, 1993, पृष्ठ 180
34. यंग इंडिया, अक्टूबर 8, 1925, पृष्ठ 346
35. यंग इंडिया, मई 6, 1926, पृष्ठ 164
36. हरिजन, जुलाई 20, 1935, पृष्ठ 181
37. हरिजन, नवंबर 19, 1938, पृष्ठ 342
38. भाटिया डॉ. शोभा, शर्मा डॉ. अर्पणा, ''गाँधी वाणी'', पारीक बुक डिपो, 2010, पृष्ठ 39
39. हरिजन, मई 6, 1939, पृष्ठ 113
40. हरिजन, मई 13, 1939, पृष्ठ 121
41. हरिजन, जून 1, 1947, पृष्ठ 172
42. महात्मा गाँधी, ''सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा'', नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1969, पृष्ठ 203
43. यंग इंडिया, सितंबर 24, 1925, पृष्ठ 286
44. हरिजन सेवक, फरवरी 10, 1946, पृष्ठ 37
45. हरिजन, जनवरी 28, 1939, पृष्ठ 442
46. हरिजन, नवंबर 12, 1938, पृष्ठ 328
47. हरिजन, जनवरी 28, 1939, पृष्ठ 443
48. हरिजन, सितंबर 8, 1946, पृष्ठ 246
49. रत्तू डॉ. कृष्ण कुमार, ''गाँधी दर्शन'',बुक एनक्लेव, जयपुर, 2002, पृष्ठ 40
50. वही
51. हरिजन, जनवरी 7, 1939, पृष्ठ 417
52. वर्मा डॉ. एस. एल., मिश्रा डॉ. मधु, ''महात्मा गाँधी एवं धर्मनिरपेक्षता'', राजस्थान हिन्दी ग्रथ अकादमी, जयपुर, 1999, पृष्ठ 81
53. हरिजन, नवंबर 12, 1938, पृष्ठ 328

54. कोठारी रजनी, ''पॉलिटिक्स एण्ड द पीपुल'', अजंता पब्लिकेशन, दिल्ली, 1989, पृष्ठ 493
55. वर्मा डॉ. एस. एल., मिश्रा डॉ. मधु, ''महात्मा गाँधी एवं धर्मनिरपेक्षता'', राजस्थान हिन्दी ग्रथ अकादमी, जयपुर, 1999, पृष्ठ 81
56. जैन माणक, ''गाँधीजी के विचारों की 21वी सदी में प्रासंगिकता'', आदि पब्लिकेशन, जयपुर, 2010, पृष्ठ 34
57. हरिजन, मई 12, 1946, पृष्ठ 128
58. दी मॉडर्न रिव्यू, कलकत्ता, अक्टूबर, 1935, पृष्ठ 412
59. हरिजन, सितंबर 1, 1940, पृष्ठ 265
60. यंग इंडिया, नवंबर 1, 1947, पृष्ठ 395
61. त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', विश्व भारती पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2013, पृष्ठ 396
62. वही, पृष्ठ 396–397
63. राँची एक्सप्रेस, ऑनलाईन पत्रिका, अक्टूबर 2, 2014
64. श्रीवास्तव प्रतिभा, ''श्री अरविन्द और महात्मा गाँधी के दर्शन का समीक्षात्मक अध्ययन'', क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नईदिल्ली, 1993, पृष्ठ 169
65. हरिजन, सितंबर 8, 1946, पृष्ठ 296
66. हरिजन सेवक, अप्रेल 20, 1940, पृष्ठ 82
67. चाँदी के. के., ''धर्मयुद्ध और अहिंसा'' (लेख), गाँधीमार्ग मार्च, 1986, गाँधी शांति प्रतिष्ठान, दिल्ली, पृष्ठ 16
68. हरिजन, अप्रेल 15, 1939, पृष्ठ 90
69. वही, मार्च 30, 1947, पृष्ठ 86
70. वही, जून 1, 1947, पृष्ठ 174
71. वही, दिसंबर 7, 1947, पृष्ठ 453
72. वही, अप्रेल 21, 1946, पृष्ठ 95

73. वही, अक्टूबर 15, 1938, पृष्ठ 290
74. वही, जुलाई 20,1947, पृष्ठ 243
75. वही, जुलाई 27, 1947, पृष्ठ 251
76. वही, अगस्त 31, 1947, पृष्ठ 302
77. वही, फरवरी 1, 1948, पृष्ठ 6
78. वही, जून 9, 1946, पृष्ठ 172
79. वही, पृष्ठ 174
80. यंग इंडिया, मई 29,1924, पृष्ठ 176
81. हरिजन, अक्टूबर 22, 1938, पृष्ठ 298
82. डॉ. नागर पुरूषोत्तम, ''आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिंतन'', राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1997, पृष्ठ 357
83. वर्मा विश्वनाथ प्रसाद, ''आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन'', लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, पृष्ठ 277
84. गाँधी एम. के., ''मेरे सपनों का भारत'', नवजीवन प्रकाशन मण्डल, इलाहबाद, 1960, पृष्ठ 261
85. यंग इंडिया, मई 11, 1921, पृष्ठ 148
86. हरिजन, नवंबर 17, 1946, पृष्ठ 408
87. हरिजन सेवक, जनवरी 14, 1939
88. राव मोहन, यू.एस., ''महात्मा गाँधी का संदेश'', सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नईदिल्ली, 1969, पृष्ठ 29

*****

पंचम अध्याय

गाँधीजी के सत्य–अहिंसा संबंधी विचारों का अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव एवं व्यापकता

पंचम अध्याय

गाँधीजी के सत्य–अहिंसा संबंधी विचारों का अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव एवं व्यापकता

गौतम बुद्ध के बाद यदि किसी भारतीय ने विश्व के चिंतन को प्रभावित किया है तो उसका नाम है मोहनदास करमचंद गाँधी। जहाँ गौतम बुद्ध के दर्शन और चिन्तन का प्रभाव एशिया महाद्वीप के देशों तक सीमित था, वही महात्मा गाँधी ने दुनिया के सभी महाद्वीपों को प्रभावित किया। गाँधीजी के विचारों ने एशिया के अलावा अफ्रीका, यूरोप और अमरीका को भी प्रभावित किया। भारतीय देशभक्तों का उद्देश्य राष्ट्रीय स्वाधीनता प्राप्त करना था। गाँधीजी इसका अपवाद नहीं थे। किन्तु, अन्य समकालीन देशभक्तों के विपरीत गाँधीजी मानवतावादी अधिक थे। अतः विश्व का कल्याण उनकी दृष्टि में कम महत्वपूर्ण नहीं है।

एक फ्रांसीसी पत्र में उन्होनें कहा था, ''मेरा राष्ट्रवाद उत्कट अंतर्राष्ट्रीयता वाद है।'' दिल्ली में 1963 में हुई गाँधीजी संबंधी एक विचार गोष्ठी मे भाग लेने वाले एक प्रसिद्ध व्यक्ति **डॉ. राल्फ बंच ने कहा था कि,** यदि महात्मा गाँधी के प्रयत्नों का मुख्य केंद्र भारत था, तथापि वह सच्चे अंतर्राष्ट्रीय व्यक्ति थे। उन्होनें एक बार कहा था, ''मेरा उद्देश्य मात्र भारतीयों की दशा सुधारना नहीं है। मेरा उद्देश्य मात्र भारतीय स्वतंत्रता ही नहीं है, यद्यपि आज वास्तव में मेरा सम्पूर्ण जीवन और समय इसी में लगा हुआ है, किन्तु भारतीय स्वतंत्रता की प्राप्ति के माध्यम से ही मैं मानवीय भाईचारे के उद्देश्य के लिए प्रयत्नशील होकर उसे प्राप्त करूंगा।'' वे अनुभव करते थे कि एक नयी अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था तैयार होने में समय लगेगा। इसके लिये आवश्यक है कि शस्त्रों को तिलांजलि दी जाये। यदि यह कार्य प्रसन्नतापूर्वक संपन्न हो जाए तो, अहिंसा का स्तर इतना ऊँचा होगा कि इसे विश्वजनीन आदर प्राप्त होगा।

उसके निर्णय अर्थपूर्ण होंगे निश्चय दृढ़ होंगे, वीरतापूर्ण आत्मत्याग की उसकी क्षमता महान् होगी और वह राष्ट्र दूसरों के लिये उतने ही अंशो में जीना चाहेगा, जितना अपने लिए।[1]

गाँधीजी ने अपने जीवन और राजनीति के माध्यम से आधुनिक सभ्यता के सभी बड़े सवालों का समाधान सत्याग्रह में तलाशा। वह सत्याग्रह आज भी कई आंदोलनों–अभियानों का अस्त्र बना हुआ है। विश्व के कई महापुरूषों ने गाँधीजी से प्रभावित होकर उनके सत्य–अहिंसा से जुड़े मार्ग पर चलकर बड़ी–बड़ी क्रांतियों को अंजाम दिया एवं विश्व स्तर पर उनके विचारों की व्यापकता सिद्ध की।

अमेरिका में गाँधी चिन्तन की व्यापकता

मार्टिन लूथर किंग जूनियर

वॉशिंगटन के लिंकन मेमोरियल के मंच से मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने एक सपनें की नींव रखी थी। उन्होनें कहा था– ''एक दिन ऐसा आएगा जब एक काला बच्चा एक गोरे बच्चे के हाथ में हाथ डालकर एक ही बस में, एक ही स्कूल में, एक ही छत के नीचे बैठेगा।'' इस सपने को पूरा करने के लिये उन्होनें गाँधी के रास्ते को चुना और उसी पर चलते रहे। वे मानते थे कि गाँधी के लिये प्रेम सामाजिक और सामूहिक परिवर्तन का एक साधन था। किंग जूनियर ने लिखा है, ''गाँधी ने प्रेम और अहिंसा पर जो जोर दिया था, उससे मैंने सामाजिक बदलाव का तरीका खोजा।'' यह बात दूसरी है कि किंग जूनियर ने जो सपना देखा था, वह अभी अधूरा है। ठीक उसी तरह, जैसै कि भारत गाँधी की कल्पना का देश नहीं बन पाया है।[2]

अमेरिका में प्रतिवर्ष जनवरी माह का तीसरा सोमवार ''मार्टिन लूथर किंग दिवस'' के रूप में मनाया जाता है, जो इनके जन्म दिवस 15 जनवरी के आस–पास आता है। वर्तमान में भी विश्व विभिन्न प्रकार के संघर्षो, हिंसा, भेदभाव व असमानता से त्रस्त है। ऐसे में किंग ने अपने अहिंसा के सिद्धांतों व

आध्यात्मिक शिक्षाओं का प्रयोग कर अमेरिका में सफलतापूर्वक नागरिक अधिकार आंदोलन चलाया था।

अमेरिका में अश्वेतों द्वारा निष्पक्षता, समानता और गरिमा की मांग को लेकर किया गया लम्बा संघर्ष वास्तव में उल्लेखनीय है। वह यह दिखाता है कि किस प्रकार से दुनिया के सुस्थापित लोकतंत्रों में भी लोगों को अपने अधिकारों के लिये लड़ना पड़ता है। अमेरिका 4 जुलाई 1776 को ब्रिटिश दासता से मुक्त हुआ था। लेकिन अश्वेतों को इसके भी 90 वर्ष बाद ही दासत्व से मुक्ति प्राप्त हुई व कई नागरिक अधिकारों के लिये तो इन्हें अगले 90 वर्षो तक और इंतजार करना पड़ा।

अफ्रीकन दास पहली बार सन् 1619 में उत्तरी अमेरिका लाये गये। दास प्रथा का अंत 1865 में जाकर हुआ जब 1863 में राष्ट्रपति लिंकन ने मुक्ति उद्घोषणा जारी की। अगले कुछ वर्षो में इन्हें अमेरिका की नागरिकता व मतदान के अधिकार मिले। वर्ष 1866 के सिविल राइट एक्ट ने अमेरिकन अश्वेतों को सार्वजनिक सुविधाओं की बिना किसी भेदभाव के प्रयोग की अनुमति दी। हालांकि सन् 1875 में अमेरिकन सुप्रीम कोर्ट ने इस कानून को निरस्त घोषित कर दिया। इसके बाद अपने बहुत से अधिकारों की पुनः प्राप्ति के लिये अफ्रीकी अमेरिकीयों को एक सदी का लंबा इंतजार करना पड़ा, जब मार्टिन लूथर किंग व उनके नागरिक अधिकार आंदोलन ने इस लक्ष्य की प्राप्ति में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

नस्लीय भेदभाव के निजी अनुभवों, एक धार्मिक उपदेशक के रूप में उनकी शिक्षा–दीक्षा, महात्मा गाँधी व जीसस क्राइस्ट के जीवन से ली गयी प्रेरणा ने मार्टिन लूथर किंग को एक असाधारण वक्तव्य कला से युक्त महान् जननेता के रूप में स्थापित किया जिसके फलस्वरूप वे अश्वेत समुदाय के अधिकारो के लिये लड़े और अन्ततः 1964 में सिविल राइट एक्ट पारित हुआ। मार्टिन लूथर किंग ने महात्मा गाँधी को ईसा मसीह से जोड़ा था। उन्होनें कहा था कि, ईसा मसीह ने हमें लक्ष्य दिखाए है लेकिन उन लक्ष्यों तक पहुंचने का

मार्ग गाँधीजी ने सुझाया है। किंग ने सामाजिक सुधार लाने के लिये अहिंसा के सिद्धांतो व आध्यात्मिक मूल्यों का सहारा लिया व इनके प्रायोगिक अमल पर बल दिया। अपने नागरिक अधिकार आंदोलन में अहिंसा को हथियार बनाने के लिये इन्होनें 1957 में एक माह के लिये भारत का दौरा भी किया व अहिंसक आंदोलन की बारीकियाँ सीखी। किंग ने अपने आंदोलन में सत्याग्रही तकनीकों यथा उपवास, धरना, बहिष्कार आदि का प्रयोग किया।[3]

मोंटगोमरी में मार्टिन लूथर किंग का अहिंसक प्रतिरोध

युवा धर्मोपदेशक किंग के पास एक बंदूक थी। लेकिन जल्द ही उन्होनें बंदूक से छुटकारा पा लिया था। इसके बारे में उन्होनें बताया था कि, ''अपने पास हथियार रखना आत्मरक्षा के प्रयास को नहीं जतलाता था, बल्कि इससे आध्यात्मिक क्षति का खतरा बना हुआ था।'' उन्होनें कहा था कि, ''हर आदमी के पास कोई ऐसा मकसद होना चाहिए, जिसके लिये वह जान दे सके जिसके पास जान देने लायक कोई मकसद नहीं है, उसे जीने का भी हक नहीं है।'' यही उनके जीवन का सूत्र था।[4]

अमेरिका में नस्लभेद आंदोलन की शुरूआत मोंटगोमरी में रंगभेद के बहिष्कार आंदोलन से शुरू हुई। मोंटगोमरी में सिटीबसों के ड्राइवर अश्वेत यात्रियों के साथ दुर्व्यवहार करते आ रहे थे। मोंटगोमरी की एक लोकल बस में रोजा पार्क्स नामक महिला ने थकान की वजह से ड्राइवर की बात मानने से इंकार कर दिया था। परिणामस्वरूप उसे गिरफ्तार कर लिया गया। इस भेदभाव से लड़ने के लिये अश्वेत समुदाय ने बसों के बहिष्कार का निर्णय लिया। किंग व अन्य सामाजिक नेताओं के मार्गदर्शन से यह बहिष्कार 381 दिनों तक चला। अंत में अमेरिकी अश्वेतों के इस अहिंसक आंदोलन की विजय हुई। सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया कि बसों में नस्ल के आधार पर यह पृथक्करण असंवैधानिक है।[5]

नागरिक अधिकारों के लिये संघर्ष

जब मोंटगोमरी के अश्वेत नागरिकों को अपमान और दुर्व्यवहार के बिना सिटी बसों में यात्रा करने का अधिकार मिल गया, उसके कुछ दिनों बाद 10 जनवरी 1957 को किंग अटलांटा पहँचे। एबेनेजर बैपटिस्ट चर्च में कई अश्वेत नेताओं के साथ किंग की मुलाकात हुई, जहाँ 'बस बहिष्कार आंदोलन' की सफलता से अश्वेत आबादी में पैदा हुई जागरूकता को ध्यान में रखते हुए परिवर्तन की लड़ाई जारी रखने के लिए एक संगठन बनाने की योजना पर विचार किया गया। एक ओर एन.ए.ए.सी.पी. जैसा संगठन था, जो कानूनी लड़ाई लड़ने, मतदाताओं का पंजीयन अभियान चलाने और अन्य संवैधानिक अधिकार हासिल करने के लिये प्रयत्न कर रहा था। दूसरी ओर किंग ऐसा संगठन बनाना चाहते थे, जिसके जरिये जमीनी स्तर पर प्रतिरोध आंदोलन चलाया जा सके एवं मोंटगोमरी में आजमाए जा चुके अहिंसक प्रतिरोध के हथियार का आगे भी प्रयोग कर सके। अगली बैठक में न्यू आर्लिएंस में साउथर्न क्रिश्चियन लीडरशिप कांफ्रेंस (एस.सी.एल.सी.) नामक संगठन की स्थापना की गई और मार्टिन लूथर किंग को उसका प्रथम अध्यक्ष चुना गया।[6]

मोंटगोमरी अभियान के बाद किंग ने अगले 12 वर्षो तक अश्वेतों के नागरिक अधिकारों के लिये कई आंदोलनों का सफलतापूर्वक नेतृत्व किया। इनका यह संघर्ष 1968 में इनकी हत्या होने तक जारी था। मार्टिन लूथर अश्वेतों को मतदान का अधिकार न होने, स्कूलों में उनका श्वेतो से पृथक्करण, सार्वजनिक सुविधाओं के प्रयोग की अनुमति ना होने, रोजगार व नौकरियों में असमानता व गरीबी के खिलाफ आवाज उठाने वाले प्रमुख व्यक्तित्व थे। गाँधीजी की तरह ही किंग ने भी अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये धार्मिक मूल्यों व अहिंसावादी सिद्धांतो का सहारा लिया। उनकी आवाज ने, उनके विचारों ने गोरो की अंतर्रात्मा को जगाने का काम किया। उन्होनें दार्शनिक अंदाज में कहा था, ''अगर अंतिम रूप से विश्लेषण करें तो श्वेत लोग नीग्रों लोगों का ही एक हिस्सा है व नीग्रों उनका। नीग्रों की पीड़ा श्वेतो के कद को घटा देती है, व

नीग्रों लोगो की आजादी इनका कद बढ़ा देती है।'' किंग ने नस्लीय भेदभाव की लड़ाई को एक नैतिक आयाम दिया जिसने उनके पीड़ित बन्धुओं को सम्मान दिलाया व अत्याचारी गोरो की अंतर्रात्मा को झकझोर कर रख दिया। अपने आध्यात्मिक झुकाव व व्यक्तित्व के माध्यम से व कभी–कभी उदारवादी रूख अपनाकर मार्टिन ने दोनों नस्लों के बीच रिश्ते सुधारनें का प्रयास किया।[7]

1963 नागरिक अधिकार आंदोलन के लिये एक महत्वपूर्ण वर्ष था। अलबामा राज्य का बर्मिंघम शहर अश्वेतों के समानता के लिये संघर्ष का केंद्र बिन्दु बना। इस शहर में दोनों आबादियाँ अलग–अलग रहती थी, मतदाता के अधिकारों का उल्लंघन खुलेआम होता था, नौकरियों में भेदभाव व्याप्त था, अश्वेतो के प्रति भेदभाव, हिंसा व उनका अपमान यहां रोजमर्रा की घटना थे। किंग ने यहां एक सफल नागरिक अधिकार अभियान चलाया। महीनों तक चले इस अभियान को पूरी तरह अहिंसा के सिद्धांतों पर संचालित किया गया था। लेकिन श्वेत पृथक्तावादियों ने अभियान को असफल करने के लिये हिंसा का सहारा लिया। आखिरकार 1963 की गर्मियों के आखिरी दिनों में यह नागरिक अधिकार आंदोलन उस समय अपने चरम पर पहुँचा जब वॉशिंगटन डी सी में 'वॉशिंगटन मार्च' का आयोजन किया गया व यहीं पर किंग ने अपना ऐतिहासिक ''मेरा स्वप्न (आई हेव ए ड्रीम)'' भाषण दिया। सेल्मा शहर किंग की सफलता का एक और उदाहरण है। उनके अभियान स्वरूप, यहां पर प्रशासन द्वारा अश्वेत वोटरों का रजिस्ट्रेशन रोकने के लिये अपनाये जा रहे विभिन्न चालाकीपूर्ण तरीकों को उजागर किया गया।[8]

इन संघर्षो की बदौलत आखिरकार, 1964 में नागरिक अधिकार कानून पारित हुआ व अश्वेतो का मतदान का अधिकार एवं सार्वजनिक स्थानों के उपयोग का अधिकार मिला। रोजगार में इनके साथ हो रहा भेदभाव समाप्त हुआ। इसके साथ ही समान 'रोजगार अवसर आयोग' भी अस्तित्व में आया। 35 वर्ष की उम्र में 1965 में किंग को नोबेल पुरस्कार से नवाजा गया।

अमेरिका के महान् नेता डॉ. मार्टिन लूथर किंग जूनियर सौ प्रतिशत गाँधी के शिष्य थे। महात्मा गाँधी, डॉ. किंग के प्रेरणा पुरूष थे। गाँधीजी के संदेश को समझने और उसे आत्मसात करने के लिये डॉ. किंग ने अपनी पत्नी और कुछ प्रमुख सहयोगियों के साथ भारत की यात्रा की थी। अमेरिका से रवाना होने से पूर्व उन्होनें कहा था कि मैंने अनेक देशों की यात्रा की है पर मैंने इन सभी देशों की यात्रा एक पर्यटक की हैसियत से की थी, परंतु भारत मेरे लिये एक तीर्थ स्थान है। भारत इसलिये तीर्थ है क्योंकि वह महात्मा गाँधी की जन्मभूमि और कर्मभूमि है। इसलिये मैं भारत एक तीर्थ यात्री के रूप में जा रहा हूँ। इतिहास के उन क्षणों को जीने के लिये जिन क्षणों में महात्मा गाँधी ने भारत की आजादी की लड़ाई लड़ी, डॉ. किंग अपने एक सहयोगी के सुझाव के अनुसार 9 फरवरी 1959 को बम्बई पहुँचे। बंबई से वे दिल्ली पहुँचे, जहाँ प्रधानमंत्री जवाहरलाल नैहरू ने उनके सम्मान में एक भोज का आयोजन किया। भारत भ्रमण के दौरान हमारे यहाँ के गरीबों की स्थिति देखकर उनका मन दुःखी हो उठा। उन्हें बताया गया था कि करीब पाँच लाख लोग बारह महीनें बंबई में खुली आसमान के नीचे सड़कों पर सोते है। भारत के लोगों की स्थिति देखकर उन्होनें कहा था यहाँ हालत अफ्रीका से भी बदतर है।[9]

भारत प्रवास के दौरान वे गुजरात में स्थित साबरमती आश्रम गए और वहाँ कुछ दिन बिताए। वे अनुभव करना चाहते थे कि इस स्थान से कैसै गाँधी ने पूरी दुनिया के सबसे बड़े आजादी के आंदोलन का नेतृत्व किया। साबरमती आश्रम के बारे मे उन्होनें लिखा है कि उन्होनें उस स्थान पर एक महान् आध्यात्मिक भावना का अनुभव किया। डॉ. किंग को बताया गया कि कैसै गाँधी ने 322 किमी. की पदयात्रा की थी। गाँधीजी की इस महान् ऐतिहासिक मार्च की चर्चा करते हुए डॉ. किंग ने अपने सहयोगियों को बताया कि गाँधीजी ने मार्च में शामिल अन्य लोगों से कहा था कि, ''यदि तुम्हें पीटा जाता है तो भी पीटने वाले पर हमला न करो। यदि तुम्हारे ऊपर बन्दूक चलाई जाती है तो भी हथियार न उठाओ। यदि वे तुम्हे गाली देते है तो चुपचाप सुनों। इस सबके

बावजूद चलते रहो, हो सकता है मंजिल पर पहुँचने के पहले हम में से कुछ मर जाएं, हम में से अनेकों को जैल भेज दिया जाए। इस सब के बाद भी हम चलते रहे।'' और डॉ. किंग अंत में कहते है कि, गाँधी चलते रहे।[10]

भारत की यात्रा के बाद किंग अनेक गाँधीवादियों से ज्यादा गाँधीवादी बन गये। मानव इतिहास में युद्ध, दासता, उपनिवेशवाद, रंगभेद व अस्पृश्यता की घटनाओं की उपस्थिति मानवीय विरोधाभासों की सूचक है। **डॉ. किंग के शब्दों में,** ''मानव की प्रगति न तो स्वचालित है और न ही अपरिहार्य। न्याय की प्राप्ति की दिशा में बढ़ाया गया हर कदम इस उद्देश्य के लिये समर्पित लोगों से अथक प्रयास, पूर्ण समर्थन, त्याग, दुःख व संघर्ष मांगता है।''

सैली स्लैक

मार्टिन लूथर किंग के पश्चात् विदेशों में गाँधीवादी मूल्यों का प्रसार करने में कमला का कोई सानी नहीं है। इस अमेरिकी महिला का मूल नाम सैली स्लैक था पर गाँधीवादी कार्यो में रमने के बाद वे कमला हो गई है। अभी वे वॉशिंगटन में गाँधी मेमोरियल सेंटर की निदेशिका है। 30 जनवरी 1976 को गाँधी सेंटर का उद्घाटन हुआ, तभी से इसकी निदेशिका की हैसियत से कमला लगभग पचास नियमित कार्यकर्ताओं के एक दल की देखभाल करती है। इसमे तीस आश्रमवासी भी है जो यहाँ की सेवाओं का भार उठाए है। कमला ने पहली बार अमेरिका में ऐसा पत्राचार पाठ्यक्रम शुरू किया, जो महात्मा गाँधी के जीवन और संदेश पर आधारित है। इसके तहत गुजरात विद्यापीठ अहमदाबाद की ओर से प्रमाणपत्र दिया जाता है। हंगरी और जोहांसबर्ग जैसै सुदूर देशों के छात्र भी इस पाठ्यक्रम में शामिल होते रहे है। प्रतिवर्ष गाँधी जयंती और उनकी पुण्यतिथि पर कमला द्वारा दिये जाने वाले अभिभाषण 1976 से न्यूयॉर्क के 'भारतवाणी' रेडियो से प्रसारित किये जाते है। कमला गाँधीजी पर कई किताबें लिख चुकी है और एक त्रैमासिक पत्रिका गाँधी मैसेज निकालती है। भारत की आध्यात्मिक परंपरा के प्रतिनिधित्व में उनके विशिष्ट योगदान की मान्यता के

लिये 'एसोसिएशन ऑफ इंडियंस इन अमेरिका' की ओर से उन्हें भारतीय दर्शन और महात्मा गाँधी के आदर्शो की राजदूत के रूप में सम्मानित किया गया है।

मेरी किंग

अमेरिका की ही नागरिक अधिकारों की असाधारण नेता, लेखिका और राजनीति विज्ञान में पारंगत मेरी किंग को जातिगत समानता और न्याय के लिये मार्टिन लूथर किंग के साथ खड़े होकर संघर्षरत होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। तब वे महज एक छात्रा थी। किंग ने ऊँची शिक्षा हासिल करने के बाद शांति और अहिंसा के सिद्धांतों पर आधारित कई पुस्तकों का लेखन किया और करीब 120 देशों की यात्रा भी की। विभिन्न देशों में चल रहे शांति प्रयासों में भी उन्होनें सक्रिय भागीदारी निभाई। यूनेस्को ने 1999 में किंग की लिखी एक पुस्तक 'महात्मा गाँधी एण्ड मार्टिन लूथर किंग जूनियर : द पावर ऑफ नॉन वायलेंट एक्शन', प्रकाशित की थी। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सराहना प्राप्त इस पुस्तक में दुनियाभर के 20वी शताब्दी के नौ ऐसे समकालीन अहिंसक आंदोलनों का इतिवृत पेश किया गया है, जिन्हें गाँधीवादी सिद्धांतों और कार्यप्रणालियों ने आधार दिया है।[11]

मेरी किंग ने अपनी इस पुस्तक में अहिंसक आंदोलनों को जिस तरह से शब्दांकित किया है, वह लगभग किसी भी देश या किसी भी काल में एक प्रभावशाली राजनीतिक रणनीति के रूप में अहिंसक कार्यवाही की संभावनाओं का ही साक्ष्य प्रस्तुत करती है। साथ ही इस बात की भी पुष्टि करती है कि सैनिक दखल या हिंसा पर आधारित समाधानों के विकल्प के रूप में सीधी अहिंसक कार्यवाही की प्रासंगिकता लगातार बढ़ रही है।

प्रो. अडोल्पो डी ओबिएटा

अर्जेन्टीना गाँधी के रूप में विख्यात प्रो. अडोल्पो डी ओबिएटा ने अपने निजी और सार्वजनिक जीवन में गाँधीवादी मूल्यों और आदर्शो को ईमानदारी और सतत् रूप से अपनाया है। एक निबंधकार, कवि और विचारक के तौर पर ओबिएटा के लेखन में उनकी क्रिश्चियन अहिंसक भावना साफ दिखाई देती है,

जो गाँधीवादी सिद्धांतों की विचारशील उग्रवादिता की भावना है। उन्होनें गाँधी की शिक्षा के अनुरूप जीवन–यापन और उसके प्रसार का प्रयत्न किया है। वे न केवल सत्य–अहिंसा के प्रचारक है बल्कि गाँधीवादी आदर्शो की छवि पर भी खरे उतरते है। यदि अर्जेन्टीना में सत्य, अहिंसा और शांति के सिद्धांतों को आज पहले से अधिक प्रासंगिक माना जाता है और उनके प्रति ज्ञान और प्रशंसा के भाव में वृद्धि हो रही है तो उसका श्रेय ओबिएटा के अथक प्रयत्नों को ही दिया जाता है।

बराक हुसैन ओबामा

महात्मा गाँधी प्रत्येक दौर की सबसे ज्यादा उर्द्धत की जाने वाली ऐतिहासिक हस्तियों में एक है। लेकिन भारत के बाहर बहुत कम लोग उनका उतना उल्लेख करते है, जितना अमेरिकन राष्ट्रपति बराक ओबामा।

बराक ओबामा ने कुछ समय पहले कहा था कि, महात्मा गाँधी जीवन भर उनके प्रेरणा स्रोत बने रहे है। गाँधी का संदेश उन्हें निरंतर इस बात की याद दिलाता रहा है कि जब सामान्य लोग असामान्य कार्य करने के लिये एकजुट होते है तो विश्व में युगान्तकारी बदलाव संभव है। ओबामा के सीनेट कार्यालय में गाँधीजी का चित्र लगा है जो उन्हें हमेशा सच के हक में खड़े होने के लिये प्रेरित करता रहता है, आम आदमी के प्रति अपने दायित्वों का स्मरण कराता रहता है। ओबामा अमेरिका में हुए नागरिक अधिकार आंदोलन के प्रणेता मार्टिन लूथर किंग के विचारों के प्रति भी गहरी आस्था रखते है और यह कोई संयोग नहीं है कि स्वयं किंग का संपूर्ण आंदोलन महात्मा गाँधी के विचारों और अहिंसक तरीकों पर आधारित था। श्वेतो और अश्वेतो को समाज में समान दर्जा दिलवाने के लिये उनका अथक और सफल संघर्ष महात्मा गाँधी के सिद्धांतों की वैश्विक स्तर पर हुई एक ओर महान विजय का प्रतीक है।[12]

भारत की आजादी के बाद गाँधी की परंपरा सबसे पहले अमेरिका में ही बढ़ी, जब गाँधी के भक्त मार्टिन लूथर किंग ने अहिंसा के रास्ते पर चलते हुए

अश्वेत अमेरिकियों को उनका हक दिलवाया। राष्ट्रपति ओबामा उन्हीं किंग से प्रभावित है और गाँधी को अपना आदर्श मानते है।

ओबामा का गाँधी प्रेम भारत दौरे पर भी दिखाई दिया था। दिल्ली की जवाहरलाल नैहरू यूनिवर्सिटी में अमरीकी शास्त्र के प्रो. चिंतामणि महापात्रा कहते है, ''जब ओबामा भारत आये, उन्होनें मुम्बई के गाँधी म्यूजियम में 45 मिनट बिताये। किसी अमेरीकी राष्ट्रपति का 45 मिनट वहाँ रहना मायने रखता है। उन्होनें दिल्ली के राजघाट पर भी 20 मिनट का समय बिताया और कहा कि अगर गाँधी नहीं होते तो शायद वह आज यहाँ खड़े न होते।''

भारत दौरे पर ओबामा ने भी गाँधी भक्ति की तस्दीक की, ''मेरे और मिशेल के लिये इस दौरे के खास मायने है। मेरे पूरे जीवन में यहाँ तक कि शहरी गरीबों के लिये काम करते हुए भी मैनें हमेशा गाँधीजी के जीवन से प्रेरणा ली है। उनके सादे लेकिन गूढ़ सबक से दुनिया को बदला जा सकता है।'' अमेरिका में गाँधीयन स्टडीज पढ़ाने वाले **प्रो. माइकल नागलर बताते है,** ''अमेरिका सहित दुनियाभर में अहिंसा के लिये काम किया जा रहा है। अमेरिका में अहिंसा को बढ़ावा देने के लिये मेटा संस्था चला रहे है।''

अमेरिकन राष्ट्रपति ने न्यूयॉर्क में संयुक्त राष्ट्र की आम सभा को संबोधित करते हुए उल्लेख किया था कि, ''यह वक्त गाँधी के वचनों पर ध्यान देने का है। असहिष्णुता एक प्रकार की हिंसा है और सच्ची लोकतांत्रिक भावना के विकास में बाधा। हमे एक साथ, उस विश्व की रचना के लिये काम करना चाहिए जहाँ मतभेद हमें शक्ति दे, वे हमें परिभाषित नहीं करे।'' यह बात उन्होनें इस्लाम विरोधी विडियो, जिसने मुस्लिम जगत में हिंसा भड़काई के संदर्भ में और सहिष्णु व्यवहार पर जोर देते हुए कही।[13]

ओबामा के भारत दौरे में गाँधी पुनरावृत्ति का विषय थे। एक ऐसे दौरे में जिसमें विशिष्ट तौर पर गाँधीवादी झलक भी नहीं थी, क्योंकि यह दौरा मुख्य रूप से रक्षा और कारोबारी डील पर केंद्रित था, राष्ट्रपति ने गाँधी के मुम्बई स्थित आवास और दिल्ली में उनकी समाधि पर श्रद्धांजलि अर्पित की और

भारतीय संसद को संबोधित करते हुए छः बार गाँधी का उल्लेख किया। ओबामा ने गाँधी को अपना शुरूआती, महत्वपूर्ण प्रेरक बताया, मैनें अपने जीवनकाल में, खासकर युवावस्था में शहरी गरीबों के लिये काम करते हुए, हमेशा गाँधीजी और उनके सहज, गहरे सबक 'हममें वो बदलाव होना चाहिए, जिसकी हम विश्व में अपेक्षा करते है', से प्रेरणा पायी।

सन् 2009 में, जब एक छात्र ने ओबामा से पूछा कि, 'जीवित अथवा मृत' किस व्यक्ति के साथ वे रात्रि भोजन करना चाहेंगें ? राष्ट्रपति ने भारत के स्वतंत्रता सैनानी को चुना, ''उनसे मैं काफी प्रेरणा पाता हूँ। उन्होनें डॉ. किंग को प्रभावित किया, लिहाजा अगर भारत में अहिंसक आंदोलन नहीं होता, तब आप कदाचित नागरिक अधिकारों के लिये यू. एस. में ठीक वैसा अहिंसक आंदोलन नहीं देख पाते।[14]

अमेरिका के पहले अफ्रीकन–अमेरिकन राष्ट्रपति के रूप में ओबामा स्वयं को दोनों पुरूषों के संघर्ष के प्रत्यक्ष उत्पाद की तरह देखते है। सन् 2009 में नोबेल पुरस्कार स्वीकारते हुए उन्होनें अपने भाषण में कहा, ''वो शख्स जो यहाँ खड़ा है, डॉ. किंग के जीवनपर्यन्त कार्यो के परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष तौर पर खड़ा है, मैं अहिंसा के नैतिक बल का जीता–जागता प्रमाण हूँ। मैं जानता हूँ कि गाँधी और किंग के पंथ और जीवन में कुछ भी कमजोर, निष्क्रिय, सरलमति नहीं है।''

बराक ओबामा 26 जनवरी 2015 को गणतंत्र दिवस समारोह के मुख्य अतिथि के रूप में भारत की यात्रा पर आये हुए थे। उन्होनें राजघाट जाकर गाँधीजी को श्रद्धांजलि अर्पित की एवं वृक्षारोपण किया। 27 जनवरी को नईदिल्ली में 'टाऊन हॉल' संबोधन में ओबामा ने धार्मिक सहिष्णुता की बात कही और भारत को चेताया कि भारत उस वक्त तक सफल बना रहेगा, जब तक वह धार्मिक आधार पर नहीं बंटता।[15]

अपने भारत दौरे से लौटने के बाद हाई–प्रोफाइल 'नेशनल प्रेयर ब्रेकफास्ट' के दौरान अपनी टिप्पणी में ओबामा ने कहा, ''मिशेल और मैं भारत

से वापस लौटे है..... अतुलनीय, सुंदर देश, भव्य विविधताओं से भरा हुआ, लेकिन वही पिछले कुछ वर्षो में कई मौकों पर दूसरे धर्म के अन्य लोगों ने सभी धर्मो के लोगों को निशाना बनाया है, ऐसा सिर्फ अपनी विरासत और आस्था के कारण हुआ है।[16] अमेरिकी राष्ट्रपति पिछले कुछ वर्षो में देश के विभिन्न धर्मो के लोगों द्वारा एक–दूसरे पर किए गए हमलों का हवाला दे रहे थे। ओबामा ने किसी धर्म विशेष का नाम नहीं लिया और कहा कि हिंसा किसी एक समूह या धर्म से नहीं जुड़ी हुई है। उन्होनें कहा यदि आज गाँधीजी होते तो वे भी देश में सभी धर्मो के बीच व्याप्त असहिष्णुता के कृत्य से स्तब्ध रह जाते। बराक ओबामा के धार्मिक सहिष्णुता संबंधी विचार गाँधीजी के विचारों से सीधे तौर पर प्रभावित है।

चार्ल्स वाकर

गाँधीजी के भक्तों में पेनसिल्वानिया में जन्में चार्ल्स वाकर का नाम भी उल्लेखनीय है। वे छात्र जीवन से ही हिंसा से घृणा करते रहे और द्वितीय विश्व युद्ध के सजग विरोधी भी रहे। वे इस युद्ध के सजग विरोधियों की केंद्रिय समिति के संचालक मण्डल के सदस्य भी रहे। इसके लिये उन्हें जैल भी हुई। इस बीच वाकर ने गाँधीजी के प्रति अपनी आस्था प्रकट की और उनके जीवन और सामाजिक आंदोलनों के तरीकों का गहरा अध्ययन किया। खासतौर पर सविनय अवज्ञा व सत्याग्रह का। वाकर एक गाँधीवादी आंदोलनकारी के रूप में विख्यात है। शांति के प्रयासो, नागरिक अधिकार आंदोलनों और मानवतावादी आशयों के मसलों को लेकर छेड़े गये आंदोलनों में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इन सभी क्षैत्रो में समूह संगठक के रूप में और राजसत्ता के विरोध में छेड़े विभिन्न अभियानों के प्रवर्तक और नेता के रूप में उन्होनें विशेष कुशलता का परिचय दिया। साथ ही वर्तमान संदर्भो में गाँधीजी के महत्व, सविनय अवज्ञा के सिद्धांत और व्यवहार, अहिंसक आंदोलन और सामाजिक परिवर्तन आदि विषयों पर कई पुस्तकें भी लिखी। वे वर्ल्ड पीस ब्रिगेड और पीस ब्रिगेड

इंटरनेशनल के संस्थापक रहे है। दोनों संगठन आज भी विश्वभर में शांति कार्यो में जुटे है।

अफ्रीका में गाँधी चिन्तन की व्यापकता

नेल्सन मंडेला

लगभग एक शताब्दी की अपनी जीवन यात्रा पूर्ण कर अफ्रीका के गाँधी नेल्सन मंडेला 6 दिसंबर 2013 के दिन दुनिया को सदा–सदा के लिये अलविदा कहकर अपनी अनन्त यात्रा पर प्रस्थान कर गये। चमड़ी के रंग से इंसानों में भेद करने वाली अमानवीय व अशोभनीय मान्यताओं के खिलाफ महात्मा गाँधी द्वारा प्रतिपादित अहिंसक रास्तों पर चलकर, अपनी बात मनवाकर, स्थापित क्रूर अमानवीय मान्यताओं के गढ़ ढहा कर, इंसानियत को अपेक्षित स्थान दिलवाने में सफल रहे नेल्सन मंडेला हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी से बहुत प्रभावित थे। उन्हें भी अपने देश में पिता तुल्य माना जाता है। वे 'दि मदिबा' के नाम से विख्यात थे। मदिबा का अर्थ होता है पिता समान। इस प्रकार हम कह सकते है कि जैसै महात्मा गाँधी भारत के राष्ट्रपिता है, वैसै नेल्सन मंडेला दक्षिण अफ्रीका के राष्ट्रपिता है।

गाँधीजी ने अपने अहिंसक आंदोलन का सूत्रपात दक्षिण अफ्रीका से किया था और उनके द्वारा शुरू किए गये तत्आंदोलन को ऊँचाइयो तक पहुँचाने का काम नेल्सन मंडेला ने किया। सच तो यह है कि जो काम महात्मा गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका में शुरू किया, उसे नेल्सन मंडेला ने पूर्ण किया। एक दिन तो वह था, जब रेलगाड़ी में श्वेतो के साथ यात्रा कर रहे बेरिस्टर मोहनदास करमचंद गाँधी को गाड़ी से उतार दिया गया था और एक दिन वह आया जब अश्वेत नेल्सन मंडेला दक्षिण अफ्रीका में लोकतंत्र की स्थापना करने में कामयाब हुए और वहाँ के प्रथम अश्वेत राष्ट्रपति के रूप में शपथ ग्रहण की।[17]

श्वेत–अश्वेत के बीच चल रहे वर्णभेद को मिटाने की बुनियाद उस गाँधी (महात्मा गाँधी) ने रखी जिस पर समता, समानता व वर्गमुक्त समाज की

स्थापना का सुंदर महल इस गाँधी (नेल्सन मंडेला) ने तैयार किया। वे दोनों लोकतंत्र रूपी कुशल वास्तुकार थे जिन्हें अपने–अपने देश में लोकतंत्र का भगवान माना जाता है।

लोकतंत्र के मसीहा

जन्मजात मानवीय अधिकारों के प्रति सचेष्ट मदिबा ने छात्र जीवन में ही रंगभेद का विरोध किया। फलतः उन्हें कॉलेज से निष्कासित होना पड़ा। सहज ही में उन्हें एक ऐसे क्रांतिकारी के रूप में जाना जाता है जिसने अफ्रीका में रंगभेद के खिलाफ जनमानस को एकजुट कर मानवता के कल्याणार्थ पथ प्रशस्त किया, मगर इतना ही नहीं है। वस्तुतः नेल्सन मंडेला नाम रंगभेद के विरूद्ध आवाज मुखर करने वाले क्रांतिकारी अथवा दक्षिण अफ्रीका के प्रथम अश्वेत राष्ट्रपति तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह नाम परिचायक है संसार मे शांति, सहिष्णुता, समानता, समन्वय एवं प्रेम की स्थापना करने के लिये चलाये जा रहे सतत् एवं संगठित प्रयासों का।[18]

जनता के लिये होने वाले शासन में जनता की भागीदारी, बिना किसी प्रकार का रंग, जाति, स्तर के भेद किए सुनिश्चित करने के उनके आह्वान को दक्षिण अफ्रीका के लोगों ने शिरोधार्य किया। इससे बने वातावरण का बहुत सुखद परिणाम दृष्टिगोचर हुआ। अन्ततः जनमानस की विजय हुई। लोकतंत्र के मसीहा नेल्सन मंडेला मानवाधिकारों के हित चिन्तक एवं मानवीय मूल्यों के प्रबल पक्षधर थे। वे अक्सर भावुक होकर कहा करते थे, ''मेरा एक ही सपना है कि सबके लिये शांति हो, काम हो, रोटी हो, पानी हो, नमक हो। जहाँ सबकी आत्माएँ शरीर और मस्तिष्क को समझ सके और एक दूसरे की जरूरतों को पूरा कर सके। ऐसी दुनिया बनाने के लिए अभी हमे मीलों चलना बाकी है। हमें अभी चलना है, चलते रहना है।''[19]

वह सत्ताईस वर्ष की साधना

नेल्सन मंडेला के राष्ट्रपिता बनने के पीछे उनकी लंबी साधना रही है। उन्होनें जो पथ अख्तियार कर लिया, उससे न तो हटने और न ही पीछे देखने

का संकल्प उन्होनें लिया था। शासन के ठेकेदारों ने जुल्म और अत्याचार करने में कोई कसर नहीं रखी मगर यह राष्ट्रभक्त सब सहन करता रहा। वहीं अहिंसक और सविनय निवेदन करने का हमारे गाँधी का तरीका।

उनका संपूर्ण जीवन मुसीबतों एवं चुनौतियों का पर्याय रहा। एक स्वतंत्रता प्रेमी के रूप में अपना सफर प्रारंभ करने के पश्चात् उन्होनें पूरी जवानी जैल में स्वाह कर दी। जैल से मुक्त होकर बाहर आने पर उन्होनें देशवासियों में एकता का मंत्र फूंका और उन्हें अपने हक के प्रति सचेष्ट कर संघर्ष के लिये तैयार किया। उनकी जैल में बंद रहने की अवधि दिनों, महीनों अथवा वर्ष में नहीं गिनी जानी चाहिए। सत्ताईस वर्ष चौथाई सदी से अधिक होते है। इतना लंबा समय उन्होनें जैल में बिताया। वे लोकतंत्र के प्रबल प्रहरी बनकर प्रकट हुए। अपनी साधना के बल पर लोकतंत्र के मसीहा सिद्ध हुए।

वीरता के मायने

नेल्सन मंडेला गाँधीजी के पथ पर चलने वाले वीर योद्धा थे। वीर अर्थात् जो अपने भीतर में निरंतर अन्तः अवलोकन करता अपनी कमियों को ठीक करता रहे। वे वीरता शारीरिक को नहीं मानते थे। वे कहा करते थे, मैंने यह सीखा है कि बहादुरी का अर्थ यह नहीं है कि आपकी जिन्दगी में डर नहीं था। बहादुरी डर को जीतने का नाम है। इसी डर पर विजय प्राप्त कर उन्होनें दुनिया का दिल जीत लिया था। वे शांति के दूत थे। तभी तो वैश्विक शांति के लिये उन्हें दुनिया का सर्वाधिक प्रतिष्ठित नोबेल पुरस्कार एवं भारत के सर्वोच्च नागरिक अलंकरण भारत रत्न से नवाजा गया था।

नेल्सन मंडेला घृणा से घृणा करते थे। जैल में 27 वर्ष बिताकर बाहर आने पर उन्होनें जो बयान दिया था, वह उन जैसा बहादुर ही दे सकता है। जिसने अपने मन और वाणी पर नियंत्रण कर रखा हो। उन्होनें जैल की कड़वाहठ को भुलाकर तब कहा था, ''आज जब मैं आजादी के दरवाजे की ओर कदम रख रहा हूँ तो मुझे इस बात का पूरा यकीन है कि अगर मैं अपनी पीछे कड़वाहठ और नफरत छोड़कर नहीं गया तो मैं बाहर भी कैदी बना रहूँगा।'' वे

उच्च दर्जे के आशावादी इंसान थे। अपनी आत्मकथा **'लॉंग वाक टू फ्रीडम' में वे लिखते है,** ''मैं मूलतः आशावादी हूँ। पता नहीं यह आशावाद प्रकृति का दिया हुआ है या पालने वाले का। मेरे लिये आशावाद का अर्थ है सूर्य की ओर उठी हुई दृष्टि और धरती पर सतत् गतिमान कदम। मुझे जीवन में कई कटु अनुभव हुए, लेकिन मैंने खुद को कभी निराशा के हाथों में नहीं जाने दिया।''[20] पूरी दुनिया उन्हें गाँधी के बाद का गाँधी मानती है। जैसै हमारे गाँधी भारत के ही नहीं पूरी दुनिया के गाँधी थे वैसै ही दक्षिण अफ्रीका का यह गाँधी संसार का गाँधी बन गया।

गाँधीजी से प्रभावित

नेल्सन मंडेला के व्यक्तित्व एवं कृतित्व मे महात्मा गाँधी से साक्षात्कार होता है। दक्षिण अफ्रीका में नस्लभेद के खिलाफ किए गए संघर्षो की प्रेरणा उन्हें महात्मा गाँधी से मिली थी। उन्हें इस बात का फक्र और अहसास था कि भारत मूल के महात्मा गाँधी पहले व्यक्ति थे जिन्होनें दक्षिण अफ्रीका में आकर रंगभेद के खिलाफ आवाज उठायी थी तथा लोगों को उनके नागरिक अधिकारों के प्रति सचेष्ट किया था। विश्व की प्रतिष्ठित पत्रिका टाइम मेगजिन को वर्ष 2000 में दिये साक्षात्कार में **नेल्सन मंडेला ने विनम्रतापूर्वक कहा था,** ''महात्मा गाँधी उपनिवेशवाद को उखाड़ फेंकने वाले महान् क्रांतिकारी थे। दक्षिण अफ्रीका के स्वतंत्रता आंदोलन को मूर्त रूप देने में मैंने उन्हीं से प्रेरणा पाई थी।''[21] इस प्रकार वे महात्मा गाँधी को अपने सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन का गुरू मानते थे।

गाँधीजी की प्रेरणा व उनके प्रकाश से प्रकाशित नेल्सन मंडेला विश्व की अन्तर्रात्मा बनकर अन्याय एवं उत्पीड़न के विरूद्ध सामूहिक संघर्ष के लिये आशा की एक किरण बन गये थे। विनम्रता की जीवन्त मिसाल थे मंडेला। सात सौ पुरस्कार, नोबेल पुरस्कार और भारत रत्न जैसै दुर्लभ सम्मान मिले, लेकिन उन्होनें विनम्रता से इन पुरस्कारों का श्रेय उन मुद्दों को प्रदान किया जो उनके संघर्ष के केंद्र मे थे। उन्होनें पुरस्कारों से स्वयं को और विनम्र बना लिया।

मिलनसारिता एवं मित्रता का पाठ उन्होनें गाँधीजी से सीखा। वे पूरी दुनिया के मित्र थे। उदार इतने थे कि जैल में जिन लोगों ने उन पर अत्याचार व जुल्म किए थे, उन्हें भी जैल से रिहा होते समय बुलाकर धन्यवाद दिया। उनमें धैर्य एवं संयम इतना था कि वर्ण भेद संघर्ष में वे 27 वर्ष तक जैल में रहे। उन्हें राष्ट्रद्रोह के आरोप में दंडित कर जैल में डाला गया। असहनीय शारीरिक कष्ट दिये गये मगर, धैर्य व संयम को गले लगाकर नेल्सन मंडेला सब सहते गये। उनका संघर्ष संसार के दुर्लभतम व कठोरतम संघर्ष में एक है। उनके इस संघर्ष का आधार अहिंसा आधारित सविनय अवज्ञा था। मंडेला की अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस का आंदोलन गाँधीवादी दर्शन से संबंधित था। सन् 1952 में मंडेला के आह्वान पर हुए सविनय अवज्ञा अभियान में लाखों लोग सम्मिलित हुए थे।

मंडेला के शिक्षा, खेल एवं सांस्कृतिक प्रेम संबंधी विचारों पर भी गाँधीजी का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। शिक्षा को वे खुशहाली का द्वार मानते थे। गाँधीजी की शिक्षा की परिभाषा में शारीरिक विकास को महत्वपूर्ण माना गया है, मंडेला भी कहते थे कि बच्चों को बाल्यकाल से ही खूब खेलना चाहिए। इससे न केवल उनका शारीरिक विकास ही होगा अपितु नैतिक एवं चारित्रिक विकास का धरातल भी तैयार होगा। यह भी संयोग है कि उनके निधन के समय भारत और दक्षिण अफ्रीका के बीच एकदिवसीय क्रिकेट सीरिज हुई थी जिसे नेल्सन मंडेला को समर्पित कर दिया गया। यह उनके प्रति सम्मान है। विश्व बंधुत्व एवं जीव मात्र के प्रति दया व सहयोग के भाव नेल्सन मंडेला के जीवन चरित्र में स्पष्ट दिखाई देते है।

मंडेला ने अपने जीवन में बार–बार गाँधीवादी विचारधारा की बात की है। सत्याग्रह प्रारंभ होने के लगभग 100 वर्ष बाद सन् 2007 में नईदिल्ली में हुए सम्मेलन में अपने विडियो संदेश में मंडेला ने कहा, ''दक्षिण अफ्रीका के शांतिपूर्ण बदलाव में गाँधी की विचारधारा का योगदान छोटा नहीं है। उनके सिद्धांतों के

बल पर ही दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद की घृणित नीति के कारण जो समाज में गहरा भेदभाव था वह समाप्त हो सका।''[22]

हालांकि नेल्सन मंडेला इस बात पर दुःख जाहिर करते है कि भले ही दुनिया ने बहुत प्रगति कर ली हो लेकिन शांति और अहिंसा आज भी विश्व में स्वाभाविक रूप से मुख्यधारा में नहीं आ सकी है। दिल्ली में जवाहरलाल विश्वविद्यालय में पश्चिम एशिया और अफ्रीका विभाग के प्रो. अजय कुमार दुबे कहते है, ''दक्षिण अफ्रीका यदि अफ्रीकी ताकत बनना चाहता है तो उसे दिखाना होगा कि उनके पास दुनिया के सर्वश्रेष्ठ नेताओं में से एक नेल्सन मंडेला है, जिन्होनें दक्षिण अफ्रीका को शांतिपूर्ण तरीके से उपनिवेशवाद से मुक्त करवाया जो और किसी तरीके से संभव नहीं था।'' अतः विश्व में अलग–अलग लोगों के साथ–साथ रहने और शांतिपूर्ण विकास की मंडेला की नीति को विभिन्न राष्ट्रों द्वारा प्रयोग में लाना चाहिए, जिससे गाँधी एवं मंडेला का वसुधैव कुटुम्बकम् एवं विश्व शांति का स्वप्न साकार हो।

डेसमंड टूटू

गाँधीजी की नीतियों से प्रभावित व्यक्तियों में एक नाम दक्षिण अफ्रीका के लोकप्रिय आर्च बिशप डेसमंड टूटू का है। वे दक्षिण अफ्रीका की अंतर्रात्मा कहे जाते है। अपनी किशोरावस्था में छोटे–छोटे रेलवे स्टेशनों पर मूँगफली बेचने वाले डेसमंड टूटू ने स्वयं को इतना शिक्षित और सक्षम बनाया कि उनके संघर्षो की ओर दुनियाभर की नजर टिक गई। 1970 के दशक में उन्होनें दक्षिण अफ्रीका की रंगभेदी सरकार का जमकर विरोध किया था। सरकार के खिलाफ वे अपना आंदोलन अहिंसक रूप से चला रहे थे। इस दौरान उन्हें कई मुश्किल परिस्थितियों से गुजरना पड़ा, लेकिन अहिंसक आंदोलन से उनका विश्वास नहीं डिगा।

उन्होनें दक्षिण अफ्रीका में जातिविहीन लोकतांत्रिक और न्यायपूर्ण समाज का अपना लक्ष्य रखा और इसके लिये लगातार संघर्ष करते रहे। उन्हें 1984 में शांति के लिये नोबेल पुरस्कार से भी नवाजा गया। अपनी समस्त गतिविधियों में

बिशप टूटू महात्मा गाँधी की सीख और दर्शन से प्रेरणा पाते रहे है। उन्होनें सत्य और अहिंसा, जातियों के बीच समन्वय और सबसे बढ़कर दुःखी, उत्पीड़ित और दमित वर्ग की सहायता और उन्हें अधिकार दिलाने की निरंतर प्रज्वलित मशाल आगे बढ़ाई है।

एन्क्रूमा

घाना जाम्बिया आदि अन्य अफ्रीकी देशों में भी गाँधीजी का प्रभाव पड़ा। एन्क्रुमा ने घाना में और कौंडा ने जाम्बिया में गाँधीवादी तकनीक से प्रेरणा प्राप्त की। 1949 में एन्क्रुमा ने कहा था कि वह सभी वैधानिक साधनों को अपनाकर साम्राज्यवाद पर आक्रमण करेंगे और अहिंसात्मक हड़ताल बहिष्कार और असहयोग आंदोलन का संचालन गाँधी की तरह करेंगे।[23]

एन्क्रुमा गाँधीजी से इतने प्रभावित थे कि उनको 'घाना का गाँधी' कहा जाता था। उन्होनें गाँधी के प्रभाव को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है। उन्होनें कहा कि उनके अहिंसा और असहयोग के सिद्धांतों का परीक्षण सर्वप्रथम दक्षिणी अफ्रीका में ही हुआ। यद्यपि कैनथ कौंडा अहिंसा और असहयोग की शक्ति को इस सीमा तक स्वीकार नहीं करते थे। लेकिन फिर भी अहिंसा को मानव के आत्म साक्षात्कार की दिशा में एक कदम मानते थे।[24]

यूरोप में गाँधी चिंतन की व्यापकता

अलबर्ट आइंस्टीन

अलबर्ट आइंस्टीन एवं महात्मा गाँधी, दोनों के देश अलग थे, धर्म अलग थे, भाषाएँ और कार्यक्षैत्र अलग–अलग थे, दोनों आमने–सामने कभी मिल भी न पाए थे, आपसी पत्र व्यवहार भी न के बराबर था, इसके बावजूद भी उनके मन में एक–दूसरे के प्रति अगाध श्रद्धा थी। आइंसटीन विज्ञान के क्षैत्र की शिखरतम प्रतिभा थे। नोबेल पुरस्कार प्राप्त कर वे विश्व का विलक्षण मेधा संपन्न वैज्ञानिक माने गये। विज्ञान जगत उनकी अकूत मेधा और अद्वितीय कल्पनाशीलता से इतना अभिभूत था कि, उनकी बौद्धिक विलक्षणता को समझने के लिये मरणोपरांत उनके मस्तिष्क को संरक्षित रखा गया। महात्मा गाँधी सम्मान से

बहुत ऊपर थे। इतना ऊपर कि हर सम्मान, पुरस्कार उनके नाम से जुड़कर सम्मानित होता था। दोनों ही विश्व शांति के समर्थक थे। आइंसटीन के शोध को आधार बनाकर कुछ सिरफिरे वैज्ञानिकों ने परमाणु बम का निर्माण किया, जो दूसरे विश्वयुद्ध में तबाही का कारण बना। वहीं महात्मा गाँधी की कथनी–करनी में एकता थी। वे आजीवन सत्य–अहिंसा के पथ पर चलते रहे।

गाँधीजी के अहिंसावादी दृष्टिकोण, जीवन की सादगी, सत्य के प्रति अटूट निष्ठा, जनांदोलनों की गहरी समझ तथा लोगों के दिलों में पैठ बनाने के अकूत सामर्थ्य ने आइंसटीन को प्रभावित किया था। संभवतः उर्जा के अजस्त्र विराट स्रोत की खोज के रूप में दुनिया को परमाणु बम का आधार सिद्धांत देने वाला भावुक, संवेदनशील, मनुष्यता का हित चिन्तक, नैतिक–बोध से सम्पन्न सरलमना वैज्ञानिक अपने आविष्कार के दुरूपयोग की संभावनाओं की कल्पनामात्र से स्वयं को दोषी मान बैठा था।[25]

उल्लेखनीय है कि सापेक्षिकता के सिद्धांत की खोज के दौरान आइंस्टीन ने सिद्ध किया था कि उर्जा और पदार्थ परस्पर अन्तर्परिवर्तनीय है। इस प्रक्रिया मे विपुल उर्जा उत्पन्न होती है। इसके बाद से ही परमाणु विखण्डन द्वारा उर्जा के चिरंतन स्रोत को प्राप्त करने की कोशिशें तेज हो चली थी। प्रथम विश्वयुद्ध में चोट खाये देश गुपचुप अपनी ताकत का विस्तार करने में लगे थे। राष्ट्रों के बीच हथियारों की प्रतिस्पर्धा जारी थी। अपनी दूरदृष्टि से आइंस्टीन ने शायद यह भांप लिया था कि कोई सिरफिरा वैज्ञानिक परमाणु उर्जा संबंधी उनके शोध का दुरूपयोग कर मनुष्यता के समक्ष भयावह संकट प्रस्तुत कर सकता है। इसलिये गाँधी, जो दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह का सफल प्रयोग कर चुके थे और भारतीय स्वाधीनता आंदोलन का नेतृत्व करते समय भी अहिंसा पर पूर्णतः अडिग थे, का मानवतावादी दृष्टिकोण उन्हें आकर्षित करता था।[26] विश्व शांति की चाहत रखने वाले आइंस्टीन निःशस्त्रीकरण के सबसे मुखर समर्थकों में थे। विश्व शांति के प्रति आइंस्टीन की प्रतिबद्धता का एक और प्रमाण था– अनिवार्य सैन्य–सेवा एवं युद्ध प्रशिक्षण के विरोध में जारी घोषणापत्र, जिस पर उनके और

महात्मा गाँधी के अलावा रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सिगमण्ड फ्रायड, रोमन रोलैंड, एच. जी. वेल्स आदि के हस्ताक्षर थे।

आइंस्टीन का विज्ञान पर भरोसा था। वह मानते थे कि विज्ञान की मदद से विश्व की भीषण समस्याओं यथा गरीबी, कुपोषण, अशिक्षा, बेरोजगारी आदि का उपचार संभव है। अनियोजित मशीनीकरण की आलोचना करते हुए आइंस्टीन ने कहा था कि पूँजीवादी तंत्र के नेतृत्व में होने वाली प्रौद्योगिकीय क्रांति ने लोगों की गरीबी और अन्याय संबंधी समस्याओं का समाधान करने के बजाय उन्हें बेरोजगारी की ओर धकेला है। उसकी सबसे बड़ी बुराई है कि वह अपनी कीमत मनुष्य की कार्यक्षमता एवं कौशल से वसूलता है। अपने ही जैसै शोषितों, उत्पीड़ितों के साथ स्पर्धा और शोषणकारी स्थितियों से घिरा श्रमिक स्वयं को उनके आगे पंगु और लाचार अनुभव करता है। आपसी अविश्वास, कुण्ठा, हताशा और अवसाद जैसै अवगुण उसे घेर लेते है। पूँजीवादी समाज की ऐसी अनेकानेक नकारात्मक स्थितियों और संभावनाओं के बीच सर्वोदय, सादगी, अहिंसा, शांति, संयम, आर्थिक आत्मनिर्भरता तथा विश्व बंधुत्व को समर्पित गाँधीजी के विचार, उनकी समाज के प्रति सकारात्मक और नीति सम्मत सोच आइंस्टीन को उम्मीद के ताजे झोंके की तरह लगते है।

आइंस्टीन के मन में गाँधी के प्रति सम्मान भाव पहली बार जुलाई 1929 में 'क्रिश्चन सेंचुरी' को दिये गये साक्षात्कार में प्रकट हुआ था। जिसमें उन्होनें गाँधी द्वारा अहिंसापूर्ण तरीके से चलाये जा रहे आंदोलन की सराहना की थी। दोनों के बीच इकलौते पत्र–व्यवहार की शुरूआत आइंस्टीन की ओर से होती है। घटना 1931 की है, गाँधीजी उन दिनों गोलमेज यात्रा के सिलसिले में लंदन की यात्रा पर थे। आइंस्टीन तब बर्लिन में थे। वहीं उनके आवास पर गाँधीजी का शिष्य सुंदरम् उनसे मिला। उसके माध्यम से आइंस्टीन ने एक पत्र गाँधीजी को भेजा था। 27 सितंबर 1931 को लिखे उस पत्र में उन्होनें गाँधी के प्रति अपनी श्रद्धा को बिना लाग–लपेट प्रस्तुत किया था। उन्होनें पत्र में लिखा था, अपने कार्यकलापों द्वारा आपने दिखा दिया कि उन सभी आदर्शो को

जिनकी हम केवल कल्पना कर सकते है, हिंसा का सहारा लिए बिना भी प्राप्त किया जा सकता है और उन्हें जिनको हिंसा पर भरोसा है, अहिंसा के माध्यम से आसानी से जीता जा सकता है। हमें उम्मीद करनी चाहिए कि आपका संदेश आपके देश की सीमाओं के पार भी फैलेगा। उसके माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय मतभेदों का स्थायी समाधान संभव होगा। यही एकमात्र रास्ता है जो वैश्विक शांति एवं खुशहाली की ओर जाता है, जिससे हम अपने मतभेदों को आसानी से सुलझा सकते है।[27]

पत्र में गाँधीजी के अहिंसावादी दृष्टिकोण के प्रति एक उदारमना वैज्ञानिक के उद्‌गार थे। गाँधी विश्व शांति हेतु आइंस्टीन के कार्य कलापों से परिचित थे। उनके प्रति मन में अगाध श्रद्धा भी थी। इसलिये पत्र का प्रत्युत्तर देते हुए उन्होनें 18 अक्टूबर को आइंस्टीन को लिखा, ''सुन्दरम् के हाथों आपका खूबसूरत पत्र मुझे मिला। मुझे यह जानकर अत्यधिक संतोष है कि हमारी आमने–सामने की भेंट हो और आप भारत मे मेरे आश्रम का आतिथ्य ग्रहण करें।

आइंस्टीन गाँधीजी के आमंत्रण पर भारत भले ही न आ सके, मगर गाँधीजी द्वारा भारत में किए जा रहे सत्य एवं अहिंसा के प्रयोगों से निरंतर प्रेरणा लेते रहे। वे मूलतः वैज्ञानिक थे। विज्ञान के उपयोग को लेकर उनका मत 'पश्चिमी विज्ञान का पितामह' कहे जाने वाले दार्शनिक फ्रांसिस बेकन (1561–1626ई.) से मेल खाता था। पंद्रहवी शताब्दी की वैज्ञानिक क्रांति से उत्साहित बेकन का कहना था कि, मशीनें मनुष्य को जानलेवा श्रम से मुक्ति दिलाकर उसके कल्याण की राह प्रशस्त करेगी। बेकन के दिए 'ज्ञान ही शक्ति है' के नारे के साथ कालांतर में विज्ञान ने खूब तरक्की की। लेकिन उसके लोकोपकारी उपयोग को लेकर बेकन की भविष्यवाणी पूर्ण सच न हो सकी। खर्चीला उद्यम होने के नाते वैज्ञानिक शोधों की धारा उस दिशा में अग्रसर रही, जो केवल समाज के प्रभुवर्ग की स्वार्थानुरूप थी। इससे श्रम विरोधी मशीनों के विकास को बढ़ावा मिला। कालांतर में उससे समाजार्थिक स्तरीकरण और

बेरोजगारी में वृद्धि हुई। पूँजी की मनमानी के फलस्वरूप हुए मशीनीकरण ने उन कारीगरों और शिल्प कर्मियों के समक्ष अस्तित्व का संकट खड़ा कर दिया था, जो परंपरागत अर्थव्यवस्था में, सामंतवादी दबावों के बावजूद अपने श्रम एवं कौशल के दम पर सम्मानित जीवन जीते आए थे। धीरे–धीरे यह चुनौती और भी कठिन, कठिनतर होती गई। आगे चलकर इसी ने यूरोप के वैचारिक आंदोलनों के लिए नई जमीनें तैयार की।[28]

गाँधीजी के सत्य और अहिंसा के आदर्श के प्रति आइंस्टीन की अटूट श्रद्धा थी। उत्तरोत्तर बढ़ते वैश्विक तनाव तथा वैमनस्यकारी स्थितियों के बीच गाँधी का रास्ता उनकी एकमात्र उम्मीद थी। बावजूद इस श्रद्धाभाव के कुछ मुद्दों को लेकर गाँधीजी से उनका मतभेद भी था। ऐसा ही मुद्दा उत्पादन क्षैत्र में मशीनों के प्रयोग को लेकर है। पश्चिम के अनियोजित मशीनीकरण से क्षुब्ध **गाँधी ने 'हिन्द स्वराज' मे लिखा था,** ''यंत्र का गुण तो मुझे एक भी याद नहीं आता, मगर उसके अवगुणों पर मैं पूरी किताब लिख सकता हूँ।[29] यहाँ साफ कर दे कि मशीनों की आलोचना करने वाले गाँधी पहले व्यक्ति न थे। उनसे पहले भी रूसों, थोरो, एडबर्ड कारपेंटर, इमर्सन आदि प्रख्यात विचारकों ने जीवन में मशीनों के बढ़ते दखल को गैरजरूरी माना था।

लोकहित में गाँधी चाहते थे कि वे (जमींदार और राजा–महाराजा) अपने लोभ और संपत्ति के बावजूद उन लोगों के समकक्ष बन जाएं जो मेहनत करके रोटी कमाते है। मजदूरों को भी यह समझना होगा कि मजदूरों का काम करने की शक्ति पर जितना अधिकार है, मालदार आदमी का अपनी संपत्ति पर उससे भी कम है।[30] गाँधीजी पूँजीवाद की विकृतियों का समाधान संरक्षकता के सिद्धांत में खोजते थे। इसलिये उन्होनें पूँजीपतियों से अपील की थी कि वे स्वयं को संपत्ति का स्वामी मानने के बजाय उसका संरक्षक अपने को समझे और लोककल्याण के निमित्त उसका उपयोग करे। पूँजीपति अपनी संपत्ति स्वेच्छा से छोड़ने को तैयार हो जाएंगे, स्वयं गाँधी को भी इसमें संदेह था। ऐसी स्थिति में वे व्यवस्था करते है, ''लोग स्वेच्छा से अपनी ओर से ट्रस्टियों की तरह व्यवहार

करने लगे तो मुझे सचमुच बड़ी खुशी होगी। लेकिन यदि वे ऐसा न करे तो मेरा ख्याल है कि हमें राज्य के द्वारा भरसक कम हिंसा का सहारा लेकर उनसे उनकी संपत्ति मुआवजा देकर अथवा मुआवजा दिए बगैर, जहाँ जैसा उचित हो अपने हाथ में कर लेनी चाहिए।

आर्थिक समानता का प्रश्न आइंस्टीन के लिए भी बड़ा था। वे अहिंसक समाजवाद के समर्थक थे। वे मानते थे कि समाजवाद का लक्ष्य समाज को नैतिक सामाजिक लक्ष्य की ओर अग्रसर करना है। जबकि पूँजीवाद केवल और उद्योगस्वामी के लाभ की स्वार्थकांक्षा से संचालित होता है। उसमें बड़ी मछली छोटी को निगल जाती है। आइंस्टीन का विश्वास था कि केवल विज्ञान की सहायता से सामाजिक समस्याओं का निदान खोजना अतिरेकी की कामना है। समाजवाद व्यक्ति एवं समाज दोनों को सामाजिक–नैतिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिये प्रयत्नरत रहता है, जबकि पूँजीवाद अपने एकमात्र लक्ष्य पूँजीस्वामी के लाभ पर जोर देता है। जिसमें लाभार्थी वर्ग निरंतर सिकुड़ता जाता है। आइंस्टीन के अनुसार यह जानना बहुत जरूरी है कि केवल नियोजित अर्थव्यवस्था समाजवाद का उदिष्ट नहीं है। समाजवाद का वास्तविक लक्ष्य मानवमात्र की मुक्ति है। ऐसा कहते हुए वे विचारदर्शन में गाँधीवाद के करीब चले आते है।[31]

गाँधीजी एवं आइंस्टीन के मध्य मशीनों के प्रयोग को लेकर स्पष्ट मत–वैभिन्नय था। 'ग्राफिक सर्वे' के लिये 1935 के एक साक्षात्कार में आइंस्टीन के माध्यम से उद्धृत किया गया है, ''मैं गाँधी से अत्यधिक प्रभावित हूँ, मगर उनके कार्यक्रम में दो कमजोरियाँ मुझे एकदम साफ दिखाई देती है, असहयोग हालांकि अपने विरोधियों से निपटने का बुद्धिमानी भरा रास्ता है, लेकिन यह केवल आदर्श स्थितियों मे ही संभव है। यह भारत में अंग्रेजों के विरूद्ध उपयोगी हो सकता है, लेकिन जर्मनी में नाजियों के विरूद्ध इसका कारगर प्रयोग संभव नहीं है। गाँधी उस समय भी गलत है जब वे आधुनिक सभ्य समाज में मशीनों

के बहिष्कार अथवा उनको न्यूनतम बनाए रखने पर जोर देते है। मशीनें समाज की जरूरत बन चुकी है। यह उन्हें स्वीकार लेना चाहिए।[32]

गाँधीजी की भाँति आइंस्टीन का चिंतन भी बहुआयामी था। गाँधी चाहते थे कि ग्राम स्वावलंबी हो, वहाँ के लोग आत्मनिर्भर बने ताकि अपनी सीमित अर्थ क्षमता से सम्मानित जीवन जी सके। यह आवश्यक भी है। इससे अर्थव्यवस्था और प्रकारांतर में सत्ता के विकेंद्रीकरण का स्वप्न सच होता है। आइंस्टीन की खूबी है कि वे समाजवाद का समर्थन करते है, मनुष्य मात्र के विकास के लिये उसे अपरिहार्य मानते है, मगर इसके लिये किसी भी प्रकार की हिंसा उन्हें अस्वीकार्य है। इस लक्ष्य को वे लोकतांत्रिक परिवर्तनों के माध्यम से साधना चाहते है। समाजवाद बरास्ते अहिंसा उनका स्वप्न है। उनकी दृष्टि में मनुष्य सर्वोपरि है। अपनी इस धारणा पर वे अडिग है।

गाँधी के लेखों में समाजवाद का जिक्र आता है, मगर समाजवादी लक्ष्य को वे अहिंसा, धर्म और परंपरा की सीमाओं में जितना संभव हो, तय कर लेना चाहते है। ध्यातव्य है कि समाजवाद की जड़ों के लिये धर्म की शरण में चले जाने वाले दार्शनिक विचारकों में गाँधी अकेले न थे। जॉर्ज बर्नाड शॉ, विलियम मॉरिस, जॉन रस्किन आदि विद्वानों की समाजवादी प्रेरणाएँ बाइबिल तथा अन्य ईसाई धर्म–ग्रंथों से ही निकली थी। गाँधी संसाधनों और अवसरों के समान वितरण पर उतना बल नहीं देते जितना कल्याण के संवितरण पर। यदि समाजवाद बिना किसी हिंसा के आए तो हम उसका स्वागत करेंगे, क्योंकि तब मनुष्य किसी भी तरह की संपत्ति जनता के प्रतिनिधि की तरह और जनता के हित के लिये ही रखेगा अन्यथा नहीं। इस लक्ष्य को पाने के लिये गाँधी अहिंसा और मानवीय प्रेम की तरफदारी करते हैं, ''मैं घृणा से नहीं अपितु प्रेम की शक्ति से लोगों को अपनी बात समझाऊंगा और अहिंसा के द्वारा आर्थिक समानता पैदा करूंगा।''[33]

आइंस्टीन के लिए परंपरा का महत्व तभी तक है जब तक वह तर्कसम्मत हो और विज्ञान की कसौटी पर खरी उतर सके। क्या समाजवाद से मानव

जीवन की समस्याओं का समाधान संभव है? आइंस्टीन इससे आश्वस्त है, इन गंभीर बुराईयों से बचाव का एकमात्र रास्ता है, लोकोन्मुखी शिक्षा प्रणाली की स्थापना तथा अर्थव्यवस्था का समाजवादी नजरिये के अनुरूप निर्धारण, जिसमें उत्पादन के साधन समुदाय के अधीन हो। उत्पादन का स्वरूप लोगों की आवश्यकता के अनुरूप तय होना चाहिए और काम का विभाजन इस तरह से हो कि स्त्री–पुरूष, बच्चे जो भी काम कर सकते है, उन्हें काम मिले और किसी के सामने आजीविका संबंधी संकट न हो। आइंस्टीन ने समाजवाद का पक्ष लिया था, परंतु उसके नाम पर समाज में जो हो रहा है, उसके प्रति वे बहुत आश्वस्त नहीं थे। वे मान रहे थे कि समाज में समाजवाद को लेकर अत्यधिक अस्पष्टता है। सबसे बड़ा संकट ईमानदार विमर्श का है। उन्हें लगता था कि समाजवाद के नाम पर प्रचलित विभिन्न परिभाषाओं, अवधारणाओं तथा अर्थहीन बहसों ने उसको बहुत नुकसान पहुंचाया है। जिससे समाजवादी राज्य का सपना एक टोटम मे सिमट चुका है। आइंस्टीन का आशय उदार और विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था से था, जिसमें राज्य की नियंत्रणकारी शक्तियाँ अधिक जिम्मेदार और लोक–प्रतिबद्ध हो।

गाँधी की भाँति आइंस्टीन की करूणा भी मानव समाज तक सीमित न थी, उसमें प्राणीमात्र के प्रति करूणा–भाव अंतर्निहित था। गाँधी शाकाहार के समर्थक थे। इस संबंध में आइंस्टीन की भावनाएँ गाँधी से मेल खाती है। शाकाहार का समर्थन करते हुए उन्होनें लिखा था–''मानवीय स्वास्थ्य एवं पृथ्वी पर जीवन की उत्तरजीविता के निमित्त कोई भी इतना सहायक नहीं है, जितना शाकाहार को बढ़ावा देना। इसलिये कि मनुष्य की कसौटी वर्चस्व में न होकर सहयोग भावना में है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे संतु निरामया' गाँधी इस औपनिषेदिक कामना को राष्ट्र–राज्य की प्रमुख पहचान के रूप में देखना चाहते थे। यह भावना गाँधी द्वारा शाकाहार के समर्थन से भी अभिव्यक्त होती है– 'किसी राष्ट्र की महानता उसके द्वारा पशुओं के प्रति किए गए व्यवहार से आंकी जा सकती है।' जीवदया के प्रति धार्मिक दृष्टिकोण उतना महत्वपूर्ण नहीं है

जितना करूणा का संस्कार।' करूणा का यही संस्कार गाँधीवाद की आत्मा है। यही वह गुण है जो आइंस्टीन को बार–बार गाँधी की ओर खींच लाता था।

समाज में परिस्थितियों के आगे गाँधी को भी झुकना पड़ा और आइंस्टीन को भी। दूसरी ओर यह भी सच है कि जब भी इन महापुरूषों को समझौते के लिये बाध्य किया गया, उसका नुकसान पूरे समाज को झेलना पड़ा। गाँधी भारत का विभाजन नहीं चाहते थे, धनकुबेरों से वे संरक्षकतावाद के आदर्श को अपनाने की आशा करते थे, मगर ऐसा नहीं हुआ और आजादी के बाद स्वार्थी नेता अपना स्वार्थ सिद्ध करने मे लग गये। आइंस्टीन के साथ भी ऐसा ही हुआ। वे नहीं चाहते थे कि उनकी खोज का उपयोग परमाणु बम के लिये किया जाये, लेकिन अंतर्राष्ट्रीय स्थितियाँ इतनी तेजी से बदली कि उन्हें उसके लिए अनुमति देनी ही पड़ी। द्वितीय विश्व युद्ध की आहट के बीच अमेरिकी भौतिक विज्ञानी लियो सिजलॉर्ड तथा यूजीन विगनर राष्ट्रपति रूजवेल्ट का संदेश लेकर आइंस्टीन से मिले थे। वे परमाणु बम निर्माण के लिए आइंस्टीन की सहमति चाहते थे। उनसे कहा गया था कि बम दुनिया में शक्ति संतुलन कायम करने के काम आएगा। आइंस्टीन इसके लिए भी तैयार न थे। लेकिन जब उनसे कहा गया कि यदि अवसर चूके तो हिटलर अमेरिका से पहले परमाणु बम बनाने में सफल हो जाएगा, तो वे सोच में पड़ गए। तानाशाह के हाथों में अकूत ताकत आने का मतलब है, दुनिया की तबाही– आइंस्टीन का कुछ ऐसा ही सोचना था। असल में यह उनका स्वयं को दिया गया भरोसा था। यह आभास उन्हें था कि यदि हस्ताक्षर न भी करेंगे तो भी युद्धोन्मत्त शक्तियाँ एक न एक दिन बम का आविष्कार कर ही लेगी। इसलिये पत्र पर हस्ताक्षर कर लौटाना पड़ा। उस समय उन्होनें शायद ही यह कल्पना की हो कि उनकी खोज हिरोशिमा और नागासाकी की भीषण तबाही, मनुष्यता के कलंक का कारण बनेगी। आइंस्टीन को यह अपराधबोध जीवन भर रहा। इसी ने उन्हें गाँधी के करीब लाने का काम किया उन्हें लगता था कि युद्धोन्तत्त राजसत्ताओं के बीच गाँधी का अहिंसा का रास्ता ही श्रेय की ओर ले जा सकता है।

जापान में बमबारी के वर्षो बाद वहाँ के एक दैनिक 'कैजो' ने आइंस्टीन से परमाणु बम के प्रयोग पर टिप्पणी करने को कहा। प्रत्युत्तर में पत्र संपादक के नाम सन् 1952 में आइंस्टीन ने जो पत्र लिखा, उसमें एक बार फिर गाँधी के प्रति आस्था और विश्वास झलकता था। हालांकि उस समय तक गाँधी की हत्या को तीन वर्ष बीत चुके थे– 'गाँधी, हमारे समय के महानतम राजनीतिज्ञ प्रतिभा ने हमें सत्य और अहिंसा के उस रास्ते से परचाया है, जिसका हमें अनुसरण करना चाहिए। उन्होनें यह प्रमाणित कर दिया कि एक व्यक्ति के मन में सत्य के लिए उत्सर्ग की भावना हो तथा रास्ता सही हो तो वह कुछ भी प्राप्त कर सकता है। भारतीय स्वाधीनता के लिए उनका कार्य इस बात का स्वतः प्रमाण है कि अदम्य विश्वास से युक्त मनुष्य की दृढ़ इच्छाशक्ति अजेय समझी जाने वाली सैन्य ताकतों से कहीं अधिक ताकतवर है।[34]

अपनी पुस्तक 'आऊट ऑफ माई लेटर ईयर्स' में गाँधीजी पर प्रशंसात्मक टिप्पणी करते हुए उन्होनें लिखा है– ''जनसाधारण का नेता, जिसको लगातार कमजोर पड़ती औपनिवेशिक शक्तियों का समर्थन प्राप्त है। एक ऐसा जननेता जिसकी सफलता कूटनीति, राजनयिक चातुर्य अथवा दूसरों पर अधिकार जमाने के लिए छिछले राजनीतिक दांवपेंचो पर निर्भर नहीं है, उसके पास केवल सच को अभिव्यक्त करने की कला है, एक काया है जिसमें इंसानियत और ज्ञान दोनों साथ–साथ विद्यमान है। उसके हथियार संवेदना और सहिष्णुता है जो उसने अपने समाज को सुरक्षित और सुदृढ़ करने के लिए गढ़े है। ऐसा इंसान जो आमजन का प्रतीक है, जिसने यूरोपीय नृशंसता और क्रूरता का सामना किया है, और जो जनसाधारण का मसीहा है। इस तरह उसका प्रभाव अमिट है. .....पीढ़ियों के बाद इस बात पर शायद ही कोई विश्वास करेगा कि इस प्रकार का सचमुच जीता–जागता मनुष्य इस धरती पर था। इस तरह वह सार्वकालिक उदीयमान सितारा है।

गाँधी के प्रति आइंस्टीन का सम्मान इस मृत्युलेख से भी होता है, जो उन्होनें गाँधी की हत्या के तीन सप्ताह बाद वॉशिंगटन मे आयोजित एक

स्मृति–सभा के लिए लिखा था, ''केवल सत्यानुयायी, अहिंसक और पवित्र समाजवादी ही दुनिया में या हिंदुस्तान में समाजवाद फैला सकता है, जहाँ तक मैं जानता हूँ दुनिया में ऐसा कोई देश नहीं है जो पूरी तरह समाजवादी हो, मेरे बताये हुए साधनों के बिना ऐसा समाज कायम करना असंभव है। आगे गाँधी को सम्मानपूर्वक याद करते हुए **आइंस्टीन लिखते है–** ''हर वह इंसान जो मनुष्यता की बेहतरी का सपना देखता है, उसको गाँधी की असामयिक, त्रासद हत्या ने हिला दिया है। उन्होनें अपने आदर्शो के लिए अहिंसा के पक्ष में मृत्यु का वरण किया है, इसलिए उन्हें मार डाला गया। इसलिये भी कि देश में अशांति और अव्यवस्था के वातावरण के बावजूद वह किसी भी प्रकार की सुरक्षा लेने को तैयार न था। यह उसका अटूट विश्वास था कि ताकत का उपयोग अपने आप में ही बुराई है।[35] आज न तो गाँधी हैं न आइंस्टीन, परंतु आइंस्टीन की बौद्धिक प्रखरता और गाँधी का सत्य को परखने और उसके लिए हर जोखिम उठाने का साहस हमें निरंतर कुछ नया सोचने, आगे बढ़ने और मनुष्यता में विश्वास बनाए रखने की प्रेरणा देता है।

लांजा डेल वास्तो

गाँधीजी के शिष्य लांजा डेल वास्तो जिनका जन्म इटली में हुआ था ने फ्रांस की राजधानी पेरिस में आर्क आश्रम की स्थापना की। यहाँ पहुँचने पर हर किसी को भारत स्थित गाँधी के आश्रमों की याद आ जाती है। इस आश्रम में बिजली नहीं है और खेती का काम हाथों या घोड़ों से होता है। करीब 150 आश्रमवासी एक परिवार के रूप में सामूहिक जीवन जीते है। सभी शाकाहारी है। सुबह प्रार्थना के बाद सभी सफाई, खेती, लकड़ी काटने, डबल रोटी बनाने और गोपालन के कार्यो में जुट जाते है। काम के दौरान एक–एक घंटे पर घंटी बजती है। घंटी बजते ही सभी काम छोड़कर बाहर प्रकृति की गोद में आकर दो मिनट शांत खड़े होकर प्रार्थना करते हैं, फिर अपने–अपने काम में लग जाते हैं।[36]

लांजा डेल वास्तो छोटी उम्र से ही सामाजिक क्रांति में रूचि लेने लग गये थे। लंबे विचार और अनुभव के बाद उनका दृढ़ विश्वास बना कि हिंसा से लाई गयी क्रांति उससे बड़ी हिंसा से नष्ट की जा सकती है। उनका यह विश्वास तब और पुष्ट हुआ जब उन्होनें यही बात गाँधीजी के विचारों में पाई। वे गाँधीजी के अनुयायी बन गये और अपना नाम शांतिदास रख लिया।

शांतिदास अपने कार्य में इतने तत्पर रहते थे कि जब आश्रम की कल्पना मन में आई तो स्वयं भारत आकर गाँधीजी के विभिन्न आश्रमों का अवलोकन किया। शांतिदास को केवल आश्रम की भौतिक रचना नहीं बल्कि उनके पीछे की भावना और आध्यात्मिक प्रवृत्तियों का भी अध्ययन करना जरूरी लगा। आज शांतिदास नहीं रहे। उनकी समाधि कुछ पेड़ों की छांव में है पर उनका आश्रम उसी तरह चल रहा है। आज आधुनिकतम बड़े उद्योगों से फैलते प्रदूषण और मानसिक अशांति आदि से त्रस्त पश्चिम के कई स्त्री–पुरूष खासतौर से युवाजन इस आर्क आश्रम में जाते है और वहाँ राहत की सांस लेते है। अब इटली, स्वीट्जरलैण्ड, जर्मनी और अमेरिका आदि देशों में भी आर्क के नमूने पर कई केंद्र बनाने की योजना बनी है। जिससे लोगों में खूब उत्साह है।

पीटर

शांतिदास का स्थान लेने वाले पीटर ने भी अपना नाम मोहनदास रख लिया है और आर्क की परंपरा को जारी रखा है। पीटर केवल पन्द्रह–बीस दिनों के लिए कभी दिल्ली आए थे और तब उनका यहाँ कुछ गाँधीवादी विचारकों से संपर्क हुआ था। वे इतने प्रेरित हुए कि उनको लगा कि जर्मनी की जनता का गाँधीजी के अहिंसक मार्ग से अवगत कराना चाहिए। अपने ही पैसै और परिश्रम से पीटर गाँधीजी से संबंधित बहुत से चित्र, चरखा, आश्रम की झौपड़ियों के नमूने–नक्शे और किताबें जर्मनी ले गए और वहाँ इन सबकी बड़ी प्रदर्शनी लगाई।[37]

सतीश कुमार

इंग्लैण्ड के सतीश कुमार ने 1962 में गाँधीजी की राजघाट समाधि से खाली जेब मास्को, पेरिस, लंदन और वॉशिंगटन चार आणविक राजधानियों की पैदल यात्रा की। वे लंदन स्कूल ऑफ नॉन वायलेंस के माध्यम से युवाओं को गाँधीजी के विचारों का पाठ पढ़ा रहे है। सतीश कुमार ने इंग्लैण्ड के दक्षिण–पश्चिम के एक गाँव में 'द स्मॉल स्कूल' नामक एक स्थानीय स्कूल की स्थापना की है, जिसे गाँधीवादी सिद्धांतों के अनुरूप चलाया जाता है। यहाँ के बच्चे सामान्य अकादमिक विषयों और कलाओं के अलावा खाना पकाना, बागवानी, कुंभकारी, काष्ठकला, पर्यावरण संरक्षण और सामुदायिक सेवा में व्यावहारिक निपुणता प्राप्त करते है। इस समय लंदन में इस तरह के आठ स्मॉल स्कूल है, जहाँ व्यापकतावादी और व्यावहारिक शिक्षा के विचारों पर अमल किया जा रहा है।[38]

मारी थोगर

डेनमार्क के एक किसान परिवार में जन्मी मारी थोगर किसी किसान की पुत्री की तरह ही गाँव के अपने खेतों में काम करते–करते बड़ी हुई। इस कारण उनकी रूचि गाँव के उद्धार के कार्यक्रमों में रम गई। मारी थोगर महात्मा गाँधी और विनोबा भावे की घोर प्रशंसक और सच्ची अनुयायी है। सन् 1952–53 में मारी थोगर यूनेस्कों के एक कार्यक्रम के सिलसिले में भारत आई थी। इस दौरान उन्होनें ग्रामोद्योग के संचालन का अध्ययन किया और नियमित रूप से खादी पहनने लगी।[39]

इतना ही नहीं मारी ने अपने घर में भी खादी और ग्रामोद्योग के उत्पादों का उपयोग शुरू किया। पर्यावरण प्रेमी होने के कारण मारी थोगर भारत में सर्व सेवा संघ की अध्यक्ष राधा भट्ट और अन्य लोगों के साथ 'चिपको आंदोलन' से भी गहनता से जुड़ी रही। केरल की सायलेंट वैली के रक्षण में भी गहरी रूचि लेती रही। इन सबसे बढ़कर मारी थोगर डेनमार्क और अन्य देशों में चल रहे शांति आंदोलनों से प्रतिबद्ध है। पूरे देश और विदेश में भी थोगर के कार्य और

लेखन का महत्व निरंतर बढ़ता जा रहा है। शांति और मानव समाज के बारे में लिखी गई उनकी रचनाओं को बड़ी उत्सुकता से पढ़ा जाता है।

रिचर्ड एटनबरो

रिचर्ड एटनबरो की 'गाँधी' फिल्म के कारण भी दुनियाभर के नौजवान गाँधी से प्रभावित हुए है। 'गाँधी' फिल्म बनाने वाल मशहूर ब्रिटिश फिल्म निदेशक रिचर्ड एटनबरो ने अपनी आत्मकथा **'एंटायरली अप टू यू डार्लिंग' में लिखा है,** ''ब्रिटेन में जहां देखता, लोग गाँधी की बातें करते। गाँधी न्याय और समानता की बातें कर रहे थे। जापान में परमाणु बम गिराये जाने की निन्दा में जो आन्दोलन हुआ, वह गाँधी के दर्शन पर आधारित था। ब्रिटेन में बर्टेण्ड रसेल के नेतृत्व में हुआ आंदोलन भी गाँधीवादी ही था। किंग जूनियर अपना जीवन गाँधी की तर्ज पर जी रहे थे। पूरा विश्व गाँधी दर्शन को स्वीकार कर रहा था। यह सब देखकर मेरे भीतर उन पर फिल्म बनाने की इच्छा जगने लगी।'' एटनबरो ने सही लिखा है, भारत से सुदूर अमेरिका से लेकर बर्मा, नेपाल श्रीलंका तक अहिंसक आंदोलन की हवा समय–समय पर चलती रही है। यही वजह है कि दुनियाभर के नौजवान गाँधी को और गहराई से समझने के लिये आतुर रहते है।[40]

वात्स्लाव हावेल

चेकोस्लाविया की 'वेलवेट क्रांति' के बाद बगैर किसी हिंसा के चेकोस्लोवाकिया में चेक और स्लोवाकिया गणराज्य का गठन किया गया। वात्स्लाव हावेल इस क्रांति की धुरी में थे। वे अपने समय में चेक गणराज्य के साथ–साथ पूरे यूरोप के नेता माने जाते रहे। पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन ने उन्हें महात्मा गाँधी और नेल्सन मण्डेला के रास्ते पर चलने वाला राजनेता बताया था। हावेल को 2003 में अंतर्राष्ट्रीय गाँधी शांति पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया था।[41]

लेक वालेसा

पोलैण्ड के पूर्व राष्ट्रपति लेक वालेसा को इतिहास में एक बड़े नेता के रूप में याद किया जाता है। लेकिन राजनीतिक संघर्ष का जो रास्ता उन्होनें चुना था, उसकी नींव गाँधी ने रखी थी। उन्होनें गाँधी के रास्ते पर चलते हुए अहिंसक संघर्ष पर बल दिया।

लेक वालेसा पोलैण्ड में 'सौलीडेरिटी' नामक मजदूर संगठन के संस्थापकों में थे, जिसे वहाँ की कम्यूनिस्ट सरकार ने प्रतिबंधित कर दिया था। लेक वालेसा निरंतर लोकतांत्रिक अधिकारों की लड़ाई लड़ते रहे। मसलन–मजदूर संगठन बनाने का अधिकार, हड़ताल करने का अधिकार, प्रेस की आजादी का मुद्दा वे उठाते रहे। वह आंदोलन इतना तीव्र था कि पोलैण्ड की सरकार सौलीडेरिटी मूवमेंट के साथ समझौता करने पर मजबूर हो गई। जिसके बाद संसदीय चुनाव हुए और देश में गैर–कम्यूनिस्ट सरकार का गठन हुआ। लेक वालेसा 1990 में पोलैण्ड के राष्ट्रपति चुने गए। उन्हें शांति का नोबेल पुरस्कार भी दिया गया था।[42]

पेत्रा कैरिन कैली

जर्मनी जैसै देश में जहाँ हिटलर जैसै तानाशाह का आतंक था, उसी देश में गाँधी को मानने वाले भी हुए। जिन्होनें गाँधी मार्ग पर चलकर राजनीतिक संघर्ष को आगे बढ़ाया। अहिंसा के बीच समाधान ढूँढ़ने की कोशिश की। जर्मन राजनीतिज्ञ और सामाजिक कार्यकर्ता पेत्रा कैरिन कैली का नाम भी इसी श्रेणी में है। कैली का राजनीतिक जीवन शांति, अहिंसा, स्त्रीवादी आंदोलन और मानवाधिकार के साथ–साथ इन सबके बीच अंतःसंबंधों की खोज पर केंद्रित रहा। पेत्रा पर्यावरण संरक्षण की जबर्दस्त हिमायती थी। परमाणु उर्जा का उन्होनें घोर विरोध किया था। यह माना जाता है कि उनके जीवन और विचारों पर महात्मा गाँधी के साथ–साथ मार्टिन लूथर किंग जूनियर का गहरा प्रभाव रहा।[43]

एशिया में गाँधी चिन्तन की व्यापकता

मदर टेरेसा

मदर टेरेसा का जन्म मेसीडोनिया के स्पोकजे शहर में हुआ था। लगभग 12 वर्ष की उम्र के बाद उन्होनें निर्णय किया कि उन्हें मिशनरी बनकर समाज में प्रभु यीशु के प्रेम का प्रसार करना है। अठारह वर्ष की होने तक वे स्पोकजे में अपने माता–पिता का घर छोड़ कर ननों के आयरिश समुदाय सिस्टर लोरेतो की सदस्य बन चुकी थी, जिसका एक मिशन भारत भी था। उन्होनें एक नन के रूप में दीक्षा ली और वे कलकत्ता के सेंट मेरी हाई स्कूल में भूगोल और धर्मशास्त्र पढ़ाने लगी। इस दौरान कलकत्ता की गरीबी ने उन्हें गहरे तक विचलित किया और अंततः वर्ष 1948 में उन्होनें अपने उच्चाधिकारियों की अनुमति लेकर कांवेन्ट स्कूल में पढ़ाना छोड़ दिया और सीधे गरीब बस्तियों के लोगों के बीच काम करना शुरू कर दिया।[44]

मदर टेरेसा के गरीबों, अनाथों एवं मरणासन्न बीमार व्यक्तियों के लिये किए गए कार्य गाँधी दर्शन से प्रभावित है। उन्होनें गरीबों के कल्याण के कार्य करने हेतु पटना में अमेरिकी मेडिकल मिशनरीज से गहन प्रशिक्षण लिया। शुरूआत में उन्होनें झुग्गी–झोंपड़ियों के बीच रहने वाले बेघर बच्चों को पढ़ाना शुरू किया। जल्दी ही अनेक लोग स्वेच्छा से उनके काम में शामिल होने लगे और चर्च तथा म्युनिसिपल अधिकारियों की ओर से उन्हें आर्थिक सहायता भी मिलनें लगी। इस दौरान मदर टेरेसा अपनी डायरी में लिखती है, ''आज मैनें एक अच्छा सबक सीखा। गरीबों के लिये गरीबी बहुत कठिन होती है। एक घर की तलाश में मैं इतना चली कि मेरे हाथ पैर सब दुखने लगे। मैं सोचने लगी उनके शरीर और आत्मा में तो कितना दर्द होता होगा, जिन्हें रोजाना रोटी, कपड़े और स्वस्थ रहने के लिये इतनी मेहनत करनी पड़ती है।[45]

मदर टेरेसा ने गरीब और बीमार लोगों की सहायता के लिये मिशनरीज ऑफ चैरिटी की स्थापना की। मिशनरीज ऑफ चैरिटी का पहला लक्ष्य उन लोगों की देखभाल और सेवा करना था, जिनकी देखभाल के लिए कोई तैयार

नहीं था। मदर टेरेसा का जीवन गरीबों में भी जो सबसे गरीब है उसकी सेवा को समर्पित था। वे कहती थी, 'ईश्वर अब भी इस दुनिया से प्रेम करता है और उसने आपको मुझे हम सबको गरीबों के प्रति अपने प्रेम को बांटने के लिये भेजा है।

वह ऐसे गरीब परिवारों में गई, उन्होनें स्वयं अपने हाथों से बच्चों के घावों को साफ किया, सड़क किनारे बेसहारा पड़े बीमार–बुजुर्गो की सेवा की और तपेदिक और भूख से मर रही बूढ़ी औरतो की तीमारदारी की। जिसे कोई प्यार नहीं देता, जिसकी देखभाल के लिए कोई तैयार नहीं है, उनमें प्रभु यीशु को खोजने और उनकी सेवा करने के इरादे के साथ वे हर सुबह निकलती थी। एक–एक कर उनकी पुरानी छात्राएँ इस मिशन में उनके साथ जुड़ती गई। मदर टेरेसा का मानना था कि उनके समूह का काम अन्य जनकल्याणकारी कामों से बहुत अलग था। उनकी साथी ननें हर गरीब और जरूरतमंदो में प्रभु यीशु की छवि देखती थी। उनकी साथी ननों का पहला लक्ष्य गरीबी और बीमारी में मृत्यु के कगार पर खड़े लोगों के जीवन के अंतिम दिनों को प्रेम और गरिमा प्रदान करना था। उनके द्वारा स्थापित घरों में मृत्यु को प्राप्त होने वाले मुसलमानों को कुरान की आयतों के साथ, हिन्दुओं को मुँह में गंगाजल की बूंदे देकर और ईसाइयों को ईश्वर की पंक्तियों के साथ अंतिम विदाई दी जाती थी। यह एक ईसाई संत की धार्मिक उदारता का प्रमाण है।

मदर टेरेसा ने वर्ष 1952 में कलकत्ता के कालीघाट में बीमार और मरणासन्न लोगों की सेवा के लिये सेक्रेड हार्ट इंस्टीट्यूट की स्थापना की। इसी वर्ष उन्होनें पाँच महाद्वीपों में भी अपने काम का प्रसार किया। उनके इन्ही प्रयासों की मान्यता के रूप में उन्हें टेंपलटन पुरस्कार दिया गया। गरीबों की आध्यात्मिक और भौतिक जरूरतों को ध्यान में रखते हुए मदर टेरेसा ने 1963 में मिशनरीज ऑफ चैरिटी ब्रदर्स की स्थापना की।

मदर टेरेसा का अपने कार्यो के लिए कई तरह के सम्मान और पुरस्कार भी मिले जिनमें 1962 में भारत सरकार की ओर से दिया जाने वाला पद्मश्री

सम्मान शामिल है। इसके अलावा 1971 में पोप जॉन 13 शांति पुरस्कार, 1972 में अंतर्राष्ट्रीय शांति और सद्भावना की दिशा में काम करने के लिए नैहरू पुरस्कार और 1980 में भारत रत्न से सम्मानित किया गया। नोबेल पुरस्कार प्रदान किये जाने के अवसर पर आयोजित होने वाले भोज में मदर टेरेसा ने यह कहकर शामिल होने से इंकार कर दिया कि इसके बजाय 192,000 डॉलर की यह राशि भारत में गरीबों की मदद के लिए खर्च की जाए तो उसका ज्यादा सही उपयोग होगा। उनका कहना था कि दुनिया के पुरस्कार और सम्मान उनके लिए तभी मायने रखते है जब वे उन्हें गरीबों की मदद करने में मदद करते हों। यह पुरस्कार प्रदान किये जाने के अवसर पर एक साक्षात्कारकर्ता ने मदर टेरेसा से पूछा कि दुनिया में शांति स्थापित करने के लिए क्या किया जाना चाहिए ? इस पर मदर टेरेसा ने जवाब दिया था, अपने घर जाकर अपने बच्चों और परिवार से प्रेम करो। मदर टेरेसा का संपूर्ण जीवन और श्रम प्रेम में आनन्द के दर्शन से संचालित था और वे मनुष्य मात्र की गरिमा और महानता में यकीन करती थी और प्रेम तथा विश्वास के साथ की जाने वाली छोटी चीजों को भी बहुत महत्व देती थी।

मदर टेरेसा द्वारा संत भाव से की जाने वाली सेवाएँ अक्सर लोगों को अचम्भे में डाल देती है। मदर टेरेसा को इसके अलावा कोई बात समझ में नहीं आती थी कि प्रत्येक मनुष्य दुर्लभ और अत्यंत महत्वपूर्ण है। ब्रिटिश साक्षात्कारकर्ता पौली टायनबी इस बात पर स्तब्ध थे कि मदर टेरेसा के मन में किसी के भी प्रति कोई आक्रोश नहीं था। वे इस बात से भी विचलित नहीं होती थी कि वे जिन लोगों की सेवा कर रही है, किस राजनीतिक एवं आर्थिक व्यवस्था ने उन्हें इस हालत में पहुँचाया है। मदर टेरेसा का प्राथमिक सिद्धांत मात्र निरंतर प्रेम था।[46]

वे कहती थी कि सबसे बड़ी बीमारी कोढ़ या तपेदिक नहीं है, बल्कि सबसे बड़ी बीमारी अवांछित होने का अहसास है। अपनी पुस्तक 'माई ऑन वर्ड्स' में वह लिखती है, भूख सदा रोटी की होती है, भूख प्यार की होती है,

भूख उदारता की होती है और भूख विचारशीलता की होती है और इस सबका अभाव ही वह दारिद्रय है जिसके कारण लोगों को बहुत तकलीफ उठानी पड़ती है। अतः गाँधीजी के सेवा, श्रम, मानवता व प्रेम संबंधी दर्शन को व्यापक बनाने में मदर टेरेसा का बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा।

दलाई लामा

गाँधी दर्शन से प्रभावित परम् पावन चौदहवें दलाई लामा तेनजिन ग्यात्सो 29 मई 2011 तक तिब्बत के राजकीय प्रमुख रहे और उपरोक्त तिथि पर उन्होनें अपनी संपूर्ण राजनीतिक शक्तियाँ तथा उत्तरदायित्व प्रजातांत्रिक तरीके से चुने हुए तिब्बती नेतृत्व को हस्तांतरित किये। अब वे केवल तिब्बत के सर्वोच्च आध्यात्मिक गुरू है। चीन द्वारा 1949 में तिब्बत पर आक्रमण के बाद 1950 में परम् पावन से पूरी राजनैतिक सत्ता संभालने का आग्रह किया गया। 1954 में वे माओचे तुंग, देंग जियोपिंग और चाऊ एन लाई के साथ शांति वार्ता में बीजिंग गए। पर अंततः 1959 में चीनी सेना द्वारा ल्हासा के तिब्बती राष्ट्रीय संघर्ष को बड़ी क्रूरता से कुचले जाने के कारण परम् पावन को शरण लेने के लिए बाध्य होना पड़ा। तब से वे उत्तरी भारत के धर्मशाला में निवास करते है जो कि निर्वासित तिब्बती राजनैतिक प्रशासन का केन्द्र है।

दलाई लामा ने अपनी प्रजातंत्रीय प्रक्रिया की कड़ी में तिब्बत के प्रजातंत्रीय संविधान का एक प्रारूप प्रस्तुत किया, उन्होनें भविष्य के स्वतंत्र तिब्बत के संविधान के दिशा निर्देश प्रकाशित किए। उनके द्वारा जो सुधार सुझाए गए थे वह तिब्बती समुदाय के लिए एक सच्चे शरणार्थी प्रजातंत्रीय प्रशासन के रूप में साकार हुए।

शांति पहल

तिब्बत की बिगड़ती परिस्थिति के शांति समाधान के लिये एक पहले कदम के रूप में सितम्बर 1987 में परम् पावन ने पाँच बिन्दु शांति प्रस्ताव रखा। उन्होनें कल्पना की कि तिब्बत एक आश्रय स्थल बनेगा, एशिया के केंद्र में शांति का क्षैत्र जहाँ सभी सत्व समन्वय की भावना के साथ रह सकेंगे और उस

कोमल वातावरण को सुरक्षित रखा जा सकेगा। परम् पावन द्वारा प्रस्तावित इन विभिन्न शांति प्रस्तावों पर एक सकारात्मक उत्तर देने में चीन अब तक असफल रहा है। 21 दिसम्बर 1987 को वॉशिंगटन डी. सी. में संयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस को संबोधित करते हुए परम् पावन ने निम्न शांति प्रस्ताव रखे –

1. संपूर्ण तिब्बत को एक शांति क्षैत्र में परिवर्तित किया जाए।
2. चीन की जनसंख्या स्थानांतरण की नीति जो तिब्बतियों के अस्तित्व के लिए ही एक खतरा है, को पूरी तरह से छोड़ दिया जाए।
3. तिब्बतियों के आधारभूत मानवीय अधिकार और प्रजातंत्रीय स्वतंत्रता के प्रति सम्मान की भावना।
4. तिब्बत के प्राकृतिक पर्यावरण की पुनर्स्थापना और संरक्षण तथा चीन द्वारा आणविक शस्त्रों के निर्माण और परमाणु कूड़ादान के रूप में तिब्बत को काम में लाये जाने को छोड़ना।
5. तिब्बत के भविष्य की स्थिति और तिब्बतियों तथा चीनियों के आपसी संबंधो के विषय में गंभीर बातचीत की शुरूआत।[47]

15 जून 1988 को यूरोपीयन संसद में परम् पावन ने पाँच बिन्दु शांति योजना के अंतिम बिन्दु का विस्तार करते हुए एक और विस्तृत प्रस्ताव रखा। उन्होनें तिब्बत के तीनों प्रांतो में स्वशासित प्रजातंत्रीय राजनैतिक सत्ता के लिए चीनी और तिब्बतियों के बीच बातचीत का रास्ता सुझाया। यह सत्ता चीनी संघ के साथ होगी तथा चीन सरकार तिब्बत की विदेश नीति तथा सुरक्षा के लिए उत्तरदायी रहेगी।

परम् पावन दलाई लामा एक शांतिप्रिय व्यक्ति है। वे स्वयं को एक साधारण बौद्ध भिक्षु कहकर संबोधित करते है। उन्हें सार्वभौमिक पहचान तब मिली जब 1989 में तिब्बत को स्वतंत्र कराने में उनके अहिंसात्मक संघर्ष के लिए उन्हें नोबेल शांति पुरस्कार से सम्मानित किया गया। अत्यधिक आक्रामक स्थितियों में भी वे निरंतर अहिंसात्मक नीतियों का समर्थन करते रहे है। वे

पहले नोबेल विजेता हुए है जिन्होनें वैश्विक पर्यावरण की समस्याओं के प्रति अपनी चिंता जताई।

दलाई लामा की तीन मुख्य प्रतिबद्धताएँ

प्रथमतः, एक मानव जीवन के स्तर पर परम पावन की पहली प्रतिबद्धता मानवीय मूल्यों जैसै करूणा, क्षमा, धैर्य, संतोष और आत्म अनुशासन का विकास करना है। सभी मानव जीव समान है। हम सभी सुख चाहते है और दुख नहीं चाहते। ऐसे व्यक्ति जो धर्म पर विश्वास नहीं करते, वे भी अपने जीवन को और सुखी बनाने में इन मानवीय मूल्यों के महत्व को पहचानते है। परम् पावन इन मानवीय मूल्यों को धर्म निरपेक्ष नैतिकता के नाम से संबोधित करते है। वे इन मानवीय मूल्यों के महत्व के विषय में बात करने तथा प्रत्येक मिलने वाले के साथ उसे बांटने के लिए प्रतिबद्ध है।[48]

द्वितीय, धार्मिक अभ्यासी के स्तर पर, परम् पावन की दूसरी प्रतिबद्धता धार्मिक सौहार्द की भावना और विश्व की प्रमुख धार्मिक परंपराओं की आपसी समझ को बढ़ावा देना है। दार्शनिक स्तर पर अंतर होने के बावजूद सभी प्रमुख धर्मो में अच्छे मानव बनाने की एक समान क्षमता है। अतः सभी धार्मिक परंपराओं के लिये यह महत्वपूर्ण है कि वे एक–दूसरे का सम्मान करें तथा एक–दूसरे की परंपराओं के मूल्य को पहचाने। जहाँ तक एक सत्य, एक धर्म का संबंध है इसका एक वैयक्तिक स्तर पर महत्व है। परंतु एक विशाल समुदाय के लिये कई सत्यों, कई धर्मो की आवश्यकता है।[49]

केंद्रीय तिब्बती अध्ययन विश्वविद्यालय के प्रांगण में प्रवचन करते हुए उन्होनें धर्म को मानने वाले लोगों की प्रशंसा करते हुए कहा कि ऐसे धर्मावलंबी जो निरंतर परोपकार हेतु प्रयासरत रहते है, वे बधाई के पात्र है, ऐसे लोग उन लोगों की तुलना में अधिक सुखी होते है जो धर्म को नहीं मानते। उदाहरण के तौर पर परम् पावन दलाई लामा ने महात्मा गाँधी का दृष्टांत देते हुए कहा कि वे धर्म में बहुत आस्था रखते थे और दीन हीनो के प्रति सद्भाव रखते हुए एक फकीर के रूप में सत्य अहिंसा के बल पर भारत को आजादी दिलवाई।

तृतीय, परम् पावन तिब्बती हैं तथा दलाई लामा का नाम धारण किये है। तिब्बतियों का उन पर विश्वास है। इसलिये उनकी तीसरी प्रतिबद्धता तिब्बती प्रश्न को लेकर है। परम् पावन पर तिब्बतियों के न्यायिक संघर्ष के प्रवक्ता का उत्तरदायित्व है। जहां तक इस तीसरी प्रतिबद्धता का प्रश्न है, एक बार तिब्बतियों तथा चीनियों के बीच एक आपसी लाभकारी समाधान निकलते ही वह नहीं रहेगा। परंतु परम् पावन अपनी अंतिम श्वांस तक अपनी पहली दो प्रतिबद्धताओं पर कायम रहेंगे।[50]

विश्व एक मानव परिवार के रूप में

गाँधीजी की विश्व बंधुत्व की धारणा से प्रभावित होकर उन्होनें कहा, आज के विश्व की यह आवश्यकता है कि हम मानवीयता के एकत्व को स्वीकार करें। अतीत में अलग रह रहे समुदाय एक दूसरे को आधारभूत रूप से अलग–अलग समझ सकते थे और यहाँ तक कि उनका अस्तित्व नितांत एकाकी था। परन्तु आजकल विश्व के किसी एक भाग की घटना अंततः समूचे ग्रह को प्रभावित करती है। अतः हमें हर बड़ी स्थानीय समस्या को उसके प्रारंभ से ही वैश्विक समस्या के रूप में देखना चाहिए। अब हम बिना विध्वंसक परिणाम के राष्ट्रीय, जातीय या वैचारिक बाधाएँ नहीं खड़ी कर सकते। हमारी बढ़ती पारस्परिक अन्योन्याश्रितता की भावना के संदर्भ में दूसरों के हितों के बारे में सोचना स्पष्ट रूप से आत्महित का सर्वश्रेष्ठ रूप है।[51]

सार्वभौमिक उत्तरदायित्व

गाँधीजी के पदचिन्हो पर चलते हुए उन्होनें सार्वभौमिक उत्तरदायित्व के संबंध में कहा कि, मैं किसी प्रकार के आंदोलन के निर्माण अथवा आदर्शो का पक्षधर बनने में विश्वास नहीं करता। न ही मुझे किसी एक विशेष विचार को प्रोत्साहित करने के लिये किसी संगठन के गठन का अभ्यास अच्छा लगता है, जिसका अर्थ हो जाता है कि केवल एक विशेष समूह के लोग ही उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उत्तरदायी है। जबकि बाकी सबको इससे छूट रहती है।[52] हमारी वर्तमान परिस्थितियों में हममें से कोई भी यह मानकर नहीं बैठ सकता

कि कोई अन्य हमारी समस्याओं का समाधान करेगा, हममें से प्रत्येक को अपने हिस्से के सार्वभौमिक उत्तरदायित्व को लेना होगा। इस प्रकार जब चिंतित उत्तरदायी व्यक्तियों की संख्या अधिक हो जाएगी तो दस, सौ, हजार और हजारो–हजार ऐसे लोग आम परिस्थितियों में बहुत अधिक सुधार लाएँगे। सकारात्मक परिवर्तन शीघ्रता से नहीं आता और यह अनवरत प्रयास की माँग करता है। यदि हम निरूत्साहित हो जाएँ तो हम सरल लक्ष्य भी प्राप्त नहीं कर पाएँगे। सतत् दृढ़ इच्छाशक्ति, प्रयास से हम सबसे कठिन उद्देश्य को भी प्राप्त कर सकते है। सार्वभौमिक उत्तरदायित्व के व्यवहार को अपनाना आवश्यक रूप से एक निजी निर्णय है। करूणा की वास्तविक परीक्षा मात्र खोखली चर्चाओं से नहीं बल्कि हमारे दैनिक जीवन के व्यवहार से होती है। फिर भी कुछ मूलभूत विचार परोपकार के अभ्यास के लिये आधार है। यद्यपि शासन की कोई भी प्रणाली सर्वथा उचित नहीं मानी जा सकती, पर फिर भी लोकतंत्र को मानव की मूलभूत प्रकृति के सबसे निकट माना जा सकता है। इसलिये हममें से जो लोग इसका आनंद उठाते है, उन्हें सभी लोगों के अधिकारों के लिए अपने संघर्ष को बनाए रखना होगा। इसके अतिरिक्त लोकतंत्र ही वह ठोस आधार है, जिस पर वैश्विक राजनैतिक ढाँचे को निर्मित किया जा सकता है। एक रूप में कार्य करने के लिए हमें सभी लोगों और देशों के उनके विशिष्ट गुणों और मूल्यों को बनाए रखने के प्रयासों का सम्मान करना चाहिए।[53]

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को करूणा भाव के दायरे में लाने के लिये अत्यधिक प्रयासों की आवश्यकता है। आर्थिक असमानता विशेषकर विकसित और विकासशील देशों के बीच इस ग्रह पर दुःख का सबसे बड़ा स्रोत है। इस दुःख में कमी लाने के लिये बहुराष्ट्रीय कंपनियों को निर्धन देशों के शोषण में कमी लानी चाहिए। विकसित देशों में उपभोक्तावाद को बढ़ावा देने के लिये अनमोल संसाधनों का दोहन विनाशकारी है। दुर्बल और विविधता से वंचित

अर्थव्यवस्थाओं को सशक्त करना राजनैतिक और आर्थिक स्थिरता के विकास हेतु अधिक बुद्धिमानी भरी योजना होगी।

आधुनिक विज्ञान एवं धर्म

दलाई लामा वैश्विक समुदाय से अपील करते है कि हमें मानवीय मूल्यों के प्रति हमारी प्रतिबद्धता का नवीनीकरण करने की आवश्यकता है। यद्यपि विज्ञान का उद्देश्य सत्य के बारे में जानना है, पर इसका अन्य लक्ष्य जीवन की गुणवत्ता में सुधार भी है। परोपकारी प्रेरणा के बिना वैज्ञानिक लाभदायक तकनीक और केवल कामचलाऊ तकनीक में अंतर नहीं कर सकते। यदि हम अपना कार्य नैतिक आधारशिला पर आधारित नहीं करते तो हम जीवन के अत्यधिक कोमल ताने–बाने को बहुत क्षति पहुँचा रहे है।

विश्व में धर्म का उद्देश्य केवल सुंदर गिरजाघर या मंदिर बनाना नहीं है, अपितु सकारात्मक मानवीय गुण जैसै सहनशीलता, उदारता और प्रेम का परिष्कार करना है। विश्व का प्रत्येक धर्म, फिर उसकी दार्शनिक सोच जो भी हो, वह सबसे पहले इस सिद्धांत पर आदर्शित होता है कि हमें अपनी स्वार्थ भावना कम करनी चाहिए और दूसरों की सेवा करनी चाहिए। दुर्भाग्य से कई बार धर्म ही समस्याओं का समाधान निकालने के स्थान पर कलह का कारण बनता है।[54]

अंतर्राष्ट्रीय संबंध

पिछले कुछ वर्षो में विश्व नाटकीय रूप से परिवर्तित हुआ है। दलाई लामा के विचार से, हम सब सहमत होंगे कि शीतयुद्ध की समाप्ति और पूर्वी यूरोप और पूर्व सोवियत संघ में साम्यवाद का पतन एक नया ऐतिहासिक युग लेकर आया है। जब हम 90 के दशक को देखेंगे तो पायेंगे कि 20वी सदी में मानवीय अनुभवों ने एक चक्र पूरा कर लिया है। यह मानव इतिहास का सबसे कष्टदायी काल रहा है, एक ऐसा समय जब हथियारों की घातक क्षमता में बढ़ोतरी के कारण पहले की तुलना में अधिक लोग हिंसा के कारण प्रभावित हुए और मारे गये है। इसके अतिरिक्त, हमने कट्टरपंथी विचारधाराओं के बीच

एक–दूसरे का अंत करने की ऐसी प्रतिस्पर्धा देखी है, जिसने मानवीय समुदाय को छिन्न–भिन्न कर दिया। एक ओर बलप्रयोग और विध्वंसकारी शक्ति तो दूसरी ओर स्वतंत्रता, बहुलवाद, निजी अधिकार और लोकतंत्र। मेरा मानना है कि इस बड़ी प्रतिस्पर्धा के परिणाम अब सामने आ चुके है। यद्यपि आज भी शांति, स्वतंत्रता और लोकतंत्र जैसी अच्छी मानवीय भावनाओं को क्रूरता और बुराई के कई रूपों का सामना करना पड़ता है। फिर भी इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि सभी जगह अधिकांश लोग इन्हीं के विजय के पक्षधर है। मानवीय प्रकृति के अनुसार हर कोई सत्य की सराहना करता है और सम्मान तो हमारे रक्त में है। सत्य श्रेष्ठ है तथा स्वतंत्रता और लोकतंत्र की आधारशिला है। इस बात से कोई अंतर नहीं पड़ता कि आप दुर्बल है या सबल अथवा आपके उद्देश्य से कम लोग जुड़े है या अधिक, सत्य की ही विजय होगी। 1989 के सफल स्वतंत्रता आंदोलन और उसके बाद के मानव की मूलभूत भावनाओं पर आधारित आंदोलन इस बात का स्मरण कराते है कि आज भी सत्य का हमारे राजनैतिक तंत्र में निरा अभाव है। विशेष तौर पर अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में हम सत्य को बहुत कम सम्मान देते है। अंततः होता यह है कि दुर्बल देश शक्तिशाली देशों द्वारा दमित और शोषित होते है। शांतिपूर्ण परिवर्तन की सीख देते हुए दलाई लामा कहते है, अतीत में परतंत्र नागरिक प्रायः स्वतंत्रता के संघर्ष में हिंसा का सहारा लेते थे। अब महात्मा गाँधी और मार्टिन लूथर किंग जूनियर के पद चिन्हों पर चलते हुए ये शांतिपूर्ण आंदोलन भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी सफल अहिंसक परिवर्तन का बहुत अच्छा उदाहरण प्रस्तुत कर रहे है।[55]

अहिंसा और अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था

दलाई लामा अहिंसा का विचार रखते हुए कहते है, प्रत्येक दिन मीडिया में आतंकवाद, अपराध और हमले की घटनाओं की खबरें आती है। मैं आज तक भी कभी ऐसे देश में नहीं गया जहाँ मृत्यु, हिंसा और मानव हत्याओं की त्रासदी भरे समाचार, रक्तपात की दुखद कहानियों ने समाचार पत्रों और आकाशवाणी

को नहीं भर दिया हो। इस प्रकार की रिपोर्टिंग की मानो पत्रकारों और उनके पाठकों व श्रोताओं को लत सी लग गयी है। परन्तु मानव जाति का एक बड़ा भाग विध्वंसकारी रूप से कार्य नहीं करता। इस ग्रह पर मौजूद छः अरब लोगों में बहुत कम वास्तव में हिंसा के कार्य करते है। हममें से अधिकांश तो यथासंभव शांतिपूर्ण रहना ही पसंद करते है। प्रत्येक विध्वंसक कार्य हमारी मूल प्रवृत्ति के विरूद्ध है। मुझे विश्वास है कि हर कोई इस बात पर सहमत है कि हमें हिंसा पर काबू पाना चाहिए, लेकिन यदि हमें इसे संपूर्ण रूप से समाप्त करना है तो पहले यह विश्लेषण करना चाहिए कि इसका कोई मूल्य है या नहीं। यदि हम इस प्रश्न का सामना अत्यधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण से करें तो हम पाते है कि कुछ अवसरों पर हिंसा वास्तव में उपयोगी प्रतीत होती है। कोई भी बल से समस्या को शीघ्र सुलझा सकता है। पर इसी समय यह सफलता अधिकांश रूप से दूसरों के अधिकारों और कल्याण की कीमत पर होती है। परिणाम यह होता है कि यद्यपि समस्या का त्वरित समाधान हो जाता है पर दूसरी के बीज बोए जा चुके होते है। उन्होनें कहा मैं प्रार्थना करता हूँ कि दमन की हिंसा और संघर्ष की विषम स्थितियों का सामना करते रहने के बावजूद चीन के लोकतांत्रिक आंदोलन से जुड़े लोग हमेशा शांतिप्रिय ही रहेंगे। मुझे विश्वास है कि वे रहेंगें यद्यपि युवा चीनी छात्रों का बहुमत अत्यधिक कड़े साम्यवाद के दौरान पैदा हुआ और पला–बढ़ा, 1989 के बसंत में उन्होनें विरोध के दौरान महात्मा गाँधी की शांत प्रतिरोध की रणनीति का उपयोग किया। यह अनोखा है और अच्छी तरह स्पष्ट करता है कि सभी मानव शांति के पथ का पालन करना चाहते है, फिर भले ही उनके मस्तिष्क में कोई विशिष्ट वाद कूट–कूटकर क्यों न भर दिया गया हो।[56]

शांति के क्षैत्र

दलाई लामा कहते है, एशियाई समुदाय में 'शांति स्थल' कहे जाने वाले क्षैत्र में, मैं तिब्बत की भूमिका एक निष्पक्ष, असैन्य क्षैत्र के तौर पर देखता हूँ, जहाँ हथियारों पर प्रतिबंध हो और लोग प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित करते

हुए रहते हो। यह मात्र कपोल–कल्पना नहीं है, बल्कि तिब्बती हम पर आक्रमण से पूर्व हजारों वर्षो से ठीक इसी प्रकार का जीवन व्यतीत कर रहे थे। जैसा कि हर कोई जानता है, तिब्बत में बौद्ध सिद्धांतों के अनुसार सभी वन्यप्राणी संरक्षित थे। इसके अतिरिक्त विगत लगभग 300 वर्षो से हमारी कोई संगठित सेना नहीं थी। हमारे तीन महान धार्मिक राजाओं के शासनकाल के बाद छठी और सातवी सदी में ही तिब्बत ने युद्ध को राष्ट्रीय नीति से बाहर कर दिया था। विकासशील क्षैत्रीय संबंधों एवं निःशस्त्रीकरण के संबंधों पर उन्होनें सुझाव दिया कि, हर समुदाय के हृदय में एक या अधिक देश हो सकते है। जिन्होनें शांति का क्षैत्र बनने का निश्चय कर लिया हो और जहाँ सैन्य शक्ति पूर्ण रूप से प्रतिबंधित हो। यह पुनः मात्र एक स्वप्न नहीं है। चार दशक पूर्व दिसंबर 1948 में कोस्टारिका ने अपनी सेना भंग कर दी थी। हाल ही में स्विट्जरलैण्ड की 37 फीसदी जनता ने सेना को समाप्त करने पर मुहर लगाई। चेकोस्लोवाकिया की नई सरकार ने सभी हथियारों के उत्पादन और निर्यात पर प्रतिबंध लगा दिया है। यदि लोग इस प्रकार का निर्णय लें तो देश ऐसे क्रांतिकारी कदम उठाकर अपने मूल स्वभाव को ही बदल सकते है।[57] उन्होनें वर्तमान चर्चा में फिलहाल संयुक्त राष्ट्र संघ को शामिल नहीं किया है। उन्होनें कहा, भविष्य के लिये इसे अपने ढाँचे में सुधार लाना होगा। संयुक्त राष्ट्र संघ को लेकर हमेशा से मेरी बहुत आशाएँ रही है और मैं किसी प्रकार की आलोचना से बचते हुए केवल इतना कहना चाहूँगा कि दूसरे महायुद्ध के पश्चात् की परिस्थिति के अनुसार जिस रूप में चार्टर के विषय में सोचा गया था, वह अब बदल चुका है। उस परिवर्तन के साथ ही संयुक्त राष्ट्र को अधिक लोकतांत्रिक बनाने का अवसर भी आ गया है, विशेष तौर पर पाँच स्थायी सदस्यों तक ही सीमित सुरक्षा परिषद को लेकर, जिसमें और अधिक प्रतिनिधि रखे जाने चाहिए।

आंग सान सू की

भारत के पड़ौस में स्थित बर्मा में लोकतांत्रिक अधिकार के लिए हुए आंदोलन को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। आम बर्मा वासी के लिए

आंग सान सू की स्वतंत्रता की इच्छा का प्रतीक रही है, जिसने उनके मन में आजादी की इच्छा जीवित रखी। सू की बर्मा की लोकतांत्रिक एक्टिविस्ट और नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी की नेता है। वह अपनी स्वतंत्र चेतना और अहिंसक प्रतिरोध की प्रवक्ता के तौर पर लंबे समय से कैदी का जीवन गुजार रही है। उनके पिता आंग सान को आधुनिक बर्मा का पिता माना जाता है। वे आधुनिक बर्मी सेना के संस्थापक थे। उन्होनें 1947 ई. में इंग्लैण्ड से बर्मा को आजाद कराया।[58]

सू की 1988 ई. में अपनी माँ की देखभाल के लिये बर्मा लौटी तो वहाँ राजनीतिक उथल–पुथल का माहौल था। संयोग से इन्हीं दिनों लंबे समय से सत्ताधारी सोशलिस्ट पार्टी के जनरल विन के विरूद्ध जनता ने आंदोलन शुरू कर दिया। बर्मा में लोकतंत्र की स्थापना के लिये 8 अगस्त 1988 ई. (8.8.88 जिसे एक पवित्र दिन माना गया) को एक बड़ा प्रदर्शन किया गया, जिसे सरकार ने बर्बरता से कुचल दिया। राजधानी में श्वेदेगोन पेगोडा के सामने 26 अगस्त 1988 ई. को सू की ने पाँच लाख लोगों को संबोधित किया और लोकतांत्रिक सरकार की मांग की। बाद में नई सैन्य जुंटा ने सत्ता संभाल ली। इसी माह बाद के दिनों में नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी की स्थापना की गई, सू की जिसकी महासचिव चुनी गई।[59]

सू की महात्मा गाँधी के अहिंसा दर्शन से प्रभावित है। गाँधीजी से प्रेरणा लेते हुए उन्होनें देश भर का दौरा किया, रैलियां की ओर लगातार लोकतंत्र की स्थापना के लिए संघर्ष करती रही। वे बुद्ध के विचारों को भी अपने लिए प्रेरक मानती है। इनसे बने सोच के आधार पर सू की ने 27 सितंबर 1988 ई. से नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी के माध्यम से लोकतंत्रीकरण के अपने काम को आगे बढ़ाया। उन्हें 20 जुलाई 1988 ई. को उनके घर में नजरबंद कर दिया गया। उन्हें इस शर्त पर रिहा करने के लिये कहा गया कि वे देश छोड़ देंगी, लेकिन इसके लिये सू की ने मना कर दिया।[60]

सू की का प्रसिद्ध भाषण है– भय से स्वतंत्रता, जो इस प्रकार शुरू होता है– यह शक्ति नहीं है जो भ्रष्ट करती है, बल्कि यह भय है। शक्ति खोने का भय उन्हें भ्रष्ट करता है, जो शक्तिमान है और शक्ति के डर से वे लोग भ्रष्ट हो जाते है, जिनके लिये इसे अर्जित किया गया होता है।[61] अपने राजनीतिक जीवन की शुरूआत से सू की को बार–बार नजरबंद रखा गया है। उनका अधिकांश समय एक अलग–थलग कैदी के तौर पर गुजरा है। इस दौरान उन्हें अपने पार्टी के सदस्यों और दूसरे देशों से आने वाले लोगों से नहीं मिलने दिया जाता है। विदेशी आगंतुकों और पत्रकारों को भी उनसे मिलने से रोका जाता है।

10 जुलाई 1995 ई. को सू की को सरकार ने नजरबंदी से रिहा कर दिया। लेकिन उन्हें यह साफ बता दिया गया कि वह अपने परिवार से मिलने विदेश जाएगी तो फिर उन्हें देश में वापस आने की अनुमति नहीं मिलेगी। उन्हें सितंबर 2000 में फिर से नजरबंद कर दिया गया। सू की, की लंबी नजरबंदी के दौरान संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिनिधियों और कई स्वतंत्र शख्सियतों द्वारा बर्मा की सैन्य जुंटा सत्ता से मध्यस्थता के अनेकों प्रयास किए गये, लेकिन इन प्रयासों को कोई सफलता नहीं मिली। 16 मई 2007 ई. को विश्व के 59 नेताओं ने म्यांमार की सैनिक सत्ता को सू की और अन्य राजनैतिक बंदियों की रिहाइ के लिए एक पत्र लिखा। इस पत्र पर पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति जिमी कार्टर, जॉर्ज बुश, बिल क्लिंटन, ब्रिटेन की पूर्व प्रधानमंत्री मारग्रेट थेचर, पोलैण्ड के पूर्व राष्ट्राध्यक्ष नोबेल विजेता लेक वालेसा, दक्षिण कोरिया के राष्ट्रपति किम डे जुंग और फिलिपीन की पूर्व राष्ट्राध्यक्ष कोराजोन एक्विनो जैसै व्यक्तियों के हस्ताक्षर थे। सू की,की नजरबंदी बढ़ाये जाने पर संयुक्त राष्ट्र संघ के वर्तमान महासचिव बान की मून ने अन्य राजनीतिक बंदियो के साथ उनकी रिहाई की मांग की। साथ ही उन्होनें म्यांमार में लोकतंत्र की बहाली और मानव अधिकारों को गरिमा प्रदान करने की मांग की।

30 मई 2007 ई. को आसियान के देशों ने सैन्य शासन से सू की की नजरबंदी बढ़ाने के निर्णय पर पुनर्विचार का आग्रह किया। भारतीय संसद के दोनों सदनों ने सू की के 62वें जन्मदिन पर एक पत्र लिखा। प्रसिद्ध गाँधीवादी और राज्यसभा सदस्य निर्मला देशपाण्डे के नेतृत्व में लिखे इस पत्र में कहा गया, आप म्यांमार की वास्तविक प्रधानमंत्री है।

सू की को 1991 ई. में नोबेल पुरस्कार मिला। पुरस्कार समिति का कहना था, ''नार्वे की नोबेल पुरस्कार समिति ने म्यांमार की आंग सान सू की को लोकतंत्र और मानव अधिकारों की बहाली हेतु उनके द्वारा चलाए गए अहिंसक संघर्ष के लिए शांति का नोबेल पुरस्कार देने का निर्णय किया है। सू की का संघर्ष हाल के वर्षो में एशिया में नागरिक साहस का एक असाधारण उदाहरण है। सू की शोषण के विरूद्ध संघर्ष का महत्वपूर्ण प्रतीक बन गई है।

सू की को 1991 ई. के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित करते हुए नार्वे की नोबेल पुरस्कार समिति यह महसूस करती है कि विश्व में जो भी लोकतंत्र की बहाली, मानव अधिकारों और नैतिक मूल्यों के लिये शांतिपूर्ण साधनों से संघर्ष कर रहे है, सू की के अतुलनीय प्रयासों ने उन सभी लोगों के साथ समर्थन जताया है। इसलिये उनका सम्मान उन सभी संघर्षो का भी सम्मान है। (ओस्लो, 14 अक्टूबर 1991)

खान अब्दुल गफ्फार खान

सरहदी गाँधी के नाम से मशहूर खान अब्दुल गफ्फार खान ने एक दिन की भी हिंसक राजनीति नहीं की, न सोची। जबकि वे जिस पख्तून कबीले से आते थे वहाँ हर विवाद हिंसक तरीके से ही निपटाने की परंपरा थी। खान साहब केवल अपने तक अहिंसक नहीं रहे, उन्होनें अपनी कौम के लाखों लोगों को अहिंसा का पाठ पढ़ाया जिसमें से कई हजार जवान तो उनके साथ हर संघर्ष में रहे। खान साहब के कार्यक्षैत्र को केवल उत्तर–पश्चिमी सीमा प्रांत जो अब पाकिस्तान का हिस्सा है, के पख्तूनों तक सीमित करना उनके साथ घोर अन्याय है, क्योंकि पूरे अविभाजित हिंदुस्तान के वे ऐसे नेता थे जिन्होनें भारत

विभाजन को कभी स्वीकार नहीं किया। भारत विभाजन को बेमन से स्वीकारनें वाले राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी भी इस मसले पर अपने इस अनुयायी के आगे शर्मिन्दा थे और प्रायः आक्रोश न दिखाने वाले बादशाह खान ने भी विभाजन स्वीकार करने के बाद गाँधीजी से शिकायत के स्वर में कहा था कि आपने हमें भेड़ियों के आगे छोड़ दिया है। खान साहब का गुस्सा सीमा प्रांत को पाकिस्तान के हिस्से में जाने देने पर था जबकि वे द्विराष्ट्र–सिद्धांत में विश्वास नहीं करते थे।[62]

रौलट कानून विरोध आंदोलन से बादशाह खान ने राष्ट्रवादी राजनीति की शुरूआत की। रौलट कानून के खिलाफ ही उन्होनें अपना पहला सार्वजनिक भाषण दिया और पहली जैल यात्रा की। 1920 ई. में नागपुर में हुए कांग्रेस के अधिवेशन मे उन्होनें हिस्सा लिया और उसके फैसले के अनुसार अपने प्रदेश में खिलाफत आंदोलन चलाने वाले अग्रणी लोगों में एक बने। 1921 ई. में उन्होनें उतमान जई में राष्ट्रीय स्कूल की स्थापना की। राजनैतिक गतिविधियों में संलिप्तता के चलते उन्हें जैल में डालकर काफी पीड़ित किया गया। 1924 ई. में जैल से छूटने के बाद वह फिर से शिक्षा और समाज सुधार के कार्यक्रमों में जुटे। उन्होनें सविनय अवज्ञा आंदोलन में अपने प्रदेश की अगुवाई की। उन्हें गिरफ्तार करके तरह–तरह की यातनाएँ दी गई।

खान साहब और उनके द्वारा तैयार लाल कुर्ती पख्तून स्वयंसेवकों पर, जो स्वयं को खुदाई–खिदमतगार कहते थे, इन बातों से ज्यादा फर्क नहीं पड़ा और वे अहिंसक ढंग से काम करते रहे। उन्हें 1934 ई. में कांग्रेस का राष्ट्रीय अध्यक्ष बनाने का प्रस्ताव आया तो उन्होनें यह कहते हुए इंकार कर दिया कि मैं सिपाही ही जन्मा था और सिपाही के रूप में ही मरूंगा। वे गाँधी के पक्के अनुयायी बन गये थे। खादी, चरखा, ग्रामोद्योग, बुनियादी तालीम मे उनकी गहरी आस्था थी। उन्होनें 1946–47 ई. में देश में फैले सांप्रदायिक दंगो को शांत करने में पूरे मन से काम किया।[63]

अपने विभाजन विरोधी नजरिये के चलते उनको बार–बार जैल में डाला गया, उनके समर्थकों का दमन किया गया। सैनिक तानाशाही के दौर में एक दौर ऐसा भी आया जब उन्हें अफगानिस्तान में निर्वासित जीवन बिताना पड़ा। खान साहब ने अपना भारत प्रेम कभी नहीं छोड़ा और न ही आजादी और सर्वधर्म समानता वाला मूल्य। पख्तूनों में भी इतनी शांति और अनुशासन मानने का चलन नहीं था। परंतु बिल्कुल सादा जीवन, अहिंसक संघर्ष तथा रचनात्मक काम करने वाले इस खान ने पख्तूनों को बदल डाला। उनका संपूर्ण जीवन एवं कार्य क्षैत्र गाँधीजी के विचारों से प्रभावित रहा है।

अन्ना हजारे

भारत में 21वीं सदी में जन्मी नयी पीढ़ी जिसने गाँधी दर्शन का यथार्थ नहीं देखा, उसने जीवनदर्शन व सत्याग्रह की ताकत अन्ना हजारे के व्यक्तित्व में महसूस की। लोकपाल बिल में स्वतः स्फूर्त आंदोलन में शरीक हुए लोग कहते सुने गए कि हमने जीवन में गाँधी को तो नहीं देखा लेकिन उनके प्रतिरूप को जरूर देख रहे है। इस आंदोलन ने तय किया कि अहिंसा के आंदोलन की क्या ताकत है, कैसै उसके समक्ष निरंकुश सरकारें भी भीगी बिल्ली बन जाती है। सरकार के सलाहकार इस भ्रम में थे कि सरकारी आतंक के सामने अन्ना भी बाबा रामदेव की तरह भाग खड़े होंगे। लेकिन गाँधी दर्शन के अनुयायी के अहिंसक प्रतिरोध ने सत्ताधीशो को लोकतंत्र की असली ताकत दिखा दी। अंततः सरकार को घुटने टेकने को मजबूर होना पड़ा। इस आंदोलन से एक चीज तो साफ हुई की गाँधी दर्शन भारतीय जनमानस के अवचेतन में शिद्दत के साथ मौजूद है। वह बात अलग है कि गाँधीजी की काटी फसल पर अय्याशी करने वाले नेताओं के दोगले चरित्र ने जनमानस में यह भावना बलवती कर दी थी कि गाँधी दर्शन अब प्रासंगिक नहीं रहा। लेकिन नेतृत्व करने वालों का चरित्र पाक–साफ हो, वह निःस्वार्थ हो, राजनीतिक लोलुपता से मुक्त हो तो जनता उसके समर्थन में सड़कों पर उतर आती है। ऐसा ही गाँधीजी के साथ भी हुआ था।

आरंभिक जीवन एवं व्यवसाय

अन्ना हजारे का जन्म 15 जून 1937 को महाराष्ट्र के अहमदनगर के रालेगन सिद्धि गाँव के एक मराठा किसान परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम बाबूराव हजारे और मां का नाम लक्ष्मीबाई हजारे था। उनका बचपन बहुत गरीबी में गुजरा। वर्ष 1962 में भारत–चीन युद्ध के बाद सरकार की युवाओं से सेना में शामिल होने की अपील पर अन्ना 1963 में सेना की मराठा रेजीमेंट में भर्ती हो गए। अन्ना की पहली नियुक्ति पंजाब में हुई। 1965 में भारत–पाकिस्तान युद्ध के दौरान अन्ना हजारे खेमकरण सीमा पर नियुक्त थे। 12 नवंबर 1965 को चौकी पर पाकिस्तानी हवाई बमबारी में वहाँ तैनात सैनिक मारे गये। इस घटना ने अन्ना के जीवन को सदा के लिए बदल दिया। उनकी तैनाती मुंबई और कश्मीर में भी हुई। 1965 में जम्मू में तैनाती के दौरान सेना में सेवा के 15 वर्ष पूरे होने पर उन्होनें स्वैच्छिक सेवानिवृति ले ली। वे अपने गाँव रालेगन सिद्धि में रहने लगे और इसी गाँव को उन्होनें अपनी सामाजिक कर्मस्थली बनाकर समाज सेवा में जुट गए।[64]

व्यक्तित्व और विचारधारा

गाँधी की विरासत, अन्ना हजारे की थाती है। कद–काठी में वह साधारण ही है। सिर पर गाँधी टोपी और बदन पर खादी है। आंखों पर मोटा चश्मा है लेकिन उनकों दूर तक दिखता है। इरादे फौलादी और अटल है। महात्मा गाँधी के बाद अन्ना हजारे ने भी भूख हड़ताल और आमरण अनशन को सबसे ज्यादा बार बतौर हथियार इस्तेमाल किया है। इसके जरिये उन्होनें भ्रष्ट प्रशासन को पद छोड़ने एवं सरकारों को जनहितकारी कानून बनाने पर मजबूर किया है। अन्ना हजारे को आधुनिक युग का गाँधी भी कहा जा सकता है। अन्ना हजारे हम सभी के लिये आदर्श है।

अन्ना हजारे गाँधीजी के ग्राम स्वराज्य को भारत के गाँवों की समृद्धि का माध्यम मानते है। उनका मानना है कि, बलशाली भारत के लिये गाँवों को अपने पैरों पर खड़ा करना होगा। उनके अनुसार विकास का लाभ समान रूप से

वितरीत न हो पाने का कारण रहा गाँवों को केंद्र में न रखना। व्यक्ति निर्माण से ग्राम निर्माण और तब स्वाभाविक ही देश निर्माण के गाँधीजी के मंत्र को उन्होनें हकीकत में उतार दिखाया और एक गाँव से आरंभ उनका यह अभियान आज 85 गाँवों तक सफलतापूर्वक जारी है। व्यक्ति निर्माण के लिये मूलमंत्र देते हुए उन्होनें युवाओं में उत्तम चरित्र, शुद्ध आचार–विचार, निष्कलंक जीवन व त्याग की भावना विकसित करने व निर्भयता को आत्मसात् कर आम आदमी की सेवा को आदर्श के रूप में स्वीकार करने का आह्वान किया।

सामाजिक कार्य

1965 में युद्ध में मौत से साक्षात्कार के बाद नई दिल्ली रेलवे स्टेशन पर उन्होनें स्वामी विवेकानन्द की एक पुस्तक 'कॉल टू दि यूथ फॉर नेशन' खरीदी। इसे पढ़कर उनके मन में भी अपना जीवन समाज को समर्पित करने की इच्छा बलवती हो गई। उन्होनें महात्मा गाँधी और विनोबा भावे की पुस्तकें भी पढ़ी। 1970 में उन्होनें आजीवन अविवाहित रहकर स्वयं को सामाजिक कार्यों के लिए पूर्णतः समर्पित कर देने का संकल्प कर लिया।

रालेगन सिद्धि

मुम्बई पदस्थापन के दौरान वे अपने गाँव रालेगन आते–जाते रहे। वे वहाँ चट्टान पर बैठकर गाँव को सुधारने की बात सोचा करते थे। सेना से स्वैच्छिक सेवानिवृति लेकर रालेगन आकर उन्होनें अपना सामाजिक कार्य प्रारंभ कर दिया। इस गाँव में बिजली और पानी की जबरदस्त कमी थी। अन्ना ने गाँव वालो को नहर बनाने और गड्ढे खोदकर बारिश का पानी इकट्ठा करने के लिये प्रेरित किया और स्वयं भी इसमें योगदान किया। अन्ना के कहने पर गाँव में जगह–जगह पेड़ लगाए गए। गाँव में सौर उर्जा और गोबर गैस के जरिए बिजली की सप्लाई की गई। उन्होनें अपनी जमीन बच्चों के हॉस्टल के लिए दान कर दी और अपनी पेंशन का सारा पैसा गाँव के विकास के लिए समर्पित कर दिया। वे गाँव के मंदिर में रहते है और हॉस्टल में रहने वाले बच्चों के लिए बनने वाला खाना ही खाते है। आज गाँव का हर शख्स आत्म निर्भर

है। आस–पड़ौस के गाँवो के लिए भी यहाँ से चारा, दूध आदि जाता है। यह गाँव आज शांति, सौहार्द्र एवं भाईचारे की मिसाल है।

महाराष्ट्र भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन 1991

1991 में अन्ना हजारे ने महाराष्ट्र में शिवसेना–भाजपा की सरकार के कुछ भ्रष्ट मंत्रियों को हटाए जाने की मांग को लेकर भूख हड़ताल की। ये मंत्री थे– शशिकांत सुतर, महादेव शिवांकर और बबन घोलाप। अन्ना ने उन पर आय से अधिक संपत्ति रखने का आरोप लगाया था। सरकार ने उन्हें मनाने की बहुत कोशिश की, लेकिन अंततः उन्हें दागी मंत्रियों शशिकांत सुतर और महादेव शिवांकर को हटाना ही पड़ा। घोलाप ने अन्ना के खिलाफ मानहानि का मुकदमा दायर किया। अन्ना अपने आरोप के समर्थन में न्यायालय में कोई साक्ष्य पेश नहीं कर पाये और उन्हें तीन महीनें की जैल हो गई। तत्कालीन मुख्यमंत्री मनोहर जोशी ने उन्हें एक दिन की हिरासत के बाद छोड़ दिया। एक जाँच आयोग ने शशिकांत सुतर और महादेव शिवांकर को निर्दोष बताया। लेकिन अन्ना हजारे ने कई शिवसेना और भाजपा नेताओं पर भी भ्रष्टाचार में लिप्त होने के आरोप लगाये।[65]

सूचना का अधिकार आंदोलन (1997–2005)

1997 में अन्ना हजारे ने सूचना का अधिकार अधिनियम के समर्थन में मुंबई के आजाद मैदान से अपना अभियान शुरू किया। 9 अगस्त 2003 को मुंबई के आजाद मैदान में ही अन्ना हजारे आमरण अनशन पर बैठ गये। बारह दिन तक चले आमरण अनशन के दौरान अन्ना हजारे और सूचना का अधिकार आंदोलन को देशव्यापी समर्थन मिला। आखिरकार 2003 में ही महाराष्ट्र सरकार को इस अधिनियम के एक मजबूत और कड़े विधेयक को पारित करना पड़ा। बाद में इसी आंदोलन ने राष्ट्रीय आंदोलन का रूप ले लिया। इसके परिणामस्वरूप 12 अक्टूबर 2005 को भारतीय संसद ने भी सूचना का अधिकार अधिनियम पारित किया। अगस्त 2006 में सूचना का अधिकार अधिनियम में संशोधन प्रस्ताव के खिलाफ अन्ना ने ग्यारह दिन तक आमरण अनशन किया,

जिसे देश भर में समर्थन मिला। इसके परिणामस्वरूप सरकार ने संशोधन का इरादा बदल दिया।[66]

महाराष्ट्र भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन 2003

2003 में अन्ना ने कांग्रेस और एन.सी.पी. सरकार के चार मंत्रियों, सुरेश दादा जैन, नवाब मलिक, विजय कुमार गावित और पद्म सिंह पाटिल को भ्रष्ट बतलाकर उनके खिलाफ मुहिम छेड़ दी और भूख हड़ताल पर बैठ गये। तत्कालीन महाराष्ट्र सरकार ने इसके बाद एक जाँच आयोग का गठन किया। नवाब मलिक ने भी अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। आयोग ने जब सुरेश जैन के खिलाफ आरोप तय किये तो उन्हें भी त्यागपत्र देना पड़ा।[67]

लोकपाल विधेयक आंदोलन

जन लोकपाल विधेयक (नागरिक लोकपाल विधेयक) के निर्माण के लिये जारी यह आंदोलन अपने अखिल भारतीय स्वरूप में 5 अप्रेल 2011 को समाजसेवी अन्ना हजारे एवं उनके साथियों के जंतर–मंतर पर शुरू किये गए अनशन के साथ आरंभ हुआ, जिनमें मैग्सेसे पुरस्कार विजेता अरविंद केजरीवाल, भारत की पहली महिला प्रशासनिक अधिकारी किरण बेदी, प्रसिद्ध लोकधर्मी वकील प्रशांत भूषण आदि शामिल थे। संचार साधनों के प्रभाव के कारण इस अनशन का प्रभाव समूचे भारत में फैल गया और इसके समर्थन में लोग सड़कों पर भी उतरनें लगे। इन्होनें भारत सरकार से एक मजबूत भ्रष्टाचार विरोधी लोकपाल विधेयक बनाने की मांग की थी और अपनी मांग के अनुरूप सरकार को लोकपाल बिल का एक मसौदा भी दिया था। किंतु मनमोहन सिंह के नेतृत्व वाली तत्कालीन सरकार ने इसके प्रति नकारात्मक रवैया दिखाया और इसकी उपेक्षा की। इसके परिणामस्वरूप शुरू हुए अनशन के प्रति भी उनका रवैया उपेक्षापूर्ण ही रहा। लेकिन इस अनशन के आंदोलन का रूप लेने पर भारत सरकार ने आनन–फानन में एक समिति बनाकर संभावित खतरे को टाला और 16 अगस्त तक संसद में लोकपाल विधेयक पारित कराने की बात स्वीकार कर ली।[68]

अगस्त से प्रारम्भ हुए मानसून सत्र में सरकार ने जो विधेयक प्रस्तुत किया वह कमजोर और जन लोकपाल के सर्वथा विपरीत था। अन्ना हजारे ने इसके खिलाफ अपने पूर्व घोषित तिथि 16 अगस्त से पुनः अनशन पर जाने की बात दुहरायी। 16 अगस्त को सुबह साढ़े सात बजे जब वे अनशन पर जाने की तैयारी कर रहे थे, तब दिल्ली पुलिस ने उन्हें घर से ही गिरफ्तार कर लिया। उनकी टीम के अन्य लोग भी गिरफ्तार कर लिये गये। इस खबर ने आम जनता को उद्वेलित कर दिया और वह सड़कों पर उतरकर सरकार के इस कदम का अहिंसात्मक प्रतिरोध करने लगी। दिल्ली पुलिस ने अन्ना को मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया। अन्ना ने रिहा किये जाने पर दिल्ली से बाहर रालेगाँव चले जाने या तीन दिन तक अनशन करने की बात अस्वीकार कर दी। उन्हें सात दिनों की न्यायिक हिरासत में तिहाड़ जैल भेज दिया गया। शाम तक देशव्यापी प्रदर्शनों की खबर ने सरकार को अपना कदम वापस खींचनें पर मजबूर कर दिया। दिल्ली पुलिस ने अन्ना को सशर्त रिहा करने का आदेश जारी किया। मगर अन्ना अनशन जारी रखने पर दृढ़ थे। बिना किसी शर्त के अनशन करने की अनुमति तक उन्होनें रिहा होने से इंकार कर दिया।[69]

17 अगस्त तक देश में अन्ना के समर्थन में प्रदर्शन होता रहा। दिल्ली में तिहाड़ जैल के बाहर हजारों लोग डेरा डाले रहे। 17 अगस्त की शाम तक दिल्ली पुलिस रामलीला मैदान में सात दिनों तक अनशन करने की इजाजत देने को तैयार हुई। मगर अन्ना ने तीस दिनों से कम अनशन करने की अनुमति लेने से मना कर दिया, उन्होनें जैल में ही अपना अनशन जारी रखा। अन्ना को रामलीला मैदान में 15 दिन की अनुमति मिली और 19 अगस्त से अन्ना रामलीला मैदान में जन लोकपाल बिल के लिये अनशन जारी रखने पर दृढ़ थे। 24 अगस्त तक तीन मुद्दों पर सरकार से सहमति नहीं बन पायी। अनशन के दस दिन हो जाने पर भी सरकार अन्ना का अनशन समाप्त नहीं करवा पायी। हजारे ने दस दिन से जारी अपने अनशन को समाप्त करने के लिये सार्वजनिक तौर पर तीन शर्तो का ऐलान किया। उनका कहना था कि तमाम सरकारी

कर्मचारियों को लोकपाल के दायरे में लाया जाये, तमाम सरकारी कार्यालयों में एक नागरिक चार्टर लगाया जाये और सभी राज्यों में लोकायुक्त हो।

बॉन की मून

संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव बॉन की मून गाँधीजी की नीतियों व सिद्धांतों से स्पष्ट रूप से प्रभावित है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने महात्मा गाँधी के जन्म दिवस 2 अक्टूबर को अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस घोषित कर उनके सिद्धांतों के प्रति समूचे विश्व की आस्था को अभिव्यक्त किया है। प्रथम अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस के मौके पर संयुक्त राष्ट्र संघ महासचिव बॉन की मून ने कहा था कि हिंसा, आतंक और असमानता से ग्रस्त आज के समाज को गाँधीजी के सिद्धांतों की पहले से भी ज्यादा जरूरत है।

उन्होनें कहा, वास्तव में संयुक्त राष्ट्र की स्थापना जिन उद्देश्यों को लेकर हुई थी (शांति, सहिष्णुता और मानवीय गरिमा की स्थापना) वे वहीं है जिनके लिए गाँधीजी ने जीवन भर संघर्ष किया। संयुक्त राष्ट्र की स्थापना के पीछे की धारणा यह है कि युद्धों को समाप्त ही नहीं किया जा सकता, बल्कि अनावश्यक भी बनाया जा सकता है। गाँधीजी का शांतिपूर्ण प्रतिरोध, सत्याग्रह या सविनय अवज्ञा के सिद्धांतो की भावना भी तो यही है। हो सकता है कि कुछ लोगों को अहिंसा का विचार आज के समय में प्रासंगिक न लगे लेकिन अहिंसा का अर्थ कमजोर होना नहीं है। इसका अर्थ है अपने प्रतिद्वंदी को नैतिक रूप से अस्त्रहीन कर देना। उसे अपने बल प्रयोग की नैतिकता पर लज्जा महसूस करने पर विवश कर देना। इस तरह की विजय अधिक स्थायी और सार्थक है क्योंकि वह न केवल दमन को समाप्त करती है, बल्कि दमनकारी व्यक्ति को भी बदल देती है।[70]

महात्मा गाँधी की विरासत का आह्वान करते हुए बॉन कहते है, सभी देशों को महिलाओं के प्रति भेदभाव सहित अपने सभी विवादों के हल और हिंसा रोकने के लिए शांतिपूर्ण वार्ता का तरीका अपनाना चाहिए। गाँधी ने हमें अत्याचार, अन्याय और घृणा के शांतिपूर्ण विरोध की शक्ति से अवगत कराया

और अहिंसा की उनकी यह विरासत अभी भी गूंज रही है। बॉन ने कहा कि, 'मौलिक मानवाधिकार और विविधता के प्रति आदर और न्याय के वैश्विक महानायक' गाँधी के उदाहरण ने मार्टिन लूथर किंग और नेल्सन मंडेला जैसै कई इतिहास निर्माताओं को प्रेरित किया है। संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने कहा कि इनमें से प्रत्येक ने मानव गरिमा का पक्षधर बनने और असहिष्णुता को अस्वीकार करने का संदेश दिया था।[71]

संयुक्त राष्ट्र में भारत के स्थायी मिशन की ओर से आयोजित एक समारोह में बॉन ने कहा, ''हिंसा का मतलब कार्यवाही नहीं करना कतई नहीं है। अपनी इच्छा और मान्यताओं को बलपूर्वक लागू कराने वाले लोगों के खिलाफ खड़े होने के लिये साहस चाहिए।'' उन्होनें कहा अन्याय, भेदभाव और क्रूरता का सामना करने के लिए संकल्प की आवश्यकता होती है। संघर्ष के शांतिपूर्ण समाधान के लिए ताकत की आवश्यकता होती है।

संयुक्त राष्ट्र महासचिव बॉन की मून ने विश्व में 'बढ़ते नस्लीय हमले' और संघर्ष के दौर में अंतर्राष्ट्रीय समुदाय से महात्मा गाँधी के अहिंसा दर्शन का पालन करने का अनुरोध करते हुए अपने संदेश में कहा, ''आज जब नस्लीय हिंसा बढ़ रही है और सांस्कृतिक स्थलों और धरोहरों का विनाश किया जा रहा है, तो यह वक्त है गाँधी के शांति और मेल–जोल के आह्वान और उनकी उस चेतावनी को याद करने का जिसमें उन्होनें कहा था कि एक आँख के बदले एक आँख से तो दुनिया अंधी हो जाएगी।'' उन्होनें कहा कि, वर्ष 1948 में मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा में बापू के सिद्धांतों को जगह दी गई थी।[72]

विश्व से गाँधीजी के अहिंसा के सिद्धांतों पर आधारित असहिष्णुता की ताकतों का सामना करने, वैश्विक नागरिकता और मानव एकता के लिए आह्वान करते हुए बॉन ने कहा, ''हमें वार्ता और समझ आधारित शांति की संस्कृति को बढ़ावा देना होगा, सम्मान और मानव विविधता को मानते हुए ैहार्द से एक दूसरे के साथ रहना होगा।''[73]

बॉन ने मानवीय गरिमा बढ़ाने, अहिंसा की संस्कृति को बढ़ावा देने और शांति के प्रयास के लिये शिक्षा को बड़ा औजार बताते हुए कहा कि, ''शिक्षा के जरिये हम एक–दूसरे के साथ रहने का नया रास्ता तैयार कर सकते है। उन्होनें कहा कि शिक्षा, वैश्विक नागरिकता और एकजुटता का भी आधार बन सकती है जो आज की दुनिया के लिए बेहद जरूरी है।[74]

चांग काई शेख

सन् 1945 में विश्व के पाँच प्रमुख राष्ट्र प्रमुखों में एक नाम चीन के सम्राट चांग काई शेख का है। वे भारत आ रहे थे और उनकी इच्छा थी कि वे भारत आकर सबसे पहले गाँधीजी के निवास स्थान सेवाग्राम, वर्धा जाकर गाँधीजी से मिले। अंग्रेजी शासन के प्रोटोकॉल के अनुसार यह नामुमकीन था। क्योंकि उनके अनुसार अगर किसी देश का प्रमुख दूसरे देश आये और सबसे पहले किसी व्यक्ति के निवास पर जाकर अगर उससे मिले तो इसका मतलब वह व्यक्ति ही राष्ट्र प्रमुख माना जायेगा। यह तो ब्रिटिश राज्य की तौहीन हो जायेगी। भारत का प्रमुख वायसराय न होकर महात्मा गाँधी हो जायेंगे। इसे वे कतई बर्दाश्त नहीं कर सकते।

इस संबंध में वायसराय और सेक्रेटरी ऑफ स्टेट के बीच के पत्राचार देखने लायक है। उनमें उनकी घबराहट, उनकी कूटनीति, उनकी चालाकियाँ, उनका गाँधीजी से डर और विश्व राजनीति की उनकी समझ, सभी का पता चलता है। कुल मिलाकर उनकी गाँधीजी से घबराहट साफ झलकती है। पत्राचार में अनेक रणनीतियों पर चर्चा होती है। किस प्रकार चांग काई शेख के इस हठ/आग्रह से निपटा जाये। मनुहार से लेकर रेलगाड़ी तक को खराब कर देने पर विचार होता है क्योंकि यह तो हरगिज़ हो ही नहीं सकता कि शेख गाँधीजी से उनके आश्रम में मिलकर उनको सम्राट का दर्जा दे दे। आखिर एक तरकीब निकाली जाती है। एक ऐसी जगह की तलाश हो जो गाँधीजी की न मानी जाये, अंग्रेज सरकार की भी न मानी जाये पर जिससे अंगेजों को कोई ऐतराज भी न हो। ऐसी जगह है रवीन्द्रनाथ टैगोर का शांति निकेतन। और

आखिर वहीं भारत के इस सम्राट की मुलाकात चीन के सम्राट से अंग्रेज अधिकारी करवाते है। इससे पता चलता है कि गाँधीजी का कितना प्रभाव विश्व के नेताओं पर था।[75]

बंगबंधु शेख मुजीबुर्रहमान

महात्मा गाँधी अक्टूबर 1946 में कोलकाता, बिहार व अन्य स्थानों पर भड़के दंगों के बाद सद्भावना स्थापित करने के लिये नोवाखाली (वर्तमान बांग्लादेश) में एक शांति मिशन के लिए निकल पड़े। आजादी के बाद जब गाँधीजी भारत वापस आये तो चारू चौधरी, जो तब पचासी साल के थे, उन्होनें जयग गाँव को चुना, जिसका दौरा गाँधीजी ने 26 जनवरी 1947 को किया था और जो उनकी शहादत के बाद नोवाखाली के शांति मिशन का मुख्यालय बना। शांति मिशन कई उतार–चढ़ाव के दौर से गुजरा। यहां तक कि मिशन के कई कार्यकर्ताओं की हत्या कर दी गई और उनकी संपत्ति लूट ली गई।

सौभाग्य से बंगबंधु शेख मुजीबर्रहमान ने बांग्लादेश की सत्ता संभालने के बाद आगे बढ़कर मिशन को हर संभव सहयोग दिया। उन्होनें मिशन को सहायता और संरक्षण के लिये अध्यादेश बनाया जो उनकी मृत्यु के बाद पास किया गया। इस अध्यादेश के परिणामस्वरूप गाँधीवादी विचारों, शांति, अहिंसा और रचनात्मक कार्यो के विकास के लिए अपनाई गई परियोजनाओं को आर्थिक सहयोग किया जाता है। नोवाखाली का ग्रामीण क्षैत्र अपनी रूढ़िवादी जीवन शैली के लिए जाना जाता रहा है, खासतौर से महिलाओं के प्रति, मगर ऐसे इलाके में बड़ी संख्या में मुस्लिम महिलाओं ने बुरका पहनना छोड़ दिया है। नोवाखाली के लिये यह कोई छोटी उपलब्धि नहीं है, बल्कि यह एक छोटी क्रांति के समान ही है।[76]

गेडाग बागूस ओका

इंडोनेशिया में 1921 में जन्मी गेडाग बागूस ओका ने 1956 में गाँधीजी की आत्मकथा पढ़ने के बाद गाँधीवादी साहित्य का गहराई से अध्ययन करना प्रारंभ किया तो उन्हें लगा कि इंडोनेशिया के लोगों को गाँधीजी के बारे में

बेहतर जानकारी होनी चाहिए, क्योंकि गाँधीवादी सिद्धांतों के अनुसरण से ही उनका देश शांतिपूर्वक और अपनी पहचान के अनुरूप विकास कर सकता है। इसे ध्यान में रखते हुए उन्होनें 1970 में बाली शांति सेना फाउंडेशन की स्थापना की और गाँधीजी की आत्मकथा का इंडोनेशिया भाषा में अनुवाद कर अध्यापकों और समाजसेवकों के बीच वितरीत किया।[77] इसका परिणाम यह हुआ कि बहुत से लोग उनके साथ खड़े हो गये। फिर उन्होनें गाँधीजी के सिद्धांतों पर आधारित एक आश्रम स्थापित किया। इस आश्रम में उन्हीं लोगों को आने दिया जाता था जो सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों को अच्छी तरह से समझते हैं और उनमें रूचि रखते है। यह आश्रम लोगों को पवित्रतापूर्ण जीवन–यापन करने, आत्मा की शांति की खोज करने और प्रकृति और मानव के साथ सामंजस्य स्थापित करने की अपनी क्षमता के बारे में जागरूक करने में सफल रहा है।

यंग सीक चो

कोरिया के डॉक्टर यंग सीक चो अंतर्राष्ट्रीय शांति और सौहार्द के एक भावप्रवण उपदेशक है। वे पिछले चार दशक से भी अधिक समय से लगातार अपने उपदेशों, शोधों, भाषणों, अभियानों, रैलियों, सांस्कृतिक आयोजनों और ऐसे ही कई अनेक कार्यक्रमों के जरिये गाँधी के सिद्धांतों पर आधारित शांतिपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय समाज की स्थापना में लगे है। एक समय जब राष्ट्रपति रीगन सोवियत चुनौती को स्वीकार करने के लिए सैन्य शक्ति के साथ 'सशस्त्र अमेरिका' बनाने पर जोर दे रहे थे, तब डॉक्टर चो ने उन्हें समझाया कि वे सशस्त्र अमेरिका नीति को छोड़कर उसके बदले 'महान अमेरिका' नीति अपनाएं, क्योंकि अमेरिका एक राष्ट्र के रूप में विश्व के समक्ष यह आदर्श स्थापित करे कि वह समस्त विश्व को प्रजातांत्रिक, शांतिमय और उन्नतिपूर्ण बना सकता है।[78] इसके फलस्वरूप शीत युद्ध का युग समाप्त हो गया और शीर्ष देशों का जिनेवा सम्मेलन विश्व के तनावपूर्ण काल में आयोजित हुआ जिसमें विश्व में शांति की स्थापना के लिए भी संभव प्रयासों पर विचार–विमर्श हुआ। डॉक्टर चो

ने पिछले पाँच हजार वर्षो के मानव इतिहास का अवलोकन किया है– कहाँ हम असफल हुए या गलती कर गये है ? इस विश्लेषण के आधार पर मानव समाज के लिये वे एक नई योजना बना रहे है, जिससे उन्हें उम्मीद है कि मानवतावादी मानव जीवन उन्नत हो सकेगा।

अतः अंत में यह कहा जा सकता है कि आज अपने देश में भले ही महात्मा गाँधी को उनकी जयंती और पुण्यतिथि पर रस्मी श्रद्धांजलियों तक सीमित कर दिया गया है, लेकिन यह भी हकीकत है कि गाँधी संपूर्ण विश्व में शांति और अहिंसा के प्रतीक बन गए है। विश्व के प्रत्येक भाग में उनके दिखाए रास्ते के प्रति नई जिज्ञासा और आकर्षण बढ़ रहा है।

*****

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा बी. एस., ''गाँधी एज ए पॉलिटिकल थिंकर'', पृष्ठ 145
2. द पत्रिका, पत्रकारो का नेटवर्क, अक्टूबर 2, 2014
3. कुमार दिनकर, ''मार्टिन लूथर किंग''
4. वही, पृष्ठ 61
5. कोर्टराइट डेविड, ''गाँधी एण्ड बियोण्ड'', वीवा बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, नईदिल्ली, 2007, पृष्ठ 67
6. कुमार दिनकर, ''मार्टिन लूथर किंग'', पृष्ठ 77–78
7. कार्सन क्लेबोर्न, ''द ऑटोबायोग्राफी ऑफ मार्टिन लूथर किंग जूनियर'', लंदन, 1999, पृष्ठ 23
8. रायजादा डॉ. मुनीश कुमार, ''वास्तविक शांति मात्र हिंसा की अनुपस्थिति में नहीं है, बल्कि न्याय की मौजूदगी में है।''(लेख)
9. हरदेनिया एल. एस., ''गाँधी के अहिंसक जादू ने सारी दुनिया को प्रभावित किया'', हम समवेत, मई 27,2015 (लेख)
10. रत्तू कृष्ण कुमार, ''गाँधी दर्शन'', बुक एनक्लेव, जयपुर, 2002, पृष्ठ 40
11. लतांत प्रसून, ''बढ़ रहे है दुनिया में गाँधी के रास्ते पर चलने वाले'', दृष्टि विमर्श पत्रिका, 2014 (लेख)
12. दाधीच बालेन्दु शर्मा, ''गाँधी को सीमाओं में बन्द नहीं किया जा सकता'', राजनीतिक मंथन (लेख)
13. कमल एम. पी., ''बराक ओबामा'', साहित्य चंद्रिका प्रकाशन, जयपुर, 2009
14. स्तान्काती मार्गारीता, ''ओबामा ने बारंबार किया गाँधी को उर्द्धत'', इंडिया रियल टाइम हिन्दी– डब्ल्यू एस जे (लेख)
15. राजस्थान पत्रिका, कोटा संस्करण, जनवरी 26, 2015, पृष्ठ 1
16. वही, फरवरी 5, 2015, पृष्ठ 13

17. रत्तू कृष्ण कुमार, ''गाँधी दर्शन'', बुक एनक्लेव, जयपुर, 2002, पृष्ठ 40
18. सारस्वत ओम प्रकाश, ''भारत रत्न नेल्सन मंडेला'', नया शिक्षक, अंक 4, अक्टूबर–दिसंबर 2013, पृष्ठ 9
19. मंडेला नेल्सन, ''लॉग वॉक टू फ्रीडम''
20. वही
21. नेल्सन मंडेला का टाइम मैग्जीन से साक्षात्कार, वर्ष 2002
22. कुमार वी, ''नेल्सन मंडेला : अश्वतों का गाँधी'', डी.डब्ल्यू.डी.ई., दिसंबर 5, 2013 (लेख)
23. कमल के. एल., ''गाँधी चिंतन'', जयपुर पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, 1996, पृष्ठ 102
24. बार्थोनिया शेफाली, ''महात्मा गाँधी एवं विश्व'', एबीडी पब्लिशर्स, जयपुर,2008, पृष्ठ 155
25. कश्चप ओमप्रकश, ''अहिंसा और इंसानियत के दो दावेदार'', आइंस्टीन आखरमाला, अक्टूबर 28, 2013
26. वही
27. वही
28. वही
29. हिन्द स्वराज
30. हरिजन सेवक, जून 3, 1939
31. कश्यप ओमप्रकाश, ''अहिंसा और इंसानियत के दो दावेदार'', आइंस्टीन आखरमाला, अक्टूबर 28, 2013
32. वही
33. वही
34. वही
35. वही

36. लतांत प्रसून, ''बढ़ रहे है दुनिया में गाँधी के रास्ते पर चलने वाले'', दृष्टि विमर्श पत्रिका, 2014 (लेख)
37. वही
38. वही
39. वही
40. झा ब्रजेश कुमार, ''गाँधी मार्ग पर बढ़ चले कदम'', द पत्रिका ए जर्नलिस्ट नेटवर्क, अक्टूबर 2, 2014
41. वही
42. वही
43. अहिंसा विश्वकोश
44. भारद्वाज देवयानी, अहिंसा विश्वकोश, खण्ड–3, पृष्ठ 50
45. वही, पृष्ठ 51
46. वही, पृष्ठ 52
47. अहिंसा विश्वकोश, ''तिब्बत के परम् पावन चौदहवें दलाई लामा''
48. वही
49. लामा दलाई, ''अपने धर्म में आस्था रखें और दूसरे धर्म का भी करें सम्मान'', इंडिया–तिब्बत कोआर्डिनेशन ऑफिस। (लेख)
50. लामा दलाई, ''वैश्विक समुदाय संबंधी विचार'' (लेख)
51. वही
52. वही
53. वही
54. लामा दलाई, ''विश्व शांति को लेकर मानवीय दृष्टिकोण'' (लेख)
55. वही
56. वही
57. वही
58. भादू डॉ. राजाराम, अहिंसा विश्वकोश, खण्ड–5, पृष्ठ 98

59. वही
60. वही, पृष्ठ 99
61. वही, पृष्ठ 101
62. मोहन अरविन्द, अहिंसा विश्वकोश, खण्ड–3, पृष्ठ 15
63. वही, पृष्ठ 16
64. मुक्त ज्ञानकोश विकिपीडिया, अन्ना हजारे
65. वही
66. त्रिपाठी विनायक, ''आधुनिक गाँधी अन्ना हजारे'', आर्या पब्लिकेशन, दिल्ली, 2012, पृष्ठ 22–24
67. वही
68. राजस्थान पत्रिका, कोटा संस्करण, अप्रैल 6, 2011 पृष्ठ 1
69. वही, अगस्त 17, 2011, पृष्ठ 1
70. दाधीच बालेन्दु शर्मा, ''गाँधी को सीमाओं में बंद किया ही नहीं जा सकता'', राजनीतिक मंथन, ऑनलाईन पत्रिका।
71. नवभारत टाइम्स, अक्टूबर 3, 2013
72. जनसत्ता, अक्टूबर 3, 2014
73. वही
74. वही
75. लतांत प्रसून, ''बढ़ रहे है दुनिया में गाँधी के रास्ते पर चलने वाले'', दृष्टि विमर्श ऑनलाईन पत्रिका, पृष्ठ 8
76. वही
77. वही
78. वही

*****

षष्ठम् अध्याय

गाँधीजी की नीतियों की वर्तमान प्रासंगिकता

षष्ठम् अध्याय

गाँधीजी की नीतियों की वर्तमान प्रासंगिकता

19वी सदी के उत्तरार्द्ध में भारतभूमि पर एक दूत अवतरित हुआ जो भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व में छाकर अंतरिक्ष में विलीन हो गया। यह दूत और कोई नहीं वरन गाँधीजी ही थे। आज भी उन्हें भुलाया नहीं जा सकता है। तुलसीदास के शब्दों में 'हरि अवतार हेतु जे होई। इत मित्य कही जाइ न सोई' वाली बात गाँधीजी पर पूरी लागू होती है। उनका अवतरण किसी एक के लिये नहीं वरन् सभी के लिए है। गाँधीजी ने समस्याग्रस्त भारत को आजाद कराया। अहिंसा से हिंसा को हराया। ब्रिटिश हुकूमत से भारत स्वतंत्र कराया। अपने प्रयास में वे सफल रहे। गाँधीजी ने अविद्या को विद्या, असत् को सत्, अंधकार को प्रकाश एवं हिंसा को अहिंसा से मिटाने की जन–जागृति जगाई।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान सत्य और अहिंसा का उद्घोष कर आंदोलन की धार को और पेनी करने वाले महात्मा गाँधी किसी परिचय के मोहताज नहीं। उन्होनें स्वतन्त्र भारत के पुनर्निर्माण के लिए रामराज्य का स्वप्न देखा था। वे कहा करते थे कि नैतिक और सामाजिक उत्थान को ही हमने अहिंसा का नाम दिया है। यह स्वराज्य का चतुष्कोण है। इनमें से एक भी अगर सच्चा नहीं है तो हमारे स्वराज्य की सूरत ही बदल जाती है। राजनीतिक स्वतन्त्रता से उनका मतलब किसी देश की शासन प्रणाली की नकल से नहीं है। उनकी शासन प्रणाली अपनी–अपनी प्रतिभा के अनुसार होगी, परन्तु स्वराज में हमारी शासन प्रणाली हमारी अपनी प्रतिभा के अनुसार होगी। उन्होनें उसका वर्णन 'रामराज्य' शब्द के द्वारा किया है। अर्थात् विशुद्ध राजनीति के आधार पर स्थापित तंत्र। उनके स्वराज्य को लोग अच्छी तरह समझ लें, भूल न करें। संक्षेप में वह यह है कि विदेशी सत्ता से सम्पूर्ण मुक्ति और साथ ही संपूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता। इस प्रकार एक सिरे पर आर्थिक स्वतंत्रता है और दूसरे सिरे पर राजनीतिक स्वतंत्रता, परन्तु इसके दो सिरे और भी हैं। इनमे से एक है

नैतिक व सामाजिक और दूसरा धर्म। इसमें हिन्दू धर्म, इस्लाम, ईसाई आदि आ जाते हैं। परन्तु एक जो इन सबसे ऊपर है, इसे आप सत्य का नाम दे सकते हैं। सत्य यानि कि केवल प्रासंगिक ईमानदारी नहीं बल्कि वह परम सत्य जो व्यापक है और उत्पत्ति व लय से परे हैं।''

मूल रूप से गाँधीजी की सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था करूणा, प्रेम, नैतिकता, धार्मिकता व ईश्वरीय भावना पर आधारित है। उन्होनें नर सेवा को ही नारायण सेवा मानकर दलितोद्धार व दरिद्रोद्धार को अपने जीवन का ध्येय बनाया। वे शोषणमुक्त, समतायुक्त, ममतामय, परस्पर स्वावलंबी, परस्पर पूरक व परस्पर पोषक समाज के प्रबल हिमायती थे। उनका मानना था कि राजसत्ता और अर्थसत्ता के विकेंद्रीकरण के बिना आम आदमी को सच्चे लोकतंत्र की अनुभूति नहीं हो सकती सत्ता का केंद्रीकरण लोकतंत्र की प्रकृति से मेल नहीं खाता। उनकी ग्राम स्वराज की कल्पना भी राजसत्ता के विकेंद्रीकरण पर आधारित है।

5 फरवरी 1916 को काशी के नागरी प्रचारिणी सभागार में एक कार्यक्रम को संबोधित करते हुए उन्होनें कहा था– ''मेरे सपनों का स्वराज्य गरीबों का स्वराज होगा। जीवन की जिन आवश्यकताओं का उपभोग राजा और अमीर लोग करते है, वहीं उन्हें भी सुलभ होना चाहिए। इसमें फर्क के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता। उस पर धनवानों और अशिक्षितों का एकाधिपत्य नहीं होगा। वह स्वराज सबके कल्याण के लिये होगा। लेकिन यह स्वराज प्राप्त करने का एक निश्चित रास्ता है।'' इसको समझाने के लिये वे कहते थे, ''ध्येयवादी जीवन के चार तत्व होते है– साधक, साधन, साधना और साध्य। साध्य का अर्थ लक्ष्य या ध्येय से है। यदि किसी समय हमारा लक्ष्य धन कमाना है, तो धन कमाने के भी कई तरीके हो सकते है। यह धन चोरी करके भी प्राप्त किया जा सकता है और ईमानदारी और पराक्रम से भी, लेकिन ईमानदारी और पराक्रम से प्राप्त धन पवित्र धन कहा जाएगा। इसलिये साध्य की पवित्रता के

लिए यह आवश्यक है कि साधन, साधक और साधना तीनों पवित्र हो। किसी एक के पवित्र होने से काम नहीं चलेगा।

गाँधी–चिन्तन मात्र दर्शन नहीं है, न मात्र कर्म का आग्रह है। दोनों का संश्लेष है। गाँधीय प्रत्यय जितने तत्कालीन परिवेश की उपज थे उतने ही उस परिवर्तित परिवेश में ही नहीं आगामी सदी में भी गुणात्मक परिवर्तन में गाँधीय प्रत्ययों की विशेष भूमिका हो सकती है। इसीलिए गाँधीय प्रत्ययों की पुनर्व्याख्या समीचीन है।

गाँधीवादी विश्व दृष्टि : सामाजिक चिन्तन

महात्मा गाँधी के वचनानुसार, ''इस संसार में मैं धनिको को देख रहा हूँ। जिन वस्तुओं को वे प्राप्त करते है, उनमें से कुटिलतावश कुछ भी नहीं देते। वे अधिकाधिक धन एकत्र करते हैं और आनन्दोपभोग में लीन रहते है। राजा धरती के राज्यों को जीतकर भी, समुद्र के इस पार की धरती का, समुद्र के किनारे तक का स्वामी होकर भी अतृप्त रहता है और उसकी कामना करता है जो समुद्र के उस पार है। राजा और अन्य लोग अतृप्त इच्छाओं के साथ ही मृत्यु के शिकार हो जाते है। उसकी धन सम्पत्ति को उत्तराधिकारी ले लेते हैं किंतु अपने कर्मो का फल वही भोगता है। कोई खजाना, पत्नी या सन्तान, धन–सम्पति या राज्य मरने वाले के साथ नहीं जाते।[2]

बुद्ध के वचन में लेश मात्र भी अतिशयोक्ति नहीं है। उनके विचारो में निहित नैतिकता बोध एवं धन संग्रह के प्रति गहरी घृणा गाँधीवादी विश्व दृष्टि की सामाजिक भाव भूमि को समझने की कुंजी है। गाँधीवादी विश्व दृष्टि में किसी तत्व चिन्तन की खोज अप्रासंगिक है। वह जीव और ब्रह्म, आत्मा, परमात्मा एवं माया की अमूर्त संकल्पनाओं की ज्ञान शास्त्रीय मीमांसा की उपेक्षा करती है। उसमें दलितों–दुखियों, परित्यक्तों–उपेक्षितो एवं दरिद्र नारायणों की बहु संख्यक विश्वजनीन आबादी और उसके उद्धार का प्रश्न महत्वपूर्ण है। समाज के नैतिक उत्थान एवं पुनर्संस्कार के लिए 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' की वृहत्तर लोक मंगल की कामना से पूर्ण होने के बावजूद गाँधीवादी

विश्व दृष्टि प्रचलित अर्थ में किसी शास्त्र या दर्शन की स्थापना नहीं करती है। एक तरह से वह उसका निषेध ही करती है। कारण की गाँधीवादी विश्व दृष्टि का आधार स्वानुभूत अनुभव है। तत्व मीमांसीय चिंतन के निषेध और उससे उपजे विचार शून्य को भरने में गाँधीजी ने विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया। जो बात तत्काल अस्तित्व में आयी थी वह पूँजीवादी देशो की औपनिवेशिक नीति एवं उत्पीड़ित राष्ट्रों का राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन था। भारत ब्रिटेन की औपनिवेशिक नीति का शिकार था। ब्रिटिश अत्याचारों के कारण भारतीय समाज की विकास प्रक्रिया बाधित हुई। प्राथमिक स्तर पर जिस बात की आवश्यकता थी वह भारतीय जनता के कष्ट निवारण की ही थी। आश्चर्य नहीं कि दक्षिण अफ्रीका की गोरी सरकार की नस्ली रंग–भेद नीति के कटु अनुभव एवं भारत में ब्रिटिश शासन के 'शैतानीराज' की नयी वास्तविकताएँ गाँधीजी को अनर्थकारी प्रतीत हुई। यह अकारण नही है कि गाँधीजी ने राजसत्ता की धनलोलुपता को समस्त सामाजिक व्याधियों के मूल कारण के रूप में पहचाना और उनसे मुक्ति के लिए सत्य, अहिंसा, त्याग, अस्तेय, अपरिग्रह, आत्मनिग्रह, सहिष्णुता, मर्यादित आचरण, तप, व्रत, उपवास, आत्मशुद्धि, सरल जीवन एवं गौरक्षा को अपनी प्रतिरोध नीति के रूप में विकसित किया।[3]

गाँधीवादी विश्व दृष्टि के निर्माण में जिन तत्वों का योगदान है उन पर इतिहास की गहरी छाप है। अकारण नहीं है कि लिप्सा पर आधारित वर्तमान औद्योगिक सभ्यता के प्रचलित मानदंडो एवं विकास के आधुनिक रूपो के प्रति गाँधीजी के मन में गहरी वितृष्णा थी। गाँधीजी की दृष्टि में पश्चिम की आधुनिक औद्योगिक सभ्यता, संस्कृति और समाज के मूल में सम्पत्ति की अमिट प्यास है। उनके विचार से भौतिक समृद्धि की यह लालसा मनुष्य को निपट स्वार्थी, धूर्त एवं अर्थलोलुप ही नहीं आत्मकेन्द्रित भी बनाती है। इस अर्थोन्मुख एक आयामी आर्थिक मनुष्य एवं बहुसंख्यक आबादी के हितो का टकराव हिंसा–प्रतिहिंसा का कारण है। व्यक्तिगत और सामूहिक स्तरों पर यह द्वन्द्व नीजि सम्पन्नता एवं बहुसंख्यकों की विपन्नता के अपरिहार्य वर्ग–संघर्ष को जन्म

देता है। गाँधीजी की दृष्टि में एक अनैतिक समाज का जन्म यहीं से होता है। गाँधीजी के 'हिन्द स्वराज' में इस आधुनिक औद्योगिक सभ्यता का पुरजोर खण्डन दिखायी देता है। गाँधीजी का कहना है कि ''औद्योगिक सभ्यता में रहने वाले लोग काया के कल्याण को जीवन का लक्ष्य बना लेते है, इसे ही सभ्यता का प्रतीक मान लिया जाता है और यही वजह है कि इसमें शारीरिक सुख को सतत् प्रोत्साहन दिया जाता हैं।''[4]

''औद्योगीकरण तथा भौतिक जीवन के प्रति उनकी केन्द्रीय आपत्ति यह है कि वे उच्च विचार तथा दुनिया के साथ शांति व सद्भाव से जीने की इच्छाओं से असंगत है। वर्तमान अव्यवस्था का कारण गाँधीजी यह मानते है कि न केवल शक्तिशाली राष्ट्र निर्बल राष्ट्रों का शोषण करते है बल्कि समान आदर्श व विचारधारा वाले देश स्वयं एक दूसरे का सचेष्ट शोषण करते है। उनकी मान्यता यह है कि मशीन ने इन राष्ट्रों को पर–शोषण की सामर्थ्य प्रदान की है।[5] गाँधीजी के इन विचारों की प्रगतिशील अभिव्यक्ति ई. एफ. शुमैकर ने की जब उन्होनें अपने कृतित्व में ''अहिंसक अर्थशास्त्र तथा मानव चेहरे से युक्त प्रौद्योगिकी'' की चर्चा की। गाँधीजी की भाँति शुमैकर पश्चिमी समाज का निर्माण करने वाली मूल आधारशिला को चुनौती देते हुए उसके दो आधार स्तम्भो अर्थशास्त्र तथा प्राविधिकी पर आक्रमण करते है। शुमैकर गाँधीजी को 'बीसवीं सदी के महानतम अर्थशास्त्री' की संज्ञा देते है, क्योंकि गाँधीजी का प्रबल आग्रह है कि 'विकास अनिवार्यतः सरल प्राविधिकी पर आधारित होना चाहिए और यह प्राविधिकी गाँव के लोगों के हाथ में होनी चाहिए।''

गाँधीवादी विश्व दृष्टि : कर्म

विश्व समाज में कर्म को या तो एक ऐसी बुराई अथवा अनिवार्यता के रूप में लिया गया जिससे व्यक्ति स्वयं को जीते जी मुक्त नहीं कर सकता या वह ऐसे साधन के रूप में ग्रहण किया गया जो व्यक्ति को विषय की उपलब्धि अथवा उपयोग में सहायक हो। उसे सामाजिक परिवर्तन के माध्यम के रूप में नहीं लिया गया।

''गाँधीजी ने इस बात पर आश्चर्य व्यक्त किया कि महान संतो तथा आध्यात्मिक गुरूओं ने कर्म को सामूहिक परिवर्तन अथवा सुधार के रूप में प्रस्तावित क्यों नहीं किया? वस्तुतः गीता में एक तीसरी दिशा की ओर विचार प्रस्तुत किया गया है। यह दिशा न तो कर्म से पूर्ण निवृत्ति की है और न ही उसमें पूर्ण आसक्ति को ठीक मानती है। इसी अर्थ में गीता गाँधीजी को प्रभावित करती है। गाँधीजी ने गीता को कर्म का शब्दकोश कहा है।''[6]

गीता कहती है–''अपना नियत कर्म को, परन्तु फल को त्याग दो। अनासक्त हो तथा कर्म करो। फल की इच्छा छोड़ दो और कर्म करो।'' गीता ने मोक्ष तथा सांसारिक व्यस्तताओं के बीच कोई रेखा नहीं बनाई। इसके विपरीत वह यह बताती है। सांसारिक क्रियाकलापों में भी धर्म का शासन होना चाहिए।[7]

गाँधीजी ने परम्परा से कर्म को आत्मशुद्धि एवं आत्मजय के रूपांतरण की प्रक्रिया के रूप में ही नहीं लिया अपितु उसका प्रयोग एक वृहद् परिप्रेक्ष्य में समाज के संदर्भ में भी किया। गाँधीजी के लिये व्यक्ति तथा समाज एक ही सिक्के के दो पहलू है। गाँधीजी के जीवन में इस मौलिक तथा क्रांतिकारी सौपान का क्रियान्वयन तब हुआ जब उन्हे मोरिन्सबर्ग के स्टेशन पर उस अंधेरी रात में जबरन प्रथम श्रेणी के रेलगाड़ी के डिब्बे से निकाल बाहर फेंका गया। अकेले त्रस्त तथा शंका की अवस्था में वेटिंग रूम में वे इस ऊहापोंह में पड़े रहे कि देश वापस चले जाये अथवा दक्षिण अफ्रीका में ठहरकर रंगभेद के विरूद्ध संग्राम छेड़े। दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के अधिकारों के लिए संघर्ष के उस आरंभिक चरण में गाँधी के सम्मुख कर्म के महत्वपूर्ण पक्ष उद्घटित हुए। इसमें सर्वाधिक महत्व का आयाम साध्य तथा साधन की संगति का था।

यह सिद्धांत स्वीकार करना कि साध्यों के आधार पर साधन को उचित ठहराना गलत है, तथा यह कि साधन उतने ही अच्छे होने चाहिए जितना कि साध्य, यह स्वीकार करना भी है कि किसी एक साध्य को प्राप्त करने के अनेक साधन हो सकते है। ऐसी मान्यता के आधार पर ही यह कहा जा सकता है कि किसी साध्य को सिद्ध करने के लिए सभी तरीके ठीक नहीं हो सकते। धन

प्राप्ति के निमित्त चोरी, डाका, धोखाधड़ी, उधार लेना या भीख मांगना या फिर श्रम करना अथवा कोई भी ऐसा रास्ता अपनाया जा सकता है। परन्तु ऐसा क्यों है कि हम साधारणतया श्रम को ही उपयुक्त साधन मानते है? क्योंकि उस अवस्था में कर्ता तथा अन्य संबन्धित व्यक्तियों के प्रति न्यूनतम हिंसा होती है। गलत कर्म परस्पर वैमनस्य का कारण बनता है। लोगो को एक दूसरे से काटता है तथा दो व्यक्तियों या समुदायों या राष्ट्रों के मध्य दूरी उत्पन्न करता है।

स्वदेशी : अहिंसक जीवन–दृष्टि

गाँधी दर्शन के प्रमुख जीवन मूल्यों यथा– सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह आदि जहाँ सामाजिक जीवन के नैतिक व आध्यात्मिक आदर्शो को रेखांकित करते है, वही स्वदेशी, स्वराज, ग्रामस्वराज और विकेन्द्रीकरण आदि अवधारणाएँ उनके भावी समाज की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था की ओर संकेत करती है। गाँधीजी के अनुसार जिस प्रकार अहिंसा और सत्य एक–दूसरे के पूरक है, उसी प्रकार स्वदेशी और अहिंसा भी एक–दूसरे के पूरक है। स्वदेशी एक अहिंसक अवधारणा है, तथा अहिंसा को जीवन मूल्य के रूप में स्वीकार करने वालो के लिए स्वदेशी एक आवश्यक अवधारणा है। स्वयं गाँधीजी के शब्दों में ''स्वदेशी घृणा और विद्वेष का विचार नहीं है। यह तो स्वार्थ रहित सेवा का सिद्धांत है जिसकी जड़ें पूर्णतया अहिंसा में है। जिसे प्यार भी कहते है।''[8]

वर्तमान संदर्भो में स्वदेशी की अवधारणा विश्व की अधिकांश राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक समस्याओं के सांस्कृतिक समाधान का बुनियादी आधार है। अत्यधिक उत्पादन, विश्व बाजार की प्रतियोगिता, भूमंड़लीकरण, प्रकृति का अत्यंत क्रूर दोहन, सैन्य गतिविधियाँ आदि अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का मूल कारण, ऐसी आर्थिक व राजनैतिक प्रक्रियाएँ है जो अत्यधिक केन्द्रीकरण के गर्भ से उपजी हैं। प्रौद्योगिक क्रांति और उसके बाद के युग में हुई भौतिक व प्रौद्योगिक प्रगति ने विश्व समुदाय को जिन आसन्न संकटो के निकट ला खड़ा किया है, उसमें मनुष्य का अस्तित्व ही प्रमुख संकट बन पड़ा है। आर्थिक विकास के नाम पर खड़ी हुई विश्व व्यवस्था में बाजार की शक्तियाँ हावी है जो सांस्कृतिक

जीवन मूल्यों को बदलने के लिए अत्यधिक केन्द्रित उग्र राजनैतिक–सामाजिक प्रक्रियाओं का संचालन कर रही है।

इन परिस्थितियों में गाँधीय दृष्टि की प्रमुख अवधारणा–स्वदेशी अभी भी दीप स्तम्भ है, जो विश्व को रचनात्मक विकल्प की दिशा में अग्रसर होने का अवसर देती है। क्योंकि स्वदेशी न सिर्फ आर्थिक जीवन शैली के समस्त अवयव यथा उत्पादन, विपणन, तकनीकी, बाजार, पर्यावरण आदि के स्थानिक प्रश्नों के साथ–साथ अंतर्राष्ट्रीय प्रश्नों का समाधान करने का सामर्थ्य रखती है, बल्कि अनेक राजनैतिक प्रश्नों के समाधान भी करती है। गाँधी की दृष्टि में स्वदेशी एक वैकल्पिक अवधारणा मात्र नहीं है, बल्कि प्रकृति और मनुष्य के अद्‌भुत सामंजस्य का एक मात्र जीवन दर्शन है। गाँधी के अनुसार ''स्वदेशी के संदर्भ में मेरा दृढ़ आग्रह दो कारणों से है। प्रथम इसलिये कि मैं इसी धरती पर पैदा हुआ हूँ और द्वितीय इसलिये कि मैं प्रकृति का प्रतिद्वंदी और विरोधी नहीं हूँ। मेरे लिये उन वस्तुओं का उपभोग करना जो पड़ौसी को नुकसान न पहुँचाये एक विधिक मान्यता ही नहीं है। बल्कि जीवन का संपूर्ण दर्शन है। इसी सिद्धांत के सही प्रयोग से अहिंसा और प्रेम उपजता हैं।[9]

गाँधी द्वारा किये गये अध्ययन के गर्भ से ही स्वराज का एक निहायत देसी व ठेठ ग्रामीण विकास का मॉडल निकल कर आया जिसे स्वदेशी कहा जाने लगा। आमतोर पर स्वदेशी का अर्थ स्वयं के देश में पैदा होने वाला सामान लगाया जाता है। लेकिन गाँधीजी की दृष्टि में यह सिर्फ भाषागत परिभाषा है। स्वदेशी का आशय मात्र स्वयं के देश में पैदा होने वाली वस्तु से नहीं है। बल्कि उससे कहीं ज्यादा गंभीर व व्यापक है। गाँधीजी के ही शब्दों में ''लेकिन मैं पुनः कहूँगा कि स्वदेशी मानवता और प्रेम का सिद्धांत हैं। ये हेठी होगी कि मैं अपने परिवार की सेवा करने में तो असफल हूँ और सम्पूर्ण देश की सेवा करने का दावा करूँ। मेरे लिये यह बेहतर है कि परिवार की सेवा में दत्तचित्त होऊँ और यह महसूस करूँ कि मैं राष्ट्र का काम कर रहा हूँ।[10] अर्थात्

स्वदेशी का वास्तविक दायरा परिवार से शुरू होता है, और उत्तरोत्तर अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप धारण कर लेता है।

अहिंसा : व्यावहारिक दृष्टिकोण

गाँधीजी ने अहिंसा के व्यावहारिक दृष्टिकोण की व्याख्या करते हुए कहा है कि मानव को अपने जीवन में पूर्णरूपेण व निरपेक्ष अर्थो में अहिंसक होना असंभव ही हैं। मनुष्य का भौतिक अस्तित्व पूर्ण अहिंसा के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। जीवन हेतु मनुष्य सांस लेता है, एक सांस के साथ करोड़ों जीवाणु मर जाते है। मनुष्य के भोजन हेतु वनस्पतियों की क्षति होती है अतः मनुष्य को अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिये प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से हिंसा करनी होती है। पूर्ण अहिंसा के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा यह भी है कि समाज में जो अपराध व हिंसा होती है उनके लिए मनुष्य ही उत्तरदायी होता है।

गाँधीजी ने कहा कि अहिंसा का व्यावहारिक अर्थ है कि जानबूझकर हिंसा नहीं करना। अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु न्यूनतम हिंसा संभव है। यहीं व्यावहारिक हिंसा है। अहिंसा एक मताग्रही दृष्टिकोण नहीं है। उसमें परिस्थितियों और व्यावहारिक कारणों के संदर्भ में रूपान्तरण होते है। गाँधीजी ने एक उदाहरण देते हुए कहा कि, ''एक किसान को अपनी फसल को कीटाणु व अन्य जंगली जानवरो से रक्षा हेतु कीटनाशकों का प्रयोग या उन्हें मार देना पड़ता हैं। फसल की रक्षा के लिये कीटाणुओं या फसल को क्षति पहुचाने वाले जीव–जन्तुओं के विरूद्ध की गई हिंसा से अहिंसा का निषेध नहीं होता है वरन अहिंसा के नाम पर फसल को जानवरों और कीटाणुओं द्वारा नष्ट होते रहने देना अनुचित होगा।[11]

गाँधीजी ने कहा कि यह कार्य हिंसक नही है। इसके पीछे एक व्यापक उद्धेश्य निहित है– ''मनुष्यों के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए अन्न का उपयुक्त मात्रा में उत्पादन। अतः यह हिंसा नहीं है।[12] वर्तमान में अहिंसा की प्रासंगिकता को स्पष्ट करते हुए कहा जा सकता है कि गाँधीजी की अहिंसा मानव जाति के पास उपलब्ध एक महानतम शक्ति हैं। यह विनाशकारी अस्त्रों

से भी प्रभावी व शक्तिशाली है। यह असीमित शक्ति है। इसका मूल ईश्वरीय शक्ति है।

इसकी प्रासंगिकता निम्न आधारों पर स्पष्ट है–

- **मानव का सहज व स्वाभाविक तत्व**

अहिंसा मनुष्य की सहज व स्वाभाविक प्रकृति है। मनुष्य प्रकृति सें हिंसक नही है। वह परिस्थितियों के अनुसार ही हिसंक होता है। अज्ञान, असत्य व क्रोध के कारण ही वह हिंसा करता है। जीवित प्राणी में चेतना, आत्मा व ब्रह्म की उपस्थिति है। मनुष्य चेतन होकर ब्रह्म से साक्षात्कार कर सकता है। मनुष्य एक विवेकशील प्राणी है। सम्पूर्ण विश्व एक आध्यात्मिक एकता के सूत्र में जुड़ा हुआ है।[13]

- **अहिंसा हिंसा से अधिक प्रभावशाली है**

अहिंसा नैतिक व व्यावहारिक रूप में हिंसा से अधिक प्रभावी है। हिंसा प्रति–हिंसा को जन्म देती है तथा हिंसा द्वारा कभी किसी समस्या का समाधान नहीं हो पाता। हिंसा के आधार पर तात्कालिक रूप से प्राप्त की गई विजय स्थायी नहीं होती। यह भौतिक बल का प्रतीक है। इसके विपरीत अहिंसा ऐसा प्रभावशाली अस्त्र है जिसके द्वारा विरोधी पर स्थायी विजय प्राप्त की जा सकती है मन व मस्तिष्क को भी जीता जा सकता है।

- **सुनिश्चित सफलता प्राप्ति का मार्ग**

अहिंसा का निवास मानवीय हृदय है। यह एक आध्यात्मिक तत्व है। अहिंसक व्यक्ति भौतिक शक्ति के आगे कभी भी समर्पण नहीं करता है। वह प्रेम की शक्ति से ओतप्रोत होता है। यह एक क्रियाशील अहिंसा है। जो विश्व की समस्त आध्यात्मिक शक्ति को जाग्रत कर देती है। अहिंसक व्यक्ति अत्याचारी के सम्मुख अपना शरीर तो समर्पित कर देता है लेकिन वह आत्मा को पूरी तरह मुक्त कर लेता है।[14] अहिंसा की शक्ति को गुणात्मक या मात्रात्मक की सीमा में

कभी भी बांधा नहीं जा सकता। अतः अहिंसा की प्रासंगिकता एवं सफलता सुनिश्चित है।

- **सामाजिक व राजनैतिक आयाम**

वर्तमान समय में अहिंसा एक आदर्श सामाजिक व्यवस्था का विश्वसनीय आधार भी हैं। अहिंसा के अभाव में एक आदर्श संगठित सामाजिक व्यवस्था की कल्पना असंभव ही है। लोगों की निःस्वार्थ सेवा में ही अहिंसा की अभिव्यक्ति प्रकट होती है। अहिंसा का प्रयोग सामाजिक व राजनैतिक जीवन में करने का अर्थ होगा कि प्रत्येक प्रकार का दमन, अन्याय, शोषण व उत्पीड़न का निजी और सामूहिक रूप से अहिंसक प्रतिकार। गाँधीजी ने कहा है कि ''अहिंसा की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति एक दोष रहित सामाजिक व्यवस्था के निर्माण के संकल्प के रूप में होती है।''[15]

- **अंतर्राष्ट्रीय आयाम**

गाँधीजी ने कहा कि अहिंसा के माध्यम से एक न्याय सम्मत अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था का निर्वाह किया जा सकता है। गाँधीजी का मत था कि अहिंसा द्वारा किसी भी अंतर्राष्ट्रीय समस्या का समाधान संभव है। यदि सभी राष्ट्र अपने मतभेदों व संघर्ष का समाधान अहिंसा द्वारा करें तो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर न्याय की व्यवस्था की जा सकती है। युद्ध व आक्रमण हिंसा के सिद्धांतो का स्वाभाविक परिणाम है। विश्व में युद्धों की निरर्थकता सिद्ध हो चुकी हैं। युद्धों से किसी समस्या का समाधान नहीं होता, वरन् समस्याएँ बढ़ जाती है तथा ओर भी अधिक जटिल बन जाती है। युद्ध व हिंसा द्वारा बड़े राष्ट्र छोटे राष्ट्रों का शोषण करते है। यह भौतिक बल की श्रेष्ठता का ही पर्याय है। युद्ध का समर्थन पशुबल का समर्थन है।[16] युद्ध के दौरान सज्जन व सद्गुणी व्यक्ति भी हिंसक व पशुवत बन जाता है। युद्ध नैतिकता की अवहैलना करता है। अतः अहिंसा एक अंतर्राष्ट्रीय आयाम का पर्याय है।

सत्याग्रह की रणनीति

गाँधी ने अपने सम्पूर्ण जीवन को 'सत्य के साथ प्रयोगों' की संज्ञा दी। आधुनिक विश्व के इतिहास में संभवतः वे ऐसे एक मात्र विचारक एवं कर्मज्ञ है, जिन्होनें व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक दोनों क्षैत्रों में समान रूप से 'सत्य' को कर्म की कसौटी माना। गाँधी के लिए सत्य न तो पूर्ण रूप से अमूर्त हैं न ही मात्र भौतिक एवं तत्कालीन वस्तुस्थिति द्वारा परिसीमित। उनकी दृष्टि में सत्य एक स्तर पर शाश्वत जीवन मूल्यों का पर्याय है तथा दूसरे स्तर पर सामाजिक, वैयक्तिक और राजनैतिक सरोकारों को समझने का अर्थपूर्ण माध्यम। सर्वाधिक व्यापक अर्थ में सत्य संपूर्ण मानवता एवं मूलभूत अर्थ में उसके सारतत्व का द्योतक है।

गाँधी ने स्वयं सत्याग्रह को 'सत्य की शक्ति', 'प्रेम की शक्ति' एवं 'आत्मशक्ति' के रूप में परिभाषित किया।[16] विश्व में होने वाले राजनैतिक परिवर्तनो के अस्त्र के रूप में सत्याग्रह को 'सद्गुण की शक्ति' भी माना जा सकता है क्योंकि सत्याग्रह का मूल सत्व राजनीति के प्रचलित छद्म, हिंसक, मूल्य विरोधी स्वरूप का शुद्धिकरण है। वस्तुतः सत्याग्रह पारदर्शी, स्वस्थ अहिंसक मूल्याधारित राजनीति का भी पर्याय है।[17]

सत्याग्रह की पारदर्शी रणनीति एवं सिद्धांतगत आलोचना के माध्यम से गाँधी ने भारत की औपनिवेशिक त्रासदी को अंतर्राष्ट्रीय मंच पर 'अनैतिक एवं अमानवीय साम्राज्यवादी शोषण' के रूप में उजागर किया। इससे पूर्व, दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद नीति के विरूद्ध संघर्ष में गाँधी सत्याग्रह के सफल प्रारंभिक प्रयोग कर चुके थे। वस्तुतः रंगभेद नीति के संदर्भ में विश्व जनमत जागरूक करने का श्रेय भी गाँधीजी को ही प्राप्त हुआ। श्रीमद्भगवत् गीता को गाँधीजी ने 'सर्वकालिक संदर्भ ग्रंथ' के रूप में स्वीकार किया। गीता में वर्णित आत्मचेतना के 'सर्वात्मचेतना' के रूप में निरूपण को गाँधीजी ने आधारभूत सत्य एवं मूल्य माना तथा उसे स्वराज की व्याख्या के लिए भी अर्थपूर्ण पाया। सत्याग्रह की सफलता के लिए गाँधी ने इसे अपरिहार्य माना।[18]

व्यावहारिक परिणामों के लिए उन्होनें सामान्य जन को समझाने के लिए व्रतों एवं नियमों तथा स्वयं के आचरण को माध्यम बनाया। इस संपूर्ण प्रक्रिया में अनासक्ति, बलिदान एवं कष्ट सहन करने की इच्छा शक्ति को आदर्श राजनीतिक मानकों के रूप में सदैव सामने रखा गया। वेदान्त की परंपरा में गाँधी ने सत्य की खोज को 'निरन्तरता' के रूप में समझा। अतः उनकी दृष्टि में कर्मयोगी के लिये विश्राम या विश्रान्ति का कोई अर्थ नहीं है। उनके यह विचार वर्तमान मानव को निरंतर कर्मशील रहने को प्रेरित करते है।

गाँधीजी के अनुसार सत्याग्रह कर्मयोग की तरह वैज्ञानिक दृष्टि एवं निश्चित अनुशासन पर आधारित है। आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि उसका सम्बल है। जिस प्रकार वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए सुनिश्चित वैज्ञानिक पद्धति तथा प्रशिक्षण आवश्यक है, उसी प्रकार सत्य के प्रयोगों एवं सत्याग्रह के लिए भी वैयक्तिक, सामूहिक, राष्ट्रीय स्तरों पर वैज्ञानिक दृष्टि, अनुशासन एवं प्रशिक्षण आवश्यक है।[19] सत्याग्रह की अवश्यंभावी सफलता के प्रति आश्वस्त करने के लिये गाँधी ने बार–बार स्मरण करवाया कि सत्य 'अजेय' है, असत्य की पराजय निश्चित है। अपने तर्को की पुष्टि के लिए उन्होनें लोक संस्कृति में प्रतिष्ठित अनेक आदर्शो यथा–सत्यनिष्ठ राजा हरीशचन्द्र, भक्त प्रहलाद, भक्त मीरा, दृढ़प्रतिज्ञ सीता, द्रोपदी एवं दमयंती आदि के दृष्टांतो का उपयोग किया तथा सत्याग्रह की अपरिहार्यता एवं अजेयता को स्पष्ट किया।[20] उनके अनुसार अहिंसा को अपना जीवन मूल्य बनाकर ही सत्याग्रह की ओर बढ़ा जा सकता है। सत्याग्रह की रणनीति में प्रयुक्त अनेक प्रत्ययों में एक अन्य प्रत्यय जो काफी विवादित रहा वह है 'अंतर्रात्मा' में विश्वास का प्रत्यय। गाँधी ने अंतरात्मा को सत्य की कसौटी माना, विशेषतः उस परिस्थिति में जब प्रतिरोधी तर्क विवेकशक्ति की स्पष्टता को प्रभावित करें।[21] गाँधी ने इसे स्वप्रेरित कर्म का आधार भी माना।

अनेक आलोचकों जिसमें गाँधी के स्वयं के अनुयायी एवं सहयोगी भी शामिल थे, गाँधी की उक्त मान्यता को अवैज्ञानिक मध्ययुगीन मानसिकता का

द्योतक बताया किंतु गाँधी ने जिस प्रकार 'अति–सक्रिय चेतना' को विचलन की स्थिति में व्यवहार का निदेशक तत्व स्वीकार किया निश्चय ही उसकी वैज्ञानिकता को नवीन मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों के संदर्भ में पुनः देखने की आवश्यकता है।[22] यह भी ज्ञातव्य है कि गाँधी ने अपने जिन विचारों को अंतर्रात्मा की आवाज पर आधारित माना उनके पीछे राजनैतिक कारण भी थे एवं उनकी तात्कालिक राजनैतिक सूझबूझ को उनके सहयोगियों ने स्वीकार भी किया था। स्मरणीय है गाँधी ने यह तर्क या तो उस स्थिति में दिया जब उन्हें नये आंदोलन को शुरू करने के लिये अंतराल की आवश्यकता थी अथवा जब आंदोलन के दौरान भड़की हिंसा पर काबू पाना जरूरी था अथवा जब आंदोलन को जारी रखने में भारी कठिनाइयाँ थी अथवा संघर्ष के शिथिल होने की आशंका थी। इन सभी स्थितियों में अंतर्रात्मा के प्रत्यय का प्रतीकात्मक उपयोग सत्याग्रह की रणनीति में राजनैतिक अर्थो में अत्यंत उपयोगी रहा।[23]

गाँधीजी ने सत्याग्रही राजनीति को नीतिगत अनुशासन से सम्बद्ध करने के लिए अपने राजनीति के आध्यात्मिकरण के विचार का प्रयोग किया। **जे. बी. कृपलानी ने स्पष्ट किया,** ''यह विचार एवं संकल्प राजनीति में विफल रहता, गाँधी मात्र अच्छे नीतिविद् किन्तु त्रुटिपूर्ण राजनीतिज्ञ होते।''[24] अंग्रेज साम्राज्यवादी इस तथ्य से भलीभांति परिचित थे कि गाँधी धार्मिक–आध्यात्मिक भाषा शैली के प्रयोग के बावजूद एक अंतर्दृष्टिपूर्ण राजनीतिज्ञ भी थे। साम्राज्यवादी प्रशासन उनसे चौकन्ना एवं सावधान रहने को छुपाता नहीं था। इसलिए गाँधीजी के संदर्भ में बहुप्रचलित 'महात्मा बनाम राजनीतिज्ञ' का विचार वस्तुतः भ्रामक है। गाँधी की आध्यात्मिकता का स्वरूप पारलौकिक नहीं, इहलौकिक है।[25]

अपने आध्यात्मिक बिन्दुओं एवं आदर्शवादी विचारों का प्रयोग उन्होनें राजनीति को एक वैध एवं वांछनीय गतिविधि के रूप में प्रस्तुत करने के लिए किया तथा साधनों की शुद्धि को साध्य के समकक्ष रखा। इसी परिप्रेक्ष्य में गाँधीजी ने सत्याग्रह को जन आंदोलन की रणनीति बनाने का निर्णय लिया था

तथा सफलता भी प्राप्त की थी। वस्तुतः वर्तमान राजनीति के लिये यह विचार आध्यात्मिक–नैतिक प्रत्ययों एवं राजनैतिक अंतर्दृष्टि का अनूठा संगम एवं सत्याग्रह की विशिष्टता का प्रासंगिक उदाहरण प्रस्तुत करता है।

सत्याग्रह मात्र साम्राज्यवादी शासन के विरोध का नहीं प्रत्येक अन्यायपूर्ण स्थिति के प्रतिरोध का अस्त्र था। अतः प्रत्येक एवं दोनों स्तरों पर इसके विकास की असीमित संभावनाएँ है। इसका स्पष्ट राजनैतिक परिणाम अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस अर्थ में दृष्टिगोचर हुआ कि ब्रिटेन समेत अन्य यूरोपीय देशों तथा अमरीका में भी सत्याग्रह के नैतिक एवं सैद्धांतिक आयामों के पक्ष में सहानुभूतिपूर्ण जनमत तैयार हुआ, जो साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष में अवश्य ही मददगार साबित हुआ।

नीतिप्रधान राजनीति का प्रारम्भ

महात्मा गाँधी का संपूर्ण चिन्तन वर्तमान समाज के लिए मार्गदर्शक एवं आध्यात्मिक मूल्यों से परिपूर्ण है। उनकी दृष्टि में 'नीतिविहीन राजनीति' का कोई अर्थ नहीं है। कर्म से प्रेरित गाँधी चिन्तन में, धर्म को द्वैतीयक नहीं माना गया है, जीवन के प्रत्येक क्षैत्र का हर चरण उनके लिये अध्यात्म से सम्बद्ध है। जिसकी प्रेरणा उन्हें गीता से मिली।

- **सद्गुणी व्यक्ति सर्वोपरि**

गाँधी के लिए सद्गुणी व्यक्ति सर्वोपरि है। उनके लिये ईश्वर, धर्म एवं व्यक्ति समानान्तर है। गाँधी को इनकी पारस्परिकता में किसी प्रकार का संशय नहीं है। ''गाँधी ने धर्म, ईश्वर एवं नैतिकता को पर्याय माना है, अतः नैतिकता उनके लिये प्राथमिक है। यही कारण है कि गाँधीजी ऐसी राजनीति की कल्पना भी नहीं कर सकते जो नैतिकता से रहित हो।[26] गाँधीजी ने अपने चिन्तन में सत्य को शक्ति पर प्रमुख माना। उन्होनें जीवन का लक्ष्य सत्य की खोज माना। शक्ति, राजनीति की कड़ी के रूप में तो मान्य थी, किन्तु राजनीति की

प्राथमिकता के रूप में नहीं। इस कारण, गाँधीजी सत्य से विमुख राजनीति को कभी स्वीकृति नहीं देते है।

- **सर्वेश्वर में विश्वास**

गाँधी ने स्पष्ट किया कि सर्वेश्वर का उल्लेख किसी पंथ अथवा औपचारिकता का सूचक नहीं है। उसके अंतर्गत किसी भी धर्म, मान्यता, विश्वास में इंगित 'सर्वशक्ति' की स्वीकारोक्ति है। किसी भी विचारधारा, आस्तिकता, नास्तिकता के प्रतिवाद से परे, सर्वेश्वर को मान्यता देना सभी समाजो की अपरिमित नैतिकता का स्त्रोत है। गाँधी ने जाति, पंथ, मान्यता, औपचारिकता, विभेदीकरण से मुक्त समता तथा सदाशय संयुक्त नैतिकता को ही धर्मपरायणता का प्रमाण माना।[27]

- **अध्यात्म एवं गीता ज्ञान**

गाँधीजी का अध्यात्म दर्शन विश्व को नवीन संदेश देता है। अध्यात्म का एक महत्वपूर्ण आयाम यह है कि व्यक्ति संकीर्ण ''स्व'' से उच्चतर शाश्वत ''स्व'' की ओर अग्रसर हो। गीता के इस अनवरत् संदेश का गाँधी पर दूरगामी प्रभाव देखा जा सकता है। राजनीति के नवस्वरूपण हेतु गाँधी ने इसी मूल्य को व्यावहारिक जीवन में उतार कर नीति, नैतिकता एवं मानवीय आग्रहों को स्वाभाविक स्तर प्रदान किया। आत्म उद्धीपन एवं आत्म–संज्ञान स्तरीय अनुभूति में ही गीता के मूल्यों ने गाँधी के जीवन को नवीन, प्रयोजनशील आधार प्रदान किये।[28]

गाँधीजी ने गीता में स्पष्ट स्तर पर पाया कि कर्म का कोई विकल्प नहीं है, तथा जब कर्म निःस्वार्थ कर्तव्य बोध से संयुक्त हो तो जीवन के प्रयोजनों की अभिव्यक्ति स्वतः ही होती है। इसी कारण गाँधीजी ने गीता को कामधेनु की संज्ञा दी जो ''सत्य'' एवं ''अहिंसा'' के अनुकूलन की द्योतक है। निःस्वार्थ एवं त्याग संबन्धी मूलाधारों से अनुप्राणित होकर गाँधीजी ने स्वीकारा कि विश्व में शोषण, आरोपण, अन्याय एवं प्रवंचना का निराकरण होना अनिवार्य है। विश्वत्व

एवं सर्वजन बंधुत्व के मूल्यों को गाँधी ने गीता में स्थापित पाया एवं उनकी मान्यता थी कि अर्जन, शोषण एवं आसक्ति का एकमात्र उपाय त्याग, अस्वाद एवं ब्रह्मचर्य में निहित साधना में ही सम्भव है। फलतः गाँधी ने स्वीकारा कि गीता में जिन मानवीय मूल्यों का उल्लेख है वे शाश्वत बोध की सर्वोच्च स्थिति है।[29]

गीता के कथन के विषय में गाँधी ने स्पष्ट किया कि मूल प्रश्न यह है कि गीता में विशिष्ट संदेश है तथा ऐतिहासिक छिद्रान्वेषण से परे इसी वास्तविकता को समय एवं स्थिति के संदर्भ में क्रियान्वित करना मानव समाज का दायित्व है। ''गीता के रचनाकार ने कृष्ण के दैवीय रूप को प्राथमिकता नहीं दी हैं वरन् प्रत्येक व्यक्ति को मानस, दृष्टि, हृदय एवं कर्मण्यता के धार्मिक सत्व की शाश्वत, सनातन प्रस्तुति की है। गाँधी के निर्वचन में कृष्ण के कथन, ईश, ईश्वर, अल्लाह किसी भी नामकरण से प्रवाहित माने जा सकते है, क्योंकि सर्वेश्वर की दिव्यवाणी कृष्ण के माध्यम से संप्रेषित की गई न कि कृष्ण को एकाकी दैवीय आकृति में प्रस्तुत किया गया।[30] अतः विश्व समाज को विश्व कल्याण के लिये विभिन्न महापुरूषों द्वारा दिये गये नैतिक एवं उचित विचारों का सम्मान करते हुए लाभान्वित होने के प्रयास निरंतर करते रहना चाहिए।

''गाँधीजी ने गीता को समग्र ज्ञान का शास्त्र माना क्योंकि विविध एवं समग्र कर्म के सिद्धांतो की व्याख्या द्धारा इस कथन में मानव जाग्रति का आह्वान है। इस शास्त्र में कर्म की अनासक्ति की प्राथमिकता को इंगित किया गया है। सर्वोत्तम सेवा कर्म भी पुरूषोत्तमक को समर्पित करने से व्यक्ति उस स्तर को प्राप्त करता है जो जीवन की सार्थकता है।[31] अर्थात् गाँधीजी के गीता दर्शन सबंन्धी विचार से वर्तमान विश्व राजनीति में कर्म को सेवाभाव से जोड़ा जा सकता है।

गाँधीजी ने गीता की नवव्याख्या प्रस्तुत की तो उसके गर्भ में यह यथार्थ विद्यमान है कि वे अपने संस्कार, संस्कृति, अनुभव, आंतरिक ज्ञान तथा सामयिक संदर्भ से भिज्ञ थे एवं उनकी दृष्टि में गीता केवल मात्र पराभौतिक उद्घोष न

होकर, जीवन की मूल चुनौतियों का प्रसंग था। गीता को किसी पंथ अथवा विचारधारा विशेष न मानकर, गाँधी ने उस संकलन को गंभीर मानवीय मूल्याधार के स्तर पर स्वीकारा। अद्वैत दर्शन के समर्थक होने के नाते गाँधी ने किसी वैयक्तिक दर्शन को व्यक्त न कर, गीता को राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय चुनौतियों के संभाव्य विकल्पों की खोज के रूप में गीता की नवव्याख्या, गाँधी के प्रयोजनों की अभिव्यक्ति है।[32]

वर्तमान समाज को मार्गदर्शित करने के संदर्भ में गीता से गाँधी ने सीखा कि अहिंसा साधन मात्र है, सत्य लक्ष्य है। इसी मूल्य क्रियान्वयन में अहिंसा की पहेली का सुलझना संभव है। अहिंसा विभाज्य स्थिति को गाँधी ने अनुचित माना। साथ ही उनकी मान्यता थी कि यदि विकल्प निर्धारण हेतु हिंसा एवं भय ही रह गये तो निश्चित ही वे हिंसा का चयन करेंगे। उनकी प्राथमिकता सदैव स्थायी रही कि यदि व्यक्तिगत हिंसा का सहारा लिये बिना स्वयं मृत्यु को अंगीकार करे तो अवश्य ही जीवन के प्रमुख प्रयोजन सिद्ध होंगे। गीता में उल्लिखित युद्ध एवं संघर्ष के वातावरण के बावजूद, गाँधी की मान्यता बनी रही कि प्रतिशोधी, ''जैसै को तैसा'' विकल्प का त्याग हो। घृणा से घृणा द्वारा हिंसा, दुष्टता से दुष्टता के निवारण की निरर्थकता को स्वीकारा जाये। गीता के गुणात्मक संदेश के जीवन में क्रियान्वयन पर बल देते हुए उन्होनें विचार दिये कि, व्यक्ति दैनिक जीवन में गीता की क्रियान्विति करे तो अनेक प्रश्नों तथा चुनौतियों का समाधान स्वतः होगा। विश्व के नागरिकों को 'कर्मण्यता के दर्शन' के अभाव में जीवन का सत्व प्राप्त नहीं हो सकता।''[33]

सामाजिक एवं राजनैतिक परिवर्तन : वैचारिक प्रासंगिकता

गाँधीजी की दृष्टि में सामाजिक परिवर्तन उतना ही अपरिहार्य होता है जितना राजनैतिक परिवर्तन। सामाजिक परिवर्तन राजनीतिक तथा आर्थिक परिवर्तन का समानान्तर और कई अर्थो में समानार्थक भी हो सकता है। गाँधीजी का सामाजिक परिवर्तन का विचार एक पूर्ण विचार था, जिसके अंतर्गत वे समस्त आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक

व्यवस्था का रूपान्तरण चाहते थे। गाँधीजी ने सामाजिक परिवर्तन का औचित्य उसी स्थिति में माना जब राष्ट्र को विदेशी निरंकुशतावाद एवं समाज को अंतर्विरोधों से मुक्ति प्राप्त हो। चाहे गाँधी के विचार–निर्माण का क्षैत्र दक्षिण अफ्रीका रहा हो, अथवा 1915 के पश्चात् भारत, प्रतीकात्मक स्तर पर चुनौतियाँ भिन्न होने पर भी, सामाजिक परिवर्तन हेतु प्राथमिक महत्व के स्तर पर देखा जा सकता है। स्मरणीय है कि गाँधी के प्रयास में एक राजनेता, राजवेत्ता एवं राजनीतिज्ञ की भूमिका के साथ ही एक सुधारक–विरोधवादी का व्यक्तित्व भी समाहित है।

- गाँधी का चिन्तन, कार्यक्रम एवं योगदान मूलतः इस वचनबद्धता से अनुप्राणित था कि जीवन के किसी भी क्षैत्र में अधिकारवाद, निरंकुशता एवं अन्याय का निराकरण करना प्राथमिक है। सत्य एवं अहिंसा इसके आधार है एवं अहिंसा प्रमुख कार्यशैली है।
- संचय की प्रवृति के विरूद्ध गाँधी ने ''सेवापरक'' एवं ''विकेन्द्रित'' आर्थिक योजना को प्रमुख माना जिसके अंतर्गत ग्राम्याधारित उत्पादन–वितरण प्रारूप को कल्याणकारी संदर्भ में व्यापकता दी जा सके।
- राजनीतिक शक्ति के बारे में **गाँधी का कहना था–** ''मेरे लिये राजनीतिक शक्ति का इससे अधिक कुछ भी महत्व नहीं है कि वह एक जरिया है, जिससे लोग अपने जीवन की अवस्थाओं को सुधार सकते है। राजनीतिक शक्ति का अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियों द्वारा राष्ट्रीय जीवन का संचालन। अगर राष्ट्रीय जीवन स्वयं संचालन की योग्यता हासिल कर लेता है तो प्रतिनिधित्व की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। इसलिये आदर्श राज्य में राजनीतिक शक्ति नाम की कोई चीज नहीं रह जाती क्योंकि राज्य ही नहीं रह जाता। परन्तु यह आदर्श जीवन में पूरी तरह से प्राप्त नहीं है।''[34]

गाँधीजी दार्शनिक अराजकतावादी थे परन्तु फिर भी राजनीतिक शक्ति में उनका विश्वास था। उन्होनें सदा ही राज्य और समाज में भेद करने का प्रयत्न

किया। वे यह मानते थे कि कुछ व्यक्तियों के लिये, जिन्होनें सत्याग्रह की तकनीक में प्रशिक्षण प्राप्त कर लिया है, यह आवश्यक होना चाहिए कि वे अपने को राजनीतिक शक्ति से दूर रखे। वे सदा इस प्रयत्न में लगे रहे कि राज्य–सत्ता को समाज के प्रति उत्तरदायी बनाये रखा जा सके। गाँधीजी ने स्पष्ट किया कि, ''मैं उन्हें संसद में भेजना नहीं चाहता। मैं चाहता हूँ कि मतदाताओं को प्रशिक्षण देकर वे संसद को नियंत्रण में रख सकें।

- गाँधी के अनुसार सत्ता का जनता के प्रति उत्तरदायी होना आवश्यक है। इसके साथ ही किसी भी राष्ट्र के स्वयंसेवी संगठनों का कार्यक्षैत्र रचनात्मक होना चाहिए। रचनात्मक कार्य का प्रमुख उद्देश्य लोकशक्ति जगाना एवं संगठित करना है ताकि राज्यशक्ति के साथ उसका सम्मानपूर्ण सहयोग हो सके तथा सामान्य जन–जीवन के क्षैत्र में वह राज्य–शक्ति का विकल्प बन सके। उन्होनें रचनात्मक कार्यकर्ताओं से कहा कि, ''वे सत्ता की राजनीति और उसकी छूत से अपने को अलग रखे।'' जितने भी क्रियाशील संगठन है उन्हें अपने साथ ले लो। अपने में से सारी गंदगी दूर कर दो। सत्ता प्राप्ति करने के विचार को अपने मन में आने न दो, इसी में मुक्ति है। तुम्हारे लिये दूसरा कोई मार्ग नहीं।''[35]

- गाँधी वे पहले विचारक है जिन्होनें राजनीतिक दर्शन के उस सिद्धान्त का पूरी तरह से खण्डन किया कि साध्य से ही साधन का औचित्य सिद्ध हो जाता है। यह सिद्धान्त भारतवर्ष में कौटिल्य और पश्चिम में मैकियावली से शुरू होता है। मैकियावली ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि राज्य की रक्षा के लिये प्रयुक्त हर साधन उचित है। मार्क्सवादियों ने भी वर्गविहीन समाज की स्थापना के लिये हिंसा आदि साधनों को उचित बताया। ट्राटश्की ने उन्हीं साधनों को उचित बताया जो मानव समुदाय को स्वतंत्र कर सके, परन्तु यहाँ भी साधन का औचित्य साध्य से ही निर्धारित हो रहा है। पं जवाहरलाल नैहरू ने भी स्पष्ट कहा है कि मनुष्य को कम से कम ऐसे साधनों का चुनाव अवश्य करना चाहिए

जो उसे उसके निर्धारित लक्ष्य तक पहुँचा दे।[36] इस प्रकार नैहरू के दर्शन में साधन किसी न किसी सीमा तक साध्य से निर्धारित है। यह केवल गाँधी का दर्शन है जिसमें साधन अपने आप में स्वतंत्र है, वह साध्य से जुड़ा अवश्य है, परन्तु साध्य से निर्धारित नहीं।

- सामाजिक पुनर्निर्माण के प्रयास में प्रथम स्थान व्यक्ति का है। समाज का कोई भी प्रश्न 'व्यक्ति की गरिमा' एवं 'नागरिक महत्ता' का प्रश्न सर्वप्रथम है। इसका प्रमुख कारण गाँधी ने मनुष्य की आत्मा की सर्वोपरिता को माना एवं उनके दृष्टिकोण में समाज की उन्नति साधारण व्यक्ति की आध्यात्मिक शक्ति के विकास पर निर्भर है। व्यक्ति नितांत भौतिक तत्वों का मशीनी संयुक्तीकरण नहीं, बल्कि एक दैवीय चिंगारी है।[37] ईश्वर एवं व्यक्ति की आत्मा के मध्य सर्वाधिक निकटतम संबंध तब होता है जब व्यक्ति अहंकार के बन्धनों को तोड़ देता है। इसके विपरीत जब व्यक्ति अपने में ''स्व'' या ''अहं'' की भावना उजागर करता है तो वह ईश्वर एवं अपने मार्ग में अवरोध पैदा करता है। इस विकृत भावना का परित्याग ही ईश्वर में समाहित होना माना गया है।[38] गाँधी के विचार में ईश्वर तथा मनुष्य में कोई विरोध नहीं है। साथ ही सभी जीवधारियों की मूलभूत एकता में विश्वास होने के कारण गाँधी ने माना कि व्यक्ति सृष्टि का सेवक है, स्वामी नहीं। स्मरणीय है कि यद्यपि गाँधी सामाजिक पुनर्निर्माण में व्यक्ति को केन्द्र बिन्दु मानते है, लेकिन समाज के संस्थागत सुधार पर बल देते है।

- गाँधीजी ने सामाजिक न्याय एवं शक्ति संवर्धन हेतु स्त्री एवं पुरूष की समानता पर बल दिया। गाँधी ने नारी के मूल में छिपी मातृशक्ति, त्याग, करूणा, दान, प्रेम, अहिंसा को प्राथमिक माना। उन्होनें माना कि स्त्री, पुरूष की साथी है, जिसकी बौद्धिक क्षमताएँ पुरूष की बौद्धिक क्षमताओं से किसी तरह कम नहीं। समाज की प्रक्रिया में दोनों भागीदार है। गाँधी के अनुसार ''यदि नारी समाज निम्न माना जाये, तो राष्ट्रीय प्रगति का अवरूद्ध होना स्वाभाविक

है।''[39] स्त्री–पुरूष की परिपूरकता में गाँधी ने रचनात्मकता को आसीन पाया।[40] गाँधी ने नारी की स्वतंत्रता एवं शिक्षा पर बल दिया और उन लोगों की कटु आलोचना की जो इस संदर्भ में उदासीन रहते है।[41]

- गाँधीजी ने राजनीति के स्थान पर ''लोकनीति'' की प्राथमिकता एवं औचित्य पर बल दिया। उनके चिन्तन में स्पष्ट है कि यदि राजनीति शासन पर आधारित है तो लोकनीति अनुशासन पर, यदि राजनीति शक्ति पर केंद्रित है तो लोकनीति स्वतंत्रता एवं स्वायत्तता पर, यदि राजनीति संप्रभुता एवं अधिकारों के अर्जन की प्रतियोगिता पर आधारित है, तो लोकनीति कर्तव्यपरायणता तथा जागरूकता पर। गाँधी ने माना कि लोकनीति, आध्यात्मिकता से प्रेरित ''कर्मयोग की सम्पूर्ति है।''[42] अर्थात् गाँधीजी के नीति संबन्धी विचार जनकल्याण की दृष्टि से प्रासंगिक है।

- गाँधीजी ने अधिकारों को सामाजिक संदर्भ में ही मान्यता दी क्योंकि उनके अनुसार अधिकार एवं दायित्व परिपूरक है। वे अधिकारों की अपेक्षा कर्तव्यों को अधिक महत्व देते है। गाँधी ने स्पष्ट किया कि अधिकारों का सृजन राज्य या किसी दूसरे समुदाय द्वारा नहीं होता। जैसै–जैसै व्यक्ति सत्य और अहिंसा की साधना द्वारा अधिकारों के लिये योग्यता का विकास करता है, वैसै–वैसै उसको अधिकार मिलते जाते है।[43]

- राजनीतिक पुनर्निर्माण के संदर्भ में गाँधीजी ने नीति–प्रधान एवं आध्यात्मिक सौजन्य प्रदान किया। अतएव गाँधी के पुनर्निर्माण के प्रयास को ''राजनीतिक'' की संज्ञा देना भी विरोधाभास है क्योंकि गाँधी ने चाहे संक्रमण के चरणों में राजनीति का आश्रय लेकर, स्वयं राजनीति के शुद्धिकरण का प्रावधान दिया हो, अन्ततोगत्वा वे सर्वोदय समाज की स्थापना एवं सशक्त स्थिति में ही समस्त जनमानस की प्रगति, विकास एवं उत्थान को चरितार्थ मानते थे। उन्होनें सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तन हेतु अहिंसात्मक साधनों एवं प्रयासो को ही प्राथमिक माना।

- गाँधीजी ने राजनीतिक परिवर्तन के लिये शक्ति अथवा बल प्रवर्तन को आधार न मानकर सद्भावना और सदाशय, मुक्त राजनीति, अनुनय एवं संवाद की राजनीति एवं स्वाभिमानी राजनीति को प्राधान्य दिया। जिसकी प्रासंगिकता वर्तमान विश्व में होने वाले राजनैतिक आंदोलनों में आवश्यक रूप में देखी जा सकती है।

- प्रो. डी.बी. माथुर के अनुसार गाँधी ने राजनीतिक पुनर्निर्माण प्रक्रिया में यदि सत्याग्रह, बहिष्कार, अवज्ञा, प्रतिशोधविहीन विरोध को प्राथमिकता प्रदान की, तो इस प्रयास में उनके ''सृजनात्मक तनाव'' सिद्धान्त की क्रियान्विति थी। उनके संपूर्ण विरोध के साधनों की सर्वविदित स्थिति, शुद्धि एवं प्राथमिकता से सृजनात्मक तनाव प्रक्रिया जुड़ी हुई थी। यही कारण है कि गाँधीजी के सभी आन्दोलन गोपनीयता मुक्त आन्दोलन है। संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रजातिवाद विरोधी मार्टिन लूथर किंग (जूनियर) ने इस पद्धति का अनुसरण किया एवं उन्हें महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हुई। गाँधी ने ''सृजनात्मक तनाव'' द्वारा जनसमाज को विरोध तथा अवज्ञा हेतु प्रशिक्षित करने का प्रयास किया। राजनीतिक पुनर्निर्माण प्रक्रिया में यह एक विशिष्ट योगदान कहा जा सकता है।[44]

- गाँधीजी सामाजिक परिवर्तन एवं रचनात्मकता का आधार संपूर्ण समाज की सहभागिता मानते है। जनभागीदारी एवं जनशक्ति पर आधारित रचनात्मकता को बनाये रखने के लिये सदाशयी विश्वसनीयतापरक, प्रतिशोधहीन मूल्य, सहकारवृत्ति में विश्वास एवं साधनों की शुद्धता को मुख्य आधार बनाया। परिवर्तन हेतु गाँधी ने सहकार सहयोग विश्वसनीयता के स्थान पर असहयोग, बहिष्कार, सविनय अवज्ञा, अभयपूरित प्रतिरोध को भी आवश्यक साधन बनाया। गाँधी रचनात्मक कार्यक्रम की व्यावहारिकता के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन चाहते थे।[45.]

- गाँधीजी विदेशी व्यापार के पक्ष में उसी सीमा तक थे जहाँ अन्याय पैदा न हो। गाँधी के लिये खादी एवं चरखा आर्थिक समानता लाने का एक साधन

है।[46] उन्होनें 1940 मे कहा यदि मैं उपने दृष्टिकोण से समाज को सहमत कर सका तो भावी समाज व्यवस्था मुख्यतः चरखे और उसके आनुषंगिक तत्वों पर आधारित होगी।[47] इन विचारों के माध्यम से गाँधीजी वर्तमान विश्व समाज में आर्थिक समानता एवं एकता के पक्षधर रहे है।

मानवीय न्याय, अधिकार एवं कर्तव्य : गाँधीवादी उपयोगी दृष्टि

गाँधीवादी वैचारिक दृष्टि में व्यक्ति की अस्मिता एवं जीवन को खण्डों में विभाजित नहीं किया जा सकता इसलिये न्याय का वर्गीकरण भी अनावश्यक है। न्याय अपने वृहत रूप में सभी पक्षों को समाहित कियें हुए है। इसी कारण गाँधीजी ने न्याय को एक सिद्धांत न मानकर एक संकल्प और आस्था के रूप में व्यक्त किया। गाँधीजी ने आस्था के रूप में धर्म को व्यक्ति के स्वभाव का अनिवार्य सद्गुण माना, जिसकी परिणति अन्ततः न्याय स्थापना में सहायक होती है।[48] चिन्तन के स्तर पर न्याय सर्वव्यापी सर्वगुण को प्रतिबिम्बित करता है तो व्यवहार के स्तर पर सामाजिक सद्गुण का आधार बन जाता है।

मानव की अस्मिता से जुड़े मानवीय मूल्यों का जो व्यापक अहिंसात्मक स्वरूप भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के गाँधीवादी युग में उजागर हुआ वह प्लेटोवादी न्याय से अधिक गहन एवं उपयोगितावादी न्याय से कहीं अधिक समग्रता लिये हुए है। गाँधी ने न्याय के ऐतिहासिक कालानुक्रम के सभी पक्षों और समाज सम्बद्ध सभी घटकों की समान महत्ता को स्वीकार कर वैचारिक और व्यावहारिक दोनों स्तरों पर ''मानवीय न्याय'' के मूर्त स्वरूप को प्रतिबिम्बित करने का प्रयास किया।[49] गाँधी ने यह सिद्ध करने की अपेक्षा कि न्याय क्या है एवं अपने मूल रूप में वह किस सामाजिक स्थिति का परिचायक है, यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं नैतिक न्याय की क्या स्थितियाँ एवं स्वरूप है? स्वयं गाँधी के शब्दों में, ''नये सिद्धांतो को जन्म देने का दावा मैं नहीं करता । मैंने तो केवल अपने ढंग पर सनातन सत्यों को दैनिक जीवन और समस्याओं पर लागू करने का प्रयास किया है।''[50] गाँधी न्याय की साधना में रत कर्मण्यवादी थे जिनके लिये न्याय ज्ञान के क्षेत्र में सत्य,

व्यवहार के क्षैत्र में नीति परायणता और सामाजिक संबंधो के क्षैत्र में मानवतावादी मूल्यों का समायोजन रहा। गाँधी चिंतन में मानव के स्तर पर अमूर्त कल्पना न होकर सापेक्ष सत्यों की प्राप्ति हेतु अन्तर्चेतना, आत्मानुभूति एवं आत्मज्ञान हैं।[51] गाँधीजी के न्याय पर दिये गये विचार मानव की विकृत मानसिकता को परिष्कृत करने में सहायक है।

गाँधी का सामाजिक न्याय के संदर्भ में सर्वाधिक प्रासंगिक व महत्वपूर्ण योगदान यह है कि उन्होनें न्याय को मूर्त स्वरूप प्रदान किया, उसके साधन बताये, अन्याय के निराकरण हेतु अनेक संरचनात्मक उपायों की क्रियान्विति को सक्षमता प्रदान की। गाँधी की दृष्टि में न्याय केवल समाज के संदर्भ में ही महत्वपूर्ण नहीं हैं बल्कि व्यक्ति अपने स्वत्व के साथ उस न्याय की किस प्रकार सूत्रबद्ध आन्तरिकता स्थापित करे, इस व्याख्या को उन्होनें समुचित दिशा निर्देशन प्रदान किया। चूँकि सामाजिक न्याय प्रयोजन भी है अतः उच्च प्रयोजन सिद्धि हेतु सभी क्षैत्रो में गाँधी ने न्यायपूर्ण गरिमा से युक्त साधनों को सर्वाधिक महत्व दिया।

गाँधीजी ने अधिकारों को नैतिक आध्यात्मिक 'संकल्प' की दृढ़ता एवं कर्तव्यों को 'स्वधर्म' के रूप में परिभाषित कर मानवीय न्याय की नैतिक व्याख्या प्रस्तुत की अधिकारों की पुष्टि करते हुए गाँधी ने स्वीकारा कि फ्रांस के जनसमाज के मूल्यों में स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्व महान् आदर्श है लेकिन यह विरासत केवल फ्रांस के लोगों की न होकर संपूर्ण मानवता की हैं।[52] गाँधी के अनुसार अधिकारों की प्राप्ति समाजोपयोगी कर्तव्यों की पूर्ति के द्वारा ही हो सकती हैं।

कर्तव्य को गाँधी ने ''स्वधर्म'' के रूप में स्पष्ट किया और अधिकार का उद्देश्य स्वार्थ सिद्धि न मानकर ''समाज सेवा'' को माना। दूसरे शब्दों में कर्तव्यों के पालन से जो अधिकार प्राप्त होते है, उसका उपयोग स्वयं के लिए न करके समाज के कल्याण के लिए करने से ही उनका औचित्य स्पष्ट होता है।[53] गाँधीजी के विचार इस दृष्टि से भी प्रासंगिक हैं कि उनकी दृष्टि में अधिकारों

की व्यवस्था स्वावलंबन एवं वैयक्तिक स्वायत्तता का आग्रह है। अधिकार वे नहीं है जो एक व्यक्ति अथवा संस्था द्वारा अन्यों को दिये जाते है, अपितु ये कर्तव्यों के पालन मूल्य है। उदाहरणार्थ, गाँधीजी ने भी तिलक की भाँति माना कि स्वराज हमारा जन्म सिद्ध अधिकार हैं, लेकिन इसे बनाये रखना हमारा पवित्र कर्तव्य भी है।[54] चूँकि अधिकारों के द्वारा व्यक्ति अपने श्रेष्ठत्व की उपलब्धि करता है। अतः उसका यह कर्तव्य भी है कि वह अपने श्रेष्ठत्व का योगदान समाज को प्रदान करे।

गाँधी शिक्षा दर्शन : प्रासंगिकता

गाँधीजी की शिक्षा संबधी विचारधारा की प्रासंगिकता वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक प्रतीत होती है। गाँधीजी द्वारा भारतीय जीवन को दृष्टिगत रखते हुए वातावरण के अनुसार ऐसी शिक्षा योजना प्रस्तुत की गई जिसको कार्यरूप में परिणत करने पर भारतीय समाज में एक नया जीवन आने की संभावना है। यही विचार विश्व ग्राम पर भी लागू होता हैं। गाँधीजी हृदय से आदर्शवादी थे क्योंकि वे जीवन के अंतिम लक्ष्य सत्य को प्राप्त करने पर बल देते है। उन्हें हम प्रयोजनवादी भी कह सकते हैं क्योंकि वे बालक की रूचि के अनुसार क्रिया करके सीखनें पर बल देते हैं। उनको प्रकृतिवादी इसलिए कह सकते है कि वे बालक को उसकी प्रकृति के अनुसार विकसित करना चाहते थे। ध्यान देने वाली बात यह है कि उनके शिक्षा दर्शन में तीनों विचारधाराओं का समावेश है।[55]

गाँधीजी द्वारा प्रतिपादित शिक्षा का सिद्धांत जिसमें बालकों एवं बालिकाओं को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा दी जानी चाहिए का भारत ही नहीं विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के लिये भी विशेष महत्व है। क्योंकि गरीबी एवं अशिक्षा विश्व के अधिकांश राष्ट्रों की समस्याएँ है। भारत में निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के साथ–साथ बालक–बालिकाओं के लिये कई योजनाओं का निर्माण किया गया है ताकि अधिक से अधिक बालकों को शिक्षा प्राप्त हो सके।

वर्तमान में हम देखते है कि आज युवाओं के पास कई तरह की डिग्री है परंतु रोजगार नहीं है। अतः गाँधीजी ने बहुत वर्ष पूर्व ही इस समस्या को इंगित कर दिया था और उन्होनें बुनियादी शिक्षा के अन्तर्गत उद्योगों पर आधारित शिक्षा पर बल दिया ताकि बालक किसी न किसी हस्तशिल्प को सीखकर आत्मनिर्भर बन सके, बेरोजगारी से मुक्ति प्राप्त कर सके। वर्तमान में अब व्यावहारिक तथा व्यावसायिक शिक्षा पर बल दिया जा रहा है।

गाँधीजी बालकों में मानवीय गुणों का विकास करने पर बल देते थे। जिसकी आज भी प्रासंगिकता है क्योंकि आज जो विनाश एवं तबाही फैल रही है वह मनुष्यों में मानवता की कमी के कारण बढ़ती जा रही है। गाँधीजी ने करके या क्रिया द्वारा सीखनें पर बल दिया जो आज भी उतना ही प्रासंगिक है क्योंकि क्रिया या स्वयं करके सीखनें पर प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है जो हर क्षैत्र के लिये आवश्यक है। गाँधीजी ने शारीरिक श्रम का सम्मान किया। उनके अनुसार मनुष्य को अपना कार्य स्वयं करना चाहिए। किसी पर निर्भर नहीं होना चाहिए।[56]

गाँधीजी द्धारा दिये गये आर्थिक, नैतिक, सांस्कृतिक एवं नागरिकता संबन्धी विचारों के साथ–साथ सर्वोदय समाज की स्थापना जिसके अंतर्गत श्रम का महत्व होगा, धन का नहीं, स्नेह और सहयोग की भावनाएँ होगी, घृणा एवं पृथकता नहीं, शोषण के स्थान पर परहित एवं संचय की प्रवृत्ति के स्थान पर त्याग की प्रवृत्ति होगी। वर्तमान में शोषण, घृणा, स्वार्थ सिद्धि जैसी कुधारणाओं के कारण मारकाट, विनाश तथा मानवता का हनन हो रहा है।[57] अतः हम कह सकते है कि गाँधीजी की सर्वोदय समाज की स्थापना का उद्देश्य आज आवश्यक बन गया है।

गाँधीजी ने धर्म की शिक्षा का भी बहिष्कार किया क्योंकि उन्हें भय था कि जिन धर्मो की शिक्षा दी जाती है अथवा पालन किया जाता है। वे मेल के स्थान पर झगड़े उत्पन्न करते है। वर्तमान स्थिति भी इस बात की समर्थक है। अतएव गाँधीजी के द्धारा दिये गये शिक्षा के सिद्धांत, उद्देश्य, पाठ्यक्रम,

शिक्षणविधि आज भी बालकों तथा बालिकाओं विद्यालय तथा समाज के लिये उतने ही आवश्यक है जितने पहले थे। उनकी शिक्षा केवल मानसिक विकास की ओर ही ध्यान नहीं देती बल्कि शारीरिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिये भी उपयोगी सिद्ध हुई है।

वैश्वीकरण की चुनौतियाँ : गाँधी की प्रासंगिकता

वैश्वीकरण की चर्चा का आरंभ विश्वग्राम की सुनहरी कल्पना से हुआ था। इस कल्पना के अंतर्गत संपूर्ण विश्व के लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने, सबको एक पारिवारिक सूत्र में बांधने के लिए अनगिनत नई नीतियाँ और योजनाएँ सामने आई है। विश्व बैंक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन जैसी अनेक संस्थाएं एक साथ सक्रिय हुई। इस क्रम में धरती के प्रत्येक क्षैत्र की उर्जा और उत्पादक क्षमता का सर्वेक्षण हो चुका है। परिणाम यह है कि विश्वग्राम धीरे–धीरे हितों के भूमण्डलीकरण में बदलता गया है। भारत के संदर्भ में देखें तो 1990 के बाद तेजी से यह देश वैश्वीकरण का लक्ष्य बना है। अपने चारों ओर के परिदृश्य पर विचार करें तो कई नये–नये शब्द अपनी नई–नई प्रयुक्तियों के साथ सक्रिय मिलेंगे। जैसै– बाजारवाद, उत्तर उपनिवेशवाद, उत्तर आधुनिकवाद, विश्वबाजार, संरचनावाद, विखण्डनवाद, उपभौक्तावाद आदि। वर्तमान विश्व में जन समूह का आखेट करने के लिए विभिन्न ताकतें और प्रविधियाँ सक्रिय है। जनसमूह के इसी आखेट के खिलाफ खड़ा है गाँधी दर्शन।

गाँधी की चर्चा करना बीते हुए काल से संबन्धित नहीं है। इसमें सन्देह नहीं कि महात्मा गाँधी व्यक्ति नहीं व्यक्तित्व थे, ऐसे व्यक्तित्व जिनकी कर्मठता ने मनुष्य के शिखरों का स्पर्श किया था। ऐसे व्यक्तित्व का मौजूद होना वर्तमान और भविष्य को एक सूत्र मे बांधने का आधार था। आज भी महात्मा गाँधी का कृतित्व और चिंतन वर्तमान और भविष्य के लिये एक मजबूत आधारशिला है। विशेषतः वैश्वीकरण के इस दौर में आम आदमी पर मंडराते खतरों से जूझने की ताकत देता है। वैश्वीकरण के कारण पूँजीवाद और बाजारवाद के बढ़ते आक्रमणों का सामना करने में गाँधीजी की कथनी और करनी सही मार्गनिर्देश

करती है। वैश्वीकरण ने बड़े पैमाने पर समाज को विखंडित किया है और शाश्वत मानवीय मूल्यों को समाप्त करने की साजिश की है। बाजार पर पैनी निगाह रखने वाले सूचना तंत्र के विस्तार ने हर आदमी को एक आर्थिक इकाई में बदल दिया है। वैश्वीकरण के इस दौर में लोग धीरे–धीरे वस्तु में बदलते जा रहे है। वैश्वीकरण की आदतें मनुष्य को मशीन की तरह निर्जीव बनाती जा रही है। ऐसे हालात में गाँधी के जीवन और सोच की दिशाएं रोशनी की लकीर की तरह रास्ता दिखाती है।[58]

साम्यवाद और समाजवाद में अपनी आस्था रखते हुए गाँधीजी ने कहा था, ''वर्गहीन समाज एक आदर्श है जो केवल हमारा ध्येय ही नहीं होना चाहिए बल्कि हमें उसके लिये प्रयास भी करना चाहिए और ऐसे समाज में वर्गो अथवा समुदायों का कोई स्थान नहीं होता। मैं स्वयं को साम्यवादी भी कहता हूँ, मेरा साम्यवाद समाजवाद से बहुत अधिक भिन्न नहीं है। वह दोनों का सामंजस्यपूर्ण मेल है। जहाँ तक मैंने समझा साम्यवाद समाजवाद की स्वाभाविक परिणति है।[59] इसलिये महात्मा गाँधी ने व्यक्तिगत आचार व्यवहार से अपने जीवन दर्शन का सूत्रपात किया। अपने संपूर्ण जीवन को उन्होनें सत्य का प्रयोग कहा है और यहीं उनकी आत्मकथा का उपशीर्षक है।

वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में जब संसार भर में कई बहुराष्ट्रीय व्यावसायिक कंपनियाँ अपना माल बेचकर अधिक से अधिक लाभ कमाने में जुटी है और हर आदमी इस मुनाफे में अपना हिस्सा बटोरनें लगा है, महात्मा गाँधी ने व्यावसायिक लाभ से ऊपर उठकर मानवीय मूल्यों और राष्ट्रीय हितों की बात की है। गाँधी दर्शन मानवता, सत्य, अहिंसा, शांति, संतोष, अनासक्ति, एकता और राष्ट्रीयता पर आधारित है। बड़े पैमाने पर व्याप्त आर्थिक प्रतिद्वन्दिता और विघटन के इस दौर में किसी के पास इन सभी के बारे में सोचने का समय ही नहीं है। महात्मा गाँधी इन्हीं सभी के बारे में सचेत करते है। वे मनुष्य को मनुष्य बने रहने की सलाह देते है और इसके लिये जरूरी आचार व्यवहार का संदेश भी देते है।[60]

यह वैश्वीकरण की नई व्याख्या है, जिसके अंतर्गत महात्मा गाँधी समूचे संसार के लिये एक आदर्श जीवन पद्धति का आविष्कार करते दिखाई देते है। महात्मा गाँधी का प्रयास देश और काल की सभी सीमाएं लांघकर आज वैश्वीकरण के इस कठिन समय में भी प्रासंगिक है। गाँधीजी के जीवन दर्शन की उपादेयता सिर्फ भारत के लिये ही नहीं, वरन् उन सभी देशों के लिये है जहां वैश्वीकरण ने बाजारवाद का विस्तार किया है और मनुष्य को मनुष्य बने रहने से रोकने की कोशिश की है। गाँधीजी के सभी विचार उनके अनुभवों से निकले है। उनकी सफलता इस बात में है कि वे जो सोचते है वह कहते है और जो कहते है वह करते है। कथनी और करनी की दूरी वैश्वीकरण की एक बड़ी चुनौती है।

इतनी ही बड़ी चुनौती है आतंकवाद। आर्थिक समृद्धि के अंतहीन लालच ने आतंकवाद को प्रोत्साहित किया। संसार में फैले हुए हर प्रकार के आतंकवाद चाहे वह धार्मिक कट्टरपंथियो का आतंकवाद हो या किसी राष्ट्र का आंतरिक आतंकवाद सभी का जवाब गाँधीजी का अहिंसा सिद्धांत ही है। उनका रास्ता निर्माण और विकास का रास्ता है। गाँधीजी का चिंतन संसार के प्रत्येक प्राणी को जोड़ता है। दूसरी और वैश्वीकरण केवल बाजारों का नेटवर्क मजबूत करता है। न जाने कितने प्रकार की असंगतियों के बीच महात्मा गाँधी का व्यक्तित्व और चिन्तन एक सुनिश्चित दिशा निर्देश देता है। निरंतर बदल रही दुनिया में वैश्वीकरण एक जीवन्त प्रक्रिया है और एक गंभीर चुनौती भी। वैश्वीकरण की प्रक्रिया तो पूर्णतः नहीं रोकी जा सकती, लेकिन वैश्वीकरण की चुनौतियों का सामना महात्मा गाँधी के विचारों के सहारे संभव है। हमें स्वीकारना होगा कि गाँधीजी अतीत में थे, वर्तमान में है और भविष्य में रहेंगे। वैश्वीकरण की चुनौतियाँ उनके महत्व को विचलित नहीं कर सकती।

उत्तर आधुनिकता के संदर्भ में गाँधी

उत्तर आधुनिकता का सिद्धांत विगत दो दशकों से अनेक विषयों में प्रभावी तरीके से विकसित हुआ है। जिस प्रकार आधुनिकता के अंतर्गत समाज,

संस्कृति, आर्थिकी व व्यक्ति का परिवर्तित व भिन्न स्वरूप उभरकर आया, उसी प्रकार उस स्वरूप को मानवतावादी मूल्यों से जोड़ने का काम उत्तर आधुनिकता ने किया। आधुनिकता ने तर्क को महत्व दिया तो उत्तर आधुनिकता ने मानवीयता को। गाँधीजी के विचार उत्तर आधुनिकता के पूर्व प्रकाश में आये थे। गाँधी के विचारों की व्याख्या में विविध आयाम है। गाँधीजी ने इस बात को प्रमाणित किया कि विचारों के निर्माण में बौद्धिक खुलेपन के साथ–साथ मन की संवेदना व चित्त की निर्मलता भी आवश्यक है। गाँधीजी ने तात्कालिक स्थितियों को बौद्धिक संवेदनशीलता के आधार पर विश्लेषित किया व उनकी विचारात्मक प्रतिक्रियाओं को क्रिया के स्तर पर प्रयोग किया। इस दृष्टिकोण से उनके विचार क्रियात्मक स्तर पर महत्वपूर्ण एवं व्यावहारिक माने गये है। गाँधीजी की मानसिक उदारता इस बात से परिलक्षित होती है कि उन्होनें विभिन्न धर्मो, लेखकों से विभिन्न आयामों को अंगीकार कर स्वयं के विचारों की प्रस्तुति की। इस्लाम धर्म से उन्होनें बन्धुत्व का विचार लिया, जैन धर्म से अहिंसा का, बौद्ध धर्म से समता व ईसाई धर्म से सेवा का, रस्किन, थोरो व टॉलस्टाय के विचारों से भी वे प्रभावित हुए और उन्होनें सत्याग्रह, प्रेम, सत्य के विचारों को अलग–अलग स्रोतों से अंगीकार किया। गाँधीजी ने सदैव इस बात पर बल दिया कि हमें अपने मस्तिष्क की खिड़कियाँ सदैव खुली रखनी चाहिए, जिससे विभिन्न दिशाओं से ताजा हवाएँ प्राप्त हो सके और बौद्धिक निर्मलता को संजोया जा सके।[61]

गाँधीजी के सभी विचारों का संबंध व्यवहारगत क्रियाओं से जुड़ा था। विचारों को क्रिया के स्तर पर संभाव्य बनाने के लिए गाँधीजी ने अपने हर विचार का स्वयं के जीवन में परीक्षण व उपयोग किया। उनकी आत्मकथा सत्य के प्रयोग का लेखा–जोखा है, जो कि उनके आदर्श व्यवहारगत क्रियाओं पर आधारित है। उनके व्यक्तित्व का विश्लेषण करे तो यह स्पष्ट होता है कि उनकी कथनी और करनी में कहीं कोई अंतर नहीं था। गाँधी ने वहीं कहा, जो सोचा और वही किया जो कहा।

गाँधीजी ने साध्य और साधन दोनों को समान महत्व दिया। सही लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये सही साधनों का उपयोग गाँधीजी के विचार–पुँज का आवश्यक तत्व रहा है। सत्य व अहिंसा उनके जीवन के आधार स्तम्भ थे। अपनी आत्मकथा में गाँधीजी ने जीवन की प्रत्येक घटना का सत्य निरूपण किया। उनकी आत्म–स्वीकृति उनकी सत्यनिष्ठा का परिणाम थी। उन्होनें जीवन में शील, नैतिकता, श्रम को अपनाया। उनकी पोशाक हाथ से बनाये गये धागों से बनी होती थी। सादगी व अपरिग्रह, जीवन व्यवस्था, समय सदुपयोग, पर–सेवा, देश–प्रेम, मानव–धर्म, सर्वधर्म समभाव् उनके दैनिक क्रियाकलापों में परिलक्षित होते थे। रेल के तीसरे श्रेणी में सफर करके वे स्वयं को आम आदमी से जोड़ते थे। उनकी जीवन शैली उनका दर्शन था। लौकिक व अलौकिक के भेद को मिटाकर गाँधीजी ने जीवन के समग्र दृष्टिकोण व विश्व दृष्टि की प्रस्तुति दी।

गाँधीजी का मानना था कि प्रकृति व्यक्ति की हर आवश्यकता की पूर्ति तो कर सकती है पर हर लालच की नहीं। उनके लिये प्रकृति जीवन के विभिन्न आयामों से जुड़ी हुई है। उन्होनें स्वराज की अवधारणा को अहिंसा व सत्य के आधार पर उपनिवेशवाद से शांतिपूर्ण संघर्ष के द्वारा जोड़ा। वर्तमान संदर्भ में गाँधीजी के न्यासिता के विचार के माध्यम से शोषण की प्रक्रिया का अंत हो सकता है व कार्य–कौशल भी अधिक सुचारू रूप से सम्पन्न किया जा सकता है। शराबबंदी के लिये चलाये गये आंदोलनों में शराब के परिणामों को लेकर गाँधीजी ने जो उल्लेख किया है वह कि, नशे से गरीब व निम्न वर्ग के व्यक्तियों को आर्थिक, मनोवैज्ञानिक एवं पारिवारिक क्षति भोगनी पड़ती है। उनके ये विचार वर्तमान में प्रासंगिक है क्योंकि समाज के अधिकांशतया लोग आज नशे की लत से जूझ रहे है एवं सामाजिक विघटन का कारण बन रहे है।

'अधिकतम लोगों का अधिकतम भला' के सिद्धांत को नकारते हुए गाँधीजी ने अपने सर्वोदय सिद्धांत के माध्यम से सभी के उदय की बात कही है। उनका यह विचार वर्तमान में इस दृष्टि से प्रासंगिक है कि यह सर्वजन

हिताय, सर्वजन सुखाय की भावना पर आधारित है। गाँधीजी ने भारत के बारे में जो स्वप्न देखा था उसका उल्लेख करते हुए कहा कि, ''मेरे सपनों का भारत वह होगा जहाँ गरीब यह महसूस करें कि यह उनका देश है, जिसके निर्माण में उनकी आवाज का महत्व है, जहाँ विभिन्न समुदाय सद्भाव व प्रेम से रहते है। जहाँ पुरूष व महिलाओं में बराबरी का दर्जा है, जहाँ अन्य देशों के साथ शांति के संबंध है और जहाँ न तो कोई शोषण करता है और न ही कोई शोषित होता है।'' उनके यहीं विचार वर्तमान समय की आवश्यकता की दृष्टि से प्रासंगिक कहे जा सकते है।[62]

गाँधीजी ने उत्तर–आधुनिकता के उन तत्वों को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है जिसका संबंध मानवतावादी संरचना से है। इसलिये उनके सहयोग, मानवता, भावना व समग्रता संबंधी विचार प्रासंगिक है। उन्होनें बताया कि मनुष्य के जीवन में बौद्धिक, मनोवैज्ञानिक, शारीरिक आयामों के अतिरिक्त आध्यात्मिक आयाम भी अभिन्न अंग है।

गाँधीजी के विचारों का खुलापन इस बात का द्योतक है कि विचारों के प्रवाह में समयानुरूप परिवर्तन होता रहे व उपयुक्तता के आधार पर विचारों का निरूपण व प्रतिपादन होता रहे। गाँधीजी का दर्शन प्रासंगिक है क्योंकि उसमें संदर्भ व सार्वभौमिकता को जोड़ा गया है। उन्होनें पुरूष व प्रकृति, लौकिक व अलौकिक, लघु स्तरीय व वृहद स्तरीय आयामों में विरोधाभास नहीं देखा। इस दृष्टि से गाँधीजी के विचार व दर्शन परंपरा, आधुनिकता, उत्तर–आधुनिकता व भविष्य की दृष्टि से समन्वय का कार्य करते है।

नागरिक जीवन : अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ में प्रासंगिकता

नई पीढ़ी के बहुत से लोग अक्सर बातचीत में एक–दूसरे से पूछते है कि गाँधीवादी विचारधारा की वर्तमान में सार्थकता क्या है ? महात्मा गाँधी ने कहा था– आँख के बदले आँख का प्रतिशोध भरा कानून अगर विश्व में लागू हो गया तो, पूरा विश्व अंधा हो जायेगा। वर्तमान में जब घृणा और बदले की मानसिकता व्यक्तिगत स्तर के ऊपर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आ चुकी है,

आतंकवाद चरम् पर है, परंतु आतंकवाद का जवाब भी आतंकवाद से ही दिया जा रहा है, बदला लेने के लिए किसी भी देश की अर्थव्यवस्था ध्वस्त कर वहाँ के बच्चों तक को दवाइयों और खाने से वंचित कर दिया जा रहा है, तब ऐसे समय में गाँधी विचारधारा और अधिक प्रासंगिक लगने लगी है।

महात्मा गाँधी से पूरा विश्व प्रभावित रहा है। विश्व स्तर पर विशेषकर पश्चिमी प्रेस में महात्मा गाँधी पर आधारित जो समाचार प्रकाशित हुए है, उन्हें देखे तो गाँधी विचारधारा का विश्व मे कितना प्रभाव है, इसका अंदाजा हमें हो सकता है। ग्यारह जनवरी 2003 को इलीनोयस (अमरीका) के गवर्नर ने 167 मृत्युदण्ड प्राप्त कैदियों की सजा उम्रकैद में बदल दी। अपने फैसले में उन्होनें महात्मा गाँधी के विचार 'आँख के बदले आँख' का उल्लेख भी किया है और कहा कि वे नेल्सन मंडेला और बिशप टूटू से प्रभावित होकर यह निर्णय कर रहे है।[63] न्यूयॉर्क टाइम्स ने 25 दिसंबर, 2003 की अपनी रिपोर्ट में कहा कि लंदन से एक पूरी बस भरकर कार्यकर्ता इराक के लिये रवाना हुए, जहाँ वे निर्दोष नागरिकों की रक्षा के लिये जा रहे है।[64]

इसी प्रकार नार्वे में एक इंस्टीट्यूट है जो कोसोवो और बोस्निया में काम करने के लिए शांति रक्षकों को प्रशिक्षण दे रहा है। इस प्रशिक्षण में महात्मा गाँधी पर एक पूरा पाठ्यक्रम है। केलिफोर्निया में एक स्कूल टीचर जॉन कीगले ने अपने आपको एक पेड़ से चैन से बांध रखा है। वह 1 नवंबर, 2002 से इसी पेड़ पर बने हुए एक प्लेटफार्म पर रह रहा है। यह एक 400 वर्ष पुराना ओक वृक्ष है, जिसे वह कटने से बचाना चाहता है। पुलिस ने जब बलपूर्वक 11 जनवरी, 2003 को उसे हटाया तो उसने कहा कि मैं यह सब सिर्फ महात्मा गाँधी के अहिंसा धर्म में विश्वास रखने के कारण कर पाया। यह उदाहरण हमें गाँधीजी के पर्यावरण संरक्षण की प्रासंगिकता दिखाता है।[65]

वहीं दक्षिण अफ्रीकी सरकार ने भी प्रतिष्ठित राष्ट्रीय पुरस्कार की घोषणा की है। यह पुरस्कार दक्षिण अफ्रीका के बाहर के उन लोगों को दिया जायेगा जिन्होनें स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान एवं लोकतंत्र की स्थापना के बाद दक्षिण

अफ्रीका के लोगों का साथ दिया था। प्रथम पुरस्कार की घोषणा की गई और उसमें जो नाम थे, वे थे– महात्मा गाँधी, ओलोफ पाल्मे एवं कैनेथ काउंडा। शायद पुरस्कार देने वालो के मन में यह विचार रहा था कि अपनी मृत्यु के बाद भी महात्मा गाँधी एक शक्ति थे और भारत ने दक्षिण अफ्रीकी स्वतंत्रता संघर्ष के लिये जो भी कुछ किया, उसके मूल में गाँधीवादी विचारधारा ही थी।

इसी प्रकार पश्चिमी जगत ने गाँधीजी को खेलों से भी जोड़ दिया है। इंग्लैण्ड में एक ब्रिटिश कंपनी ने एक फुटबॉल टी–शर्ट बनाई है। इसमें सीने पर गाँधीजी की तस्वीर छपी है। कंपनी के अनुसार उन्होनें गाँधीजी को इसलिए चुना क्योंकि वे अहिंसक फुटबॉल को बढ़ावा देना चाहते है।

तो हम देखते है कि महात्मा गाँधी को विश्व समुदाय कितने विविध रूपों में आदर देता है– शांतिदूत, बराबरी का मसीहा, स्वतंत्रता नायक, पर्यावरण रक्षक और एक स्वस्थ खिलाड़ी। अतः यह दुर्भाग्यपूर्ण ही होगा यदि घृणा और बदले कि भावना से भरी राजनीति के कारण हम महात्मा गाँधी को अप्रासंगिक मानने लगे और हमारी अगली पीढ़ी को गाँधी विचारधारा को भी पश्चिम से आयात करना पड़े।

वैश्विक स्तर पर व्याप्त हिंसा, मतभेद, बेरोजगारी, महंगाई तथा तनावपूर्ण वातावरण में आज बार–बार यह प्रश्न उठाया जा रहा है कि गाँधी के सत्य व अहिंसा पर आधारित दर्शन और विचारों की आज कितनी प्रासंगिकता महसूस की जा रही है? अमेरिका पर 9/11 को हुए आतंकवादी हमले ने दुनिया की राजनीति का रूख ही बदलकर रख दिया। अमेरिका की उपसाम्राज्यवादी नीतियों से क्षुब्ध एवं अमेरिकी विदेश नीति से स्वयं को दुःखी बताने वाले आतंकवादियों ने अमेरिका की समृद्धि का प्रतीक समझे जाने वाले न्यूयॉर्क शहर की प्रमुख इमारत वर्ल्ड ट्रेड सेंटर पर हमला बोलकर जिस प्रकार लगभग 5000 बेगुनाह लोगों को अपना निशाना बनाया, वह वास्तव में एक क्रूरतम एवं जघन्य अपराध था। ऐसा जघन्य अपराध करने वालों को निःसंदेह कड़ी सजा मिलनी चाहिए।

9/11 के आतंकी आक्रमण के बाद तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज डब्ल्यू. बुश द्वितीय ने कुछ ऐसा ही किया। उन्होनें इसे अमेरिकी स्वाभिमान पर हमला मानते हुए आतंकवाद के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। बुश ने उस समय यहीं कहा कि दुनिया के देशों के समक्ष इस समय केवल दो ही रास्ते है, या तो वे मेरे साथ है, या आतंकवाद के साथ। तीसरा कोई रास्ता नहीं है। जाहिर है कि शांतिप्रिय संसार की मनोकामना करने वाले विश्व के अधिकांश देश अमेरिका पर आए संकट के अवसर की इस गंभीरता को समझते हुए राष्ट्रपति बुश के साथ हो लिए। परंतु दुनिया के शांतिप्रिय देशों द्वारा अमेरिका का साथ दिए जाने का मकसद मात्र 'आतंकवाद के विरूद्ध युद्ध' की घोषणा का समर्थन करना था। किन्तु उपरोक्त कल्पना अधूरी रह गई और बड़े आतंकवादी ओसामा–बिन–लादेन को बुश के पूरे शासनकाल के दौरान पकड़ा नहीं जा सका।

अगली बार जब अमेरिका में राष्ट्रपति के चुनाव नवंबर 2008 में संपन्न हुए, तो इन चुनावों में जहाँ एक ओर राष्ट्रपति बुश की नीतियों का अनुसरण करने वाले जॉन मैकेन चुनाव मैदान में आतंकवाद के विरूद्ध युद्ध में अपनायी जाने वाली आक्रामक नीतियों का समर्थन कर रहे थे, वहीं एक अन्य अश्वेत प्रत्याशी बराक हुसैन ओबामा, महात्मा गाँधी द्वारा बनाये गये सत्य, शांति एवं अहिंसा के मार्ग पर चलते हुए दुनिया में शांति स्थापित करने की बात कर रहे थे। आखिरकार अमेरिका में नवंबर 2008 में संपन्न हुए चुनावों में बराक ओबामा भारी अंतर से विजयी घोषित हुए।

अमरीकी राजनीति में आये इस क्रांतिकारी परिवर्तन के पीछे आखिर क्या रहस्य था? जॉर्ज बुश के तथाकथित 'आतंकवाद विरोधी युद्ध' से ऊबकर आखिर जनता क्यों शांति की बात करने वाले ओबामा के समर्थन में एकमत हो गई? इसी ऐतिहासिक परिवर्तन ने एक बार फिर यह प्रश्न अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खड़ा कर दिया कि कहीं आज के हिंसापूर्ण वातावरण में महात्मा गाँधी के आदर्शो की पुनः प्रासंगिकता तो महसूस नहीं की जा रही है?

बराक ओबामा महात्मा गाँधी के उस महान् दर्शन के कायल है जिसके तहत् गाँधीजी ने विश्व समाज को किन्हीं दमनकारी नीतियों का विरोध शांतिपूर्ण तरीके से करने हेतु प्रेरित किया था। ओबामा यह स्वीकार करते है कि उन्होनें सदैव गाँधीजी को अपने आदर्श एवं प्रेरणा के रूप में देखा एवं समझा है।

आज विश्व के किसी भी देश में शांतिमार्च का निकलना हो या अत्याचार व हिंसा का विरोध किया जाना हो, या हिंसा का जवाब अहिंसा से दिया जाना हो, ऐसे सभी अवसरों पर पूरी दुनिया को गाँधीजी की याद आज भी आती है और हमेशा आती रहेगी। अतः यह कहने में हर्ज नहीं कि गाँधीजी, उनके विचार, उनका दर्शन तथा उनके सिद्धांत कल भी प्रासंगिक थे, आज भी प्रासंगिक है तथा विश्व में सदैव प्रासंगिक रहेंगे।

''गाँधीजी का देहान्त हो गया किन्तु गाँधीवाद उस समय तक जीवित रहेगा जब तक तारें चमकते है और सागर मचलते है।'' स्वर्गीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के इन शब्दों में गाँधीवाद के स्थायी प्रभाव की उचित अभिव्यक्ति हुई है। उनका राजनीति और नीतिशास्त्र को मिला देना और राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान के लिये सत्य और अहिंसा के आदर्शो पर बल देना, गाँधीजी की राजनीतिक विचारों को दी हुई एक अन्यतम् देन समझी जानी चाहिए। उन्होनें संसार के सामने यह भली प्रकार सिद्ध कर दिया कि एक शस्त्रहीन पराधीन राष्ट्र लुटेरे साम्राज्यवादियों के चंगुल से अहिंसा और सत्य द्वारा मुक्त हो सकता है। भौतिकवाद और अहम्–प्रतिअहम् के युग में गाँधीवाद ही इस अंधकारमय और अव्यवस्थित संसार के लिये आशा की एक किरण है। इसी से मानव सभ्यता जो ज्वालामुखी के मुख पर खड़ी है, बच सकती है। वास्तविक क्रांतिकारी वहीं है जो मानव प्रकृति में क्रांति उपस्थित करने की क्षमता रखता हो। वह आने वाले युग का स्वर है। उसका नहीं जो द्रुतगति से मिट रहा है। वह उस घात विसंगति को दूर करने के लिये प्रयत्नशील है जो मानव जैसा है और जैसा होना चाहिए के मध्य स्थित है। वह वास्तव में ऐसी

भूमिका के लिये यत्नशील है जो शांतिदूत की है उस मानसिक शांति की जो मानव की पहुँच से दूर चली जाती है।[66]

29 अगस्त 1947 को राजकुमारी अमृतकौर से कहे गाँधीजी के शब्द बड़े स्पष्ट और मुखर है, ''तुम्हें मानवता में विश्वास नहीं खोना चाहिए। मानवता एक समुद्र है। कुछ बूंदे मैली हो जाये तो समुद्र मैला नहीं हो जाता है। मृत्यु के क्षण तक तुम्हें यत्नशील रहना है कि समुद्र मैला न हो।''[67] **डॉ. राधाकृष्णन के शब्दों में,** ''ऐसे संसार में जो घृणा में प्रमत्त है, सद्भावना हीनता के कारण खंडित है, गाँधी प्रेम और सद्भाव के अमर प्रतीक है। वह इतिहास में युग युगों से जुड़े है।''

गाँधीजी के अपने शब्दों में उनका जीवन मानवता के लिये एक संदेश है, उस मानवता के लिये जो अपने जीवन के अंतिम चरण में प्रतीत होती है। संयुक्त राज्य अमेरिका के एक भूतपूर्व विदेश मंत्री, जॉर्ज मार्शल ने कहा था, महात्मा गाँधी संपूर्ण मानव चेतना के प्रवक्ता है। भारत के आजीवन मित्र रहने वाले सर स्टेफर्ड क्रिप्स ने गाँधीजी की हत्या पर कहा था, ''मैं किसी भी समय के, निःसंदेह निकट अतीत के, किसी भी व्यक्ति को नहीं जानता जिसने भौतिकवाद पर आत्मा की शक्ति के प्रभुत्व को इस निर्णायक रूप में प्रदर्शित किया हो।'' **डॉ. राधाकृष्णन के शब्दों में,** ''मानव भावना में जो भी उदात्ततम् है वह उसको हमारे समक्ष प्रस्तुत करते है। उन्होनें मानवीय प्रयासों के शाश्वत् महत्व के प्रति अपने विश्वास के द्वारा मानव अस्मिता को ज्योतित किया।''[68]

यद्यपि निराशावाद के भविष्य वक्ताओं ने गाँधीजी की विचारधारा को अव्यवहारिक आदर्श बताया है तथापि इसका महत्व कम नहीं किया जा सकता। केवल गाँधीवादी आदर्श ही सभ्यता को पूर्णतः लुप्त होने से बचा सकते है। **बायड ओरर ने ठीक ही कहा है,** ''क्या यह संभव है कि यह महान् सिद्धांत, यह अद्भुत आदर्श विश्वव्यापी स्तर पर प्रयुक्त हो। मैं समझता हूँ कि समय आ गया है कि इनका प्रयोग हो सकता है और होना चाहिए और इनका प्रयोग होगा, क्योंकि लोगों का यह अनु भवहै कि आधुनिक विज्ञान तथा वैज्ञानिकों द्वारा

छोड़ी गई विपुल संहार शक्ति से उनकी आशा नहीं बंधती। यदि विज्ञान का प्रयोग एक हिंसात्मक विश्वयुद्ध के लिए किया गया तो सभ्यता समाप्त हो जाएगी।'' इससे इंकार नहीं हो सकता कि हिंसा का कोई अंत नहीं। यह एक पापमय चक्र है। एक गाली का उत्तर मुक्के से और मुक्के का ठोकर से मिलता है। ठोकर का स्थान तलवार लेती है और अंत में उद्जन बम आ जाता है। इस प्रकार मानवता का अस्तित्व ही इस बात पर निर्भर है कि संसार के राष्ट्र एक–दूसरे से किस प्रकार का व्यवहार करते है। यदि सहृदयतापूर्वक अहिंसात्मक उपायों का प्रयोग किया जाये तो एक दरिद्रता मुक्त, रोगमुक्त, सत्ता के लिए तृष्णा से मुक्त और ऐसे विश्व का जहाँ सांस्कृतिक दृष्टि से उन्नत और आध्यात्मवृत्ति वाले लोग रहते है, उदय हो सकता है। **डॉ. राधाकृष्णन के शब्दों में,** ''गाँधीजी सदा नैतिक और आध्यात्मिक क्रांति के ऐसे संदेशवाहक के रूप में याद किए जाएंगे जिनके बिना इस कठिन उद्विग्न संसार को शांति नहीं मिलेगी।[69]

गाँधी दर्शन की चाहे कितनी भी आलोचनाएँ की जाए तब भी गाँधीजी के दर्शन का प्रभाव समाप्त नहीं हो जाता। वर्तमान भारत में ही नहीं विश्व की राजनीति एवं समाज में गाँधी दर्शन की पताका लहरा रही है। गाँधी दर्शन भौतिक एवं सुव्यवस्थित दर्शन है। इस दर्शन में सात्विकता एवं आध्यात्मिकता निहित है जो कि मानव को आत्मज्ञान व अनुशासन का ज्ञान प्रदान करती है। इसमें मानवतावाद, नैतिकता, प्रेम, सहानुभूति, सेवा एवं समर्थन की भावना निहित है। यहीं वह आधार है जिस पर सृष्टि टिकी हुई है एवं मानव ने अपना विकास किया है। गाँधी दर्शन एक ऐसी दवा है जो विश्व में व्याप्त हिंसा, घृणा, अविश्वास तथा मानवीय क्रूरताओं जैसी घातक बीमारियों का इलाज कर सकता है। वर्तमान विश्व में कई उदाहरण हमारे सामने दिखाई देते है जिनमें विश्व में आतंकवादी गतिविधियाँ, उनके द्वारा अपनाये जाने वाले विनाश के तरीके, जनता पर अत्याचार, नरसंहार, मानवाधिकारों का हनन, असहाय लोगों को बंधक बनाना एवं राजनेताओं का मूकदर्शक बने रहना आदि। जिनका निराकरण

गाँधीवादी उपायों से संभव है। आवश्यकता इस बात की है कि हम सभी को बहुत धैर्य एवं धीरज से काम लेना होगा।[70]

गाँधी में नेतृत्व कौशलता कूट–कूटकर भरी हुई थी। उनकी सत्य व अहिंसा की शक्ति के आगे महानतम साम्राज्यवादियों ने घुटने टेक दिये। उनके विरोधी भी उनकी प्रशंसा करते थे। दक्षिण अफ्रीका में उनके कट्टर विरोधी जनरल स्मट्स ने कहा था कि, ''गाँधीजी विश्व के महान व्यक्ति है।'' गाँधीजी की नेतृत्व क्षमता पर वैज्ञानिक एवं परमाणु शक्ति के पितामह **अलबर्ट आइंस्टीन के शब्दों में,** '' गाँधीजी ने यह प्रदर्शित कर दिया कि एक शक्तिशाली मानव समूह को चालाकी या चालबाजी द्वारा ही नहीं, जैसा कि सामान्य राजनीति में किया जाता है अपितु जीवन के श्रेष्ठ नैतिक आचरण के उदाहरण द्वारा संगठित किया जा सकता है। संपूर्ण नैतिक पतन के युग में गाँधी ही एक ऐसे राजनीतिज्ञ थे जो राजनीतिक क्षैत्र में उच्च मानवीय संबंधों पर दृढ़ रहे।''

गाँधीजी के कुछ विचार जैसै कि राज्य का विरोध, श्रम के रूप में कर, मानव को केवल सद्गुणी मानना, केवल पैतृक व्यवसाय अपनाना, बड़े उद्योग–धन्धो का विरोध, राष्ट्रीयता की उपेक्षा आदि सभी अर्थो में स्वीकार नहीं किए जा सकते। उनका यह विचार कि शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो भी स्वीकारने योग्य नहीं है, लेकिन गाँधीजी के अन्य विचारों की वर्तमान में भारत को ही नहीं वरन् संपूर्ण विश्व समाज को महत्ती आवश्यकता है। डॉ. महादेव प्रसाद शर्मा के शब्दों में, ''गाँधी दर्शन विशुद्ध भारतीय उपज है। विश्व के लिये यदि भारत का कोई संदेश है तो वह गाँधी दर्शन में निहित है।'' वर्तमान विश्व की समस्याओं जैसै कि अनैतिकता, हिंसा, भ्रष्टाचार, घृणा, आतंकवाद, वैमनस्य, अमानवीयता, अविश्वास, गरीबी, बेरोजगारी आदि का समाधान गाँधी दर्शन के तत्व क्रमशः नैतिकता, अहिंसा, पवित्रता, प्रेम, दया, मानवीयता, विश्वास, सत्याग्रह व रोटी के श्रम जैसै सिद्धांतों का प्रभावी क्रियान्वयन करके कर सकते है। वर्तमान भौतिकवादी युग में मानव विचलित हो गया है। उसका आत्मविश्वास टूट गया है। उसका आत्मबल व अनुशासन असंतुलित हो गया है। अतः वर्तमान

भौतिक बुराईयों का अंत मानव को गाँधी दर्शन के आत्मज्ञान, आत्मसाक्षात्कार, आत्मबल व आत्मानुशासन में तथा ईश्वर के प्रति ध्यान के सिद्धांत में ही मिल सकता है।[71]

वर्तमान की अनैतिक राजनीति व राजनीति में नैतिक मूल्यों के पतन जैसी समस्या का स्थायी समाधान गाँधीजी के दर्शन 'राजनीति के आध्यात्मिकरण' से प्राप्त हो सकता है। वर्तमान में पूरा विश्व धार्मिक वैमनस्य की आग में जल रहा है, इस भीषण आग पर गाँधीजी के धर्मनिरपेक्षता रूपी पानी से ही काबू पाया जा सकता है। वर्तमान विश्व शस्त्रीकरण की प्रतियोगिता में है। अनेकों जगह परमाणु परीक्षण, आतंकवादी संगठनों द्वारा भीषण व घातक बमों का प्रयोग हो रहा है। वर्तमान में बमों के प्रयोग से अफगानिस्तान, ईराक, लेबनान आदि कई संस्कृतियों को समाप्त किया जा चुका है। अमेरिका पर आतंकवादी हमला, इंग्लैण्ड, पेरिस में जगह–जगह बम विस्फोटो ने मानव के कोमल मन को दहला दिया है। संपूर्ण विश्व की मानवीय सभ्यता व राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय जनमत यहीं चाहता है कि इस भीषण नरसंहार व मानवीय क्षति से मुक्ति मिले। 14 मार्च 2015 को ब्रिटेन के ऐतिहासिक पार्लियामेंट स्क्वायर पर नेल्सन मंडेला तथा विंस्टन चर्चिल की प्रतिमाओं के बगल में स्थापित की गई महात्मा गाँधी की कांस्य प्रतिमा विश्व शांति की ही सूचक है।[72] ऐसे में हमें उपरोक्त समस्या का समाधान गाँधी दर्शन के अहिंसा, प्रेम व मानव मात्र के प्रति समर्पण भाव से सेवा व मानव की सुरक्षा व सम्मान जैसै सिद्धांतों में ही दिखाई देता है।

गाँधीजी का चिन्तन : वर्तमान अप्रासंगिकता का प्रश्न

गाँधीजी ने अपने जीवन काल में जो कुछ किया और जो रास्ता बतलाया उसका महत्व किसी भी स्थिति में कम नहीं हो सकता। उनके जीवनकाल में ही उनका विरोध करने वाले अनेक लोग थे। उनका होना स्वाभाविक भी था क्योंकि स्वयं गाँधी ने उनका विरोध किया था। ब्रिटिश साम्राज्य के समर्थक, देश का विभाजन चाहने वाले, हिन्दू राष्ट्र की मांग करने वाले, हिंसा को साधन मानने

वाले, पूँजीवादी और साम्यवादी व्यवस्था में विश्वास रखने वाले और धार्मिक दुराग्रह रखने वाले लाखों लोग तब भी गाँधीजी के विरोधी थे। हजारों लोग तब भी और आज भी गाँधीजी के विचारों और कार्यक्रमों की मजाक बनाने में नहीं हिचकिचाए मगर गाँधी कभी विचलित नहीं हुए और अकेले या जो भी साथ आया, उसको लेकर अपने रास्ते पर आगे बढ़ते गये।

गाँधी आज फिर अकेले पड़ गये है। अब न तो कोई जवाहर लाल नैहरू, वल्लभभाई, मौलाना आजाद, सुशीला नैयर, प्यारेलाल, जयप्रकाश नारायण, विनोबाभावे या कुमारप्पा है और न माउन्टबेटन, आइंस्टीन, रवीन्द्रनाथ टैगोर, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी या घनश्याम दास बिड़ला जो उनकी सलाह मांगे। अब तो ज्यादातर लोग वे है जो उनकी मूर्तियां लगाने, उनकी तस्वीरें छपवानें, या उनकी 'जय' के नारे लगाकर सत्ता, लाइसेन्स या मुनाफा बटोरनें को उत्सुक है। थोड़े बहुत लोग वे भी बचे है जो उन्हें देश–विभाजन का जिम्मेदार मानने या वैज्ञानिक प्रगति का विरोध करने वाला मानने की भूल कर बैठते है।

मूर्तियाँ खण्डित हो रही है, तस्वीरों पर धूल जम रही है और गाँधीजी केवल नोटों पर छपने के कारण पहचाने जा रहे है। गाँधीजी की आवाज तो लोग भूल ही गये है, मगर उनका बोला और लिखा उन किताबों में कैद हो गया है जो पढ़ी नहीं जाती। गाँधीजी के विचार और कार्यक्रम उन लोगों के पास रह गये है, जो गाँधीजी के नाम से जुड़कर अपना अस्तित्व कायम रखे है।

किन्तु अब तो यह यकीन करना भी कठिन हो गया है कि गाँधीजी इस धरती पर पैदा भी हुए थे। उनकी प्रत्येक बात से हम अपने को दूर कर रहे है। विश्व शांति की बात तो कर रहे है, मगर सेना, सुरक्षा, परमाणु शक्ति और अंतरिक्ष अनुसंधान पर अरबों रूपया व्यय कर रहे है। सत्य की खोज में लगे है और अपने भक्तों व परिवार के सदस्यों से ही झूठ बोल रहे है। विज्ञापनों में बड़े अक्षरों व तस्वीरों में जो लिखते है, उसका अनुवाद पढ़े न जा सकने वाले छोटे अक्षरों में छापते है।

राजस्व और अनुदान की चोरी को चोरी नहीं मानते। खादी स्वावलंबन के बजाय निर्यात का आधार हो गई है घरों में वाहन रखने की जगह नहीं, शहरों में बस स्टैण्ड नहीं मगर अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे तैयार हो रहे है। बकरी को पालना मुश्किल है, यंत्रीकृत डेरियों का 'पेकेज्ड दूध' पीना होगा। नई सभ्यता, संस्कृति, शिक्षा प्रणाली, वैश्वीकरण, उदारीकरण, नीजिकरण, वैज्ञानिक प्रगति तथा राजनैतिक रणनीतियों के चक्रव्यूह में गाँधीजी के उभरकर खड़े रहने की संभावना बहुत कम है।

गाँधीजी के राजनीतिक और नैतिक दोनों प्रकार के विचारों ने कई आलोचकों की कड़ी आलोचना को भी निमंत्रण दिया है और सी. ई. एम. जौड जैसै प्रबल आलोचकों को यह कहने को उकसाया, ''गाँधीजी एक–तिहाई राजनीतिज्ञ है, एक–तिहाई महात्मा है और एक–तिहाई मनुष्य है।'' पाश्चात्य आलोचक तो गाँधीजी को मात्र एक काल्पनिक विचारक और हवा में उड़ने वाला आदर्शवादी मानते है। वे बलपूर्वक यह कहते है कि, गाँधीजी ने, जिनके आस–पास पावनता की शोभा थी, सोने के एक बुत की लोगों के दिलों में प्रतिष्ठा करने के लिए उसका मिट्टी का पांव दिखाया। इसकी प्रतिष्ठा ऐसे भारतीयों के दिलों में हुई जो पुष्टता देने वाले और क्षुधा निवारक भोजन की अपेक्षा अध्यात्म और आदर्शवाद के सहारे जीते है। उनकी इस अनुदारपूर्ण आलोचना के मुख्य लक्ष्य थे, आधुनिक स्थिति के लिये प्रयुक्त गाँधीजी की अहिंसा की संकल्पना, उनके आर्थिक सिद्धांत और एक वर्गहीन तथा राज्यहीन समाज का उनका स्वप्न।

आलोचकों की सम्मति है कि अहिंसा आणविक शस्त्रों द्वारा प्रस्तुत समस्याओं का कदाचित ही समाधान कर सकती है। आध्यात्मिक पुनर्जीवन, जैसा गाँधीजी समझते थे, अणु बम का उत्तर नहीं हो सकता। एक महात्मा के रूप में गाँधीजी आक्रमणकारी के विरूद्ध संघर्ष में 50 प्रतिशत जनता की बलि चाहते थे और 50 प्रतिशत लोगों को उसके विरूद्ध असहयोग करने को छोड़ देते है। यद्यपि इस प्रकार शत्रु को आने देने और उनकी तोपों का भाजन बनने

के लिए बिना प्रतिरोध किए अत्यधिक साहस की आवश्यकता है, तथापि देश की स्वतंत्रता इस प्रकार खतरे में पड़ जाती है। इस प्रकार की नीति का समर्थन करने वाली किसी सरकार को जनता सहन नहीं करेगी। एक भले और देवता स्वरूप मनुष्य के रूप में गाँधीजी अनुभव करते थे कि नीरू में भी हृदय था किन्तु, आधुनिक नीरू जो सत्ता के मद से उन्मत्त है और जिसमें विस्तारवाद की भावना प्रबल से प्रबलतर हो रही है, अपने निर्मम आक्रमण के समय, वह संकोच नहीं करेंगे कि आक्रांत देश के सारे मनुष्य मार दिये जाए। इसी प्रकार लोगों का असहयोग आंदोलन भी वह कहते है, कठोरतापूर्वक कुचल दिया जायेगा।[73]

यदि अंग्रेज भारत छोड़ने पर सहमत हुए तो उसका कारण यह नहीं था कि गाँधीवादी अहिंसात्मक तकनीक का उन पर प्रभाव पड़ा। द्वितीय महायुद्ध द्वारा उत्पन्न परिस्थिति, हिंसक क्रांतिकारियों की हिंसात्मक गतिविधियाँ, आजाद हिंद फौज का गठन, थल सेना, नौ सेना और वायु सेना में विद्रोह और अमेरिका एवं रूस जैसी महाशक्तियों का ब्रिटेन पर निरंतर दबाव, इन सभी बातों ने मिलकर गौरे साम्राज्यवादियों द्वारा भारतीय नेताओं को सत्ता सोंपने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस प्रकार गाँधीजी की अहिंसा की तकनीक ने लोगों को उत्साहित करने और उनमें ब्रिटिश नौकरशाही द्वारा जारी रखे गये उत्पीड़न के विरूद्ध विरोध की भावना जगाने की अत्यंत लघु भूमिका निभाई।

इसी प्रकार यह स्वीकार नहीं किया जा सकता कि अहिंसात्मक असहयोग ने अंग्रेजों का हृदय परिवर्तित कर दिया और अंग्रेज भारत छोड़कर चले गये। इसमें बड़ा संदेह है। वास्तव में अंग्रेज भारत से इसलिये गये कि उनके ऊपर दबाव पड़ा, इसलिये कि असहयोग ने शासन को सामान्य रूप में चलाना असंभव बना दिया, इसलिये नहीं कि उन्हें किसी प्रकार का कोई बोध प्राप्त हुआ।[74]

गाँधीजी का विचार था कि एक अहिंसक सैनिक, विरोधी का हृदय आत्मपीड़न द्वारा जीत सकता है और इस प्रकार हिंसा का आश्रय लिये बिना अपना उद्देश्य प्राप्त कर सकता है। आलोचकों की सम्मति है कि आज के

वैज्ञानिक युग में विरोधी 'दाँत के बदले दाँत' और 'आँख के लिये आँख' की भाषा समझता है, न कि तर्क और समझाने–बुझाने की भाषा। यह तथ्य कि भारत पाकिस्तानी आक्रांताओं के विरूद्ध अहिंसा का प्रयोग नहीं कर सका, इस बात को प्रकट करता है कि गाँधीजी की अहिंसा की संकल्पना को उनके अपने ही देश में कोई आधार नहीं मिला।

पंचशील और शांतिप्रियता की नीतियों के पालन से हमें दूसरों से उपहास और तिरस्कार ही मिला। जब साम्यवादी चीन ने इस क्षति के 62वे वर्ष में हमारी उत्तरी सीमाओं पर आक्रमण किया। इस प्रकार यह आग्रहपूर्वक कहा जाता है कि एक देश की सीमाओं और स्वतंत्रता की रक्षा अहिंसात्मक सत्याग्रहियों के दल का गठन करने से संभव नहीं है। इसके विपरीत एक सशक्त और भली प्रकार सज्जित सेना देश के भीतर का उपद्रव रोकने के लिए, बाहर से शत्रु का आक्रमण निष्फल करने के लिए किसी भी देश की अपरिहार्य आवश्यकता है।

वर्गहीन तथा राज्यहीन समाज का गाँधी का स्वप्न एक काल्पनिक विचार ही समझा जाता है। आधुनिक संदर्भ में उनके स्वप्न का समाज न ही व्यावहारिक है तथा न ही सम्भाव्य है। आलोचकों का मत है कि इस प्रकार का समाज देवताओं के उड़ने का ही उचित स्थान हो सकता है। यह बेचारे नश्वर मनुष्यों के चलने का उपयुक्त स्थान नहीं है। गाँधीजी स्वयं इस प्रकार के समाज की अव्यावहारिकता को स्वीकार करते थे क्योंकि उन्होनें साम्राज्यवाद और विकेन्द्रीकरण में विश्वास रखने वाले एक अहिंसक राज्य पर ही संतोष कर लिया था, किन्तु पंचायतों में जीवन संचार कर उन्हें अधिक अधिकार संपन्न करने का हमारा प्रयोग सफल नहीं हुआ है।

गाँधीजी का समाजवाद संबंधी विचार भी आलोचनाओं का शिकार हुआ है। एक ओर तो वे अपरिग्रह को, अहिंसा का आवश्यक गुण बताते है, दूसरी ओर वे न्यासिता का पक्ष पोषण करते है। इससे उन व्यक्तियों का भान होता है जिनके पास संपत्ति होती है। गाँधीजी पूँजीवादियों से अपने कर्मचारियों का

न्यासी बनने की आशा करते है। पूँजीवादी आदिकाल से ही शोषणकर्ता रहे है। उन्होनें सदा ही कठोर श्रम करने वालो के शोषण का यत्न ही किया है। वे कभी मानवीय भाव धारण कर श्रमिकों के साथ मनुष्यों जैसा व्यवहार नहीं करेंगे। एक समाजवादी राज्य में पूँजीवाद को बनाए रखना, भले ही न्यासी के रूप में सही,लेकिन समाजवादी राज्य के मूल उद्देश्य के प्रतिकूल ही है।

उनके आलोचक 'न्यासिता' को मात्र एक बहाना बताते है जो धनी व्यक्तियों के लिये एक आश्रय प्रदान करता है। उनके समाजवाद में सम्पत्तिधारी और संपत्तिहीन दोनों ही प्रकार के वर्गो के लिये स्थान है और इससे श्रेणी संघर्ष जारी रहने की संभावना है। गाँधीजी का सिद्धांत कि, ''प्रत्येक वस्तु परमात्मा की है और उसी से मिली है और इस प्रकार यह उसके सब बन्दों की है। किसी विशेष व्यक्ति के लिये नहीं है और एक व्यक्ति जिसके पास आवश्यकता से अधिक है, वह इस अतिरिक्त भाग के लिये भगवान के बन्दों का न्यासी होता है।'' एक ऐसा सिद्धांत है जो पूँजीवादियों के हृदयों में आमूल परिवर्तन होने पर ही सार्थक हो सकता है।[75]

इसके अतिरिक्त गाँधीजी द्वारा खादी और सादगी पर विशाल उद्योगों के स्थान पर बल देने को मात्र काल दोष ही कहा जाएगा। गरजते उद्योगों और विशालकाय मशीनों के आज के युग में, घरेलू दस्तकारियों पर बल देना पीछे अतीत की ओर जाने को ही कहने के समान है। निःसंदेह ग्रामीण क्षैत्रों में अतिरिक्त आय के लिये घरेलू उद्योगों की स्थापना स्वागत योग्य होगी, तथापि बड़े–बड़े आधुनिक उद्योगों का इसे स्थान देने से दरिद्रता आ जाएगी। आर्थिक स्वावलंबन केवल बड़े–बड़े उद्योगो की स्थापना से और अपने करोड़ो अर्धनग्न भूखे व्यक्तियों के दूसरों की सहायता पर हमारी निर्भरता न होने की दशा में ही प्राप्त हो सकता है।

एक समाजवादी के लिये यह दर्शन वंचना है, उसके अपने लिये और शोषित श्रमिक के लिये भी।[76] हॉरेस के शब्दों में, ''वह एक ऐसे समाजवादी है जो असंतुष्ट है।''[77] गाँधीजी ने बाद में अनुभव किया कि उद्योगो और यंत्र को

हमें स्थान देना ही होगा। अतः वे चाहते थे कि कुछ उद्योग लाभ की दृष्टि से न चलाये जाये। वे चाहते थे कि उनका प्रयोग लोगों के लाभ के लिये किया जाये। वे इन पर राज्य का नियंत्रण और स्वामित्व चाहते थे। गाँधीजी का यह पर्याप्त यथार्थिक दृष्टिकोण प्रतीत होता है। उद्योगों पर राजकीय नियंत्रण होने से भी नौकरशाही द्वारा अत्याचारों की संभावना रहती है। इससे पहल करने की भावना सीमित हो जाती है और उद्योगों को भी क्षति पहुँचती है। इसी प्रकार गाँधीजी का 'साधन तथा उद्देश्य' का सिद्धांत भी कठोर आलोचना का विषय रहा है। आज का राजनीतिज्ञ यदि अपने प्रयोजन को सिद्ध कर लेता है तो, वह सफल माना जाता है, भले ही साधन किसी भी प्रकार का हो। उद्देश्य यदि प्राप्त कर लिया जाये तो इससे स्वतः साधन का औचित्य सिद्ध हो जाता है। आज के राजनीतिज्ञ ने इसी सूत्र को पकड़ा हुआ है। फासिस्ट, मार्क्सवादी तथा साम्यवादी इसी के पक्षधर है। तथाकथित जनतंत्रवादी भी इसी विचार के है। डी. ई. स्मिथ कहते है, ''पूर्णतावाद तथा चरमवादिता के व्यापक ह्रास के इस युग में मनुष्य के लिये क्रांतिकारी अमूल परिवर्तन का महत्व है। ऐसी स्थिति में गाँधीजी के इस केंद्रीय विचार कि उद्देश्य से साधनों का महत्व अधिक है, को लोगों द्वारा स्वीकार किया जाना अधिकाधिक कठिन होता जा रहा है।

गाँधीजी द्वारा इस बात पर बल दिया जाना भी अप्रासंगिक है कि राजनीति से धर्म को अलग नहीं किया जा सकता। कहा जाता है कि राजनीति के धर्म रंजित होने से धर्मनिरपेक्षता की भावना को हानि पहुंचती है। यह लोगों को पुरातनवादी तथा कट्टर बना देती है यह तर्क और अंतर्दृष्टि को समाप्त कर देती है। अतः धर्म को राजनीति से नहीं मिलाना चाहिए। यहां तक कि गाँधीजी के राजनीतिक उत्तराधिकारी जवाहरलाल नैहरू भी राजनीति से धर्म को पृथक रखने में विश्वास रखते थे।

आज दुनिया महात्मा गाँधी को खोज रही है। दुनिया के गरीबों को असली गाँधी चाहिए, तो शोषण के पैरोकारों को नकली गाँधी। अनेक राजनेता प्रयास में है कि किसी तरह से किसी छोटे–मोटे गाँधी को खड़ा करके ज्यादा

से ज्यादा लोगों को लुभाया जा सके। आज दूसरों की बात क्या करे, गाँधी के नाम पर जो संगठन चल रहे है, उनमें भी थोड़ा–सा गाँधीवादी होकर पूरा गाँधी होने के लाभ लेने की कोशिशें चलती रहती है।

गाँधी होने का अनुचित लाभ स्वयं गाँधी ने भी नहीं लिया। उन्होनें अपनी आत्मकथा की प्रस्तावना में लिखा है, ''मैं कितना भला हूँ, इसके वर्णन की मेरी तनिक भी इच्छा नहीं है। जिस गज से स्वयं मैं अपने को मापना चाहता हूँ और जिसका उपयोग हम सबको अपने–अपने विषय में करना चाहिए, उसके अनुसार तो मैं स्वयं कहूंगा कि,

मो सम कौन कुटिल खल कामी ?

जिन तनु दियो ताहि बिसरायो,

ऐसो निमकहरामी।''[78]

आज गाँधी की यह ऊँचाई एक मुश्किल ऊँचाई है, लेकिन असंभव नहीं है। आज जब भी हिंसा, आतंकवाद, आर्थिक मंदी, अंधी भौतिकता, टूटते परिवार, प्रदूषण, गलत शिक्षा पर बात होती है, जब किसी संगठन को अच्छी प्रकार से चलाने की कोशिश होती है, गाँधी की खोज प्रारंभ हो जाती है।

वर्तमान समय में गाँधी चिंतन की प्रासंगिकता व अप्रासंगिकता के अन्तर्द्वन्द्व के बीच **सामाजिक कार्यकर्ता अरूणा राय ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा,** ''सार्वजनिक जीवन में इतनी गिरावट आ गई है कि हमें इस दौर में महात्मा गाँधी ही एक समाधान लगते है।''[79]

अरूणा राय ने आगे बताया है, जिसमें कुछ प्रश्नों के उत्तर ढूंढ़ने का प्रयास किया गया है। जैसै– स्वयं महात्मा गाँधी कैसै थे ? आज के 'गाँधी' कैसै है ? एवं हमें कैसै गाँधी चाहिए ?

<u>महात्मा गाँधी कैसै थे ?</u>

- **क्या थी उनकी शक्तियाँ ?**

सत्य, अहिंसा, त्याग, परिश्रम, संवाद, नवाचार व सूचनाएँ।

- **कैसै बनाते थे टीम ?**

  गाँधीजी निःस्वार्थ भाव वाले समर्पित लोगों की टीम बनाते थे। गलत लोगों को उन्होनें कभी पास नहीं फटकने दिया।

- **कैसै करते थे आंदोलन ?**

  किसी भी आंदोलन से पहले पीड़ितों, मित्रों, सहयोगियों, सरकारी अधिकारियों से सलाह के बाद खाका तैयार करते थे। आंदोलन से पहले रात–रातभर जागकर संबंधित नेताओं व अधिकारियों को पत्र लिखते थे।

- **कैसा था उनका जीवन ?**

  सादा जीवन था, कोई दिखावा नहीं। उन्होनें पहले स्वयं पर प्रयोग किए और बाद में दूसरों को वैसा करने के लिए कहा।

- **धन के स्रोत क्या थे ?**

  अपनी कमाई के पैसै भी आंदोलन में लगाए। जागरूक लोगों व उद्योगपतियों, दानदाताओं से उन्हें धन मिलता था। वे पाई–पाई का हिसाब रखते थे। कभी धन संग्रह नहीं किया।

<u>आज के गाँधी कैसै है ?</u>

- **क्या है इनकी शक्तियाँ ?**

  समर्थकों का नेटवर्क, परिश्रम, धनकोश व प्रचारतंत्र की ताकत, त्याग की प्रवृत्ति का अभाव।

- **कैसै बनाते है टीम ?**

  धन व बल की ताकत व दुनियावी योग्यता देखकर टीम का चयन। स्वार्थी लोगों की घुसपैठ रोकने का इंतजाम नहीं।

- **कैसै करते है आंदोलन ?**

  साफगोई का अभाव। आंदोलन की रूपरेखा स्पष्ट नहीं होती। सवाल ज्यादा, जवाब कम। बौद्धिक व तार्किक कमजोरी। मुश्किल आने पर जल्दी घुटने टेकने या पलायन की प्रवृत्ति।

- **कैसा है इनका जीवन ?**

  व्यक्तिगत जीवन व सार्वजनिक जीवन में कई बार फासला नजर आने लगता है। हर वर्ग को आकर्षित करने की जीवनवृत्ति का अभाव।

- **धन के स्रोत क्या है ?**

  धन के स्रोत संदिग्ध, काले धन की गुंजाइश, आम लोगों द्वारा दी गई सहयोग राशि, गैर–सरकारी संगठनों का पैसा।

<u>हमें कैसै गाँधी चाहिए ?</u>

निःस्वार्थ भाव, जुझारूपन, व्यापक आकर्षण, बेदाग चरित्र, सूचनाओं से समृद्ध, परंपरा व आधुनिकता का समन्वय।

- **कैसी रहेगी टीम ?**

  हर वर्ग की भागीदारी, कुछ कर गुजरने की तमन्ना वाले लोग, तन से समर्थ मन से मजबूत व धन से संपन्न लोगों की टीम।

- **कैसै होगा आंदोलन ?**

  महात्मा की तरह आंदोलन का पूरा होमवर्क, तमाम आशंकाओं एवं संभावनाओं पर विचार, पार्टी लाईन से परे देशहित में आम लोगों, अफसरों, नेताओं के प्रत्यक्ष–परोक्ष समर्थन की व्यवस्था।

- **कैसा होगा उनका जीवन ?**

  आकर्षक ईमानदार व पारदर्शी जीवन। कोई अतिरिक्त आडंबर, अभिमान नहीं, विचारवान, जैसा व्यवहार खुद चाहे वैसा ही व्यवहार
  दूसरों के साथ करना स्वयं का कर्तव्य समझे।

- **धन के स्रोत क्या होंगे ?**

  धन से पैदा होते है सर्वाधिक विवाद। साधन की शुचिता जरूरी, काले धन से परहेज, पाई–पाई का लिखित हिसाब।[80]

कुछ समय पहले अमेरिकी पत्रिका टाइम ने भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हुए महात्मा गाँधी की अगुवाई वाले नमक सत्याग्रह को दुनिया के

सर्वाधिक दस प्रभावशाली आंदोलनों में शुमार किया। अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने भी व्हाइट हाऊस में अफ्रीकी महाद्वीप के 50 देशों के युवा नेताओं को संबोधित करते हुए कहा था कि आज के बदलते परिवेश में युवाओं को गाँधीजी से प्रेरणा लेने की जरूरत है। एक ताकतवर देश के राष्ट्रपति द्वारा हिंसा भरे माहौल में महात्मा गाँधी की प्रासंगिकता का उल्लेख किया जाना निश्चय ही गाँधी की विश्वव्यापी स्वीकार्यता को ध्वनित करता है।[81]

वर्तमान समाज में संदेशो को सुनकर उनके अनुसार आचरण करने की ईमानदारी समाप्त हो चुकी है। अब तो आदेशों को भी अनसुना कर देने की प्रवृत्ति ने पैर जमा लिये है। इसलिये महात्मा गाँधी के इस कथन को अप्रासंगिक ठहरा देने वाले बहुत से होंगे कि, 'मेरा जीवन ही मेरा संदेश है।' लेकिन क्या वाकई गाँधीजी अप्रासंगिक हो गए? कहते है कि जो राष्ट्र अपने चरित्र की रक्षा करने में सक्षम नहीं है, उसकी रक्षा कोई नहीं कर सकता है। क्या परमाणु बम भारतीयता की रक्षा कर पायेगा? दरअसल, यह भुला दिया गया है कि पहले विश्वास बनता है फिर श्रद्धा कायम होती है। किसी ने अपनी जय–जयकार करवाने के लिये क्रम उलट दिया और उल्टी परंपरा बन गई। अब विश्वास हो या नहीं हो, श्रद्धा का प्रदर्शन जोर–शोर से किया जाता है। गाँधीजी भी श्रद्धा के इसी प्रदर्शन के शिकार हुए हैं।

*****

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अरविंद पवन कुमार, ''वर्तमान में गाँधी के विचारों की प्रासंगिकता'', आर्टिकल ऑन गाँधी, जनवरी 28, 2010
2. ओल्डेनबर्ग एच., ''बुद्धाः हिज लाइफ, टिचिंग्स एण्ड हिज आर्डर'', कलकत्ता, 1927, पृष्ठ 64
3. कौशिक आशा, ''गाँधी नयी सदी के लिये'', रावत पब्लिकेशन, जयपुर, पृष्ठ 108
4. गाँधी, ''हिन्द स्वराज'', अहमदाबाद, 1938, पृष्ठ 35
5. शुमैकर ई. एफ., ''स्मॉल इज ब्यूटीफुल'', ऑक्सफोर्ड, 1973
6. हरिजन, अप्रेल 7, 1946
7. यंग इंडिया, अगस्त 8, 1931
8. गाँधी, ''यरवदा मंदिर से'', नवजीवन, अहमदाबाद, पृष्ठ 66
9. गाँधी, ''स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गाँधी'', मद्रास जे. ए. नटेशन, पृष्ठ 344
10. गाँधी, हिन्द स्वराज, पृष्ठ 226
11. हरिजन, सितंबर 7, 1935
12. यंग इंडिया, जुलाई 2, 1931, पृष्ठ 286
13. बहरवाल डॉ. मनोज कुमार, ''भारतीय राजनीतिक चिंतक'', हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर, 2014, पृष्ठ 397
14. वही, पृष्ठ 397
15. शर्मा डॉ. अपर्णा, ''गाँधी–वाणी'', पारीक बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2010, पृष्ठ 21–22
16. बहरवाल डॉ. मनोज कुमार, ''भारतीय राजनीतिक चिंतक'', हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर, 2014, पृष्ठ 398

17. कौशिक आशा, ''गाँधी नयी सदी के लिये'', रावत पब्लिकेशन, जयपुर, पृष्ठ 90
18. कलेक्टेड वर्क्स ऑफ गाँधी, खण्ड–15, पृष्ठ 312
19. यंग इंडिया, दिसंबर 31, 1931, पृष्ठ 427–428
20. गाँधी, ''स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गाँधी'', मद्रास नटेशन, 1922, पृष्ठ 494
21. हरिजन, मार्च 23, 1940, पृष्ठ 55
22. नैहरू जवाहर लाल, ''एन ऑटोबायोग्राफी(1936)'', नईदिल्ली, एलाइड पब्लिशर्स, 1962, पृष्ठ 505–506
23. कौशिक आशा, ''गाँधी नयी सदी के लिये'', रावत पब्लिकेशन, जयपुर, पृष्ठ 96–97
24. कृपलानी जे. बी., ''गाँधी–द स्टेट्समैन'', रंजीत पब्लिशर्स, दिल्ली, 1951, पृष्ठ 21–22
25. कौशिक आशा, ''गाँधी चिन्तन : तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य'', जयपुर प्रिन्टवैल, 1995, प्रस्तावना
26. गाँधी एम. के., ''हिन्द स्वराज'' अहमदाबाद, नवजीवन, 1980, पृष्ठ 98
27. माई रिलीजन, अहमदाबाद, नवजीवन, पृष्ठ 136
28. वही, पृष्ठ 16–17
29. हरिजन, जनवरी 30, 1937
30. ''द गास्पेल ऑफ सेल्फलैस एक्शन : गीता एकार्डिंग टू गाँधी'', अहमदाबाद, नवजीवन, 1984, पृष्ठ 9
31. वही, पृष्ठ 121
32. यंग इंडिया, दिसंबर 4, 1924
33. धावन गोपीनाथ, ''द पॉलिटिकल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गाँधी'', अहमदाबाद, नवजीवन, 1951, पृष्ठ 385
34. ''गाँधी मार्ग'', वर्ष–2, अंक 1–4, 1958, (सर्वोदय पृष्ठ 70)

35. तेंदुलकर डी. जी., ''महात्मा : लाईफ ऑफ एम. के. गाँधी'', प्रकाशन विभाग, दिल्ली, भारत सरकार, खण्ड 5, पृष्ठ 283
36. वर्मा वी. पी., ''द पॉलिटिकल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गाँधी एण्ड सर्वोदय'', आगरा, 1965, पृष्ठ 61
37. धवन गोपीनाथ, ''सर्वोदय तत्व दर्शन'', नवजीवन, अहमदाबाद, 1963, पृष्ठ 43
38. हरिजन, नवंबर 12, 1938
39. प्रभु आर. के., ''मेरे सपनों का भारत'', नवजीवन, अहमदाबाद, 1960, पृष्ठ 238
40. वही, पृष्ठ 118
41. वही, पृष्ठ 241
42. द कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, पब्लिकेशन्स डिवीजन, दिल्ली, 1963, पृष्ठ 16
43. कौशिक आशा, ''गाँधी नयी सदी के लिये'', रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2000, पृष्ठ 239
44. माथुर डी. बी., ''गाँधी एण्ड द लिबरल बिक्वेस्ट'', जयपुर, आलेख, 1988
45. तेंदुलकर डी. जी., ''महात्मा'', खण्ड 2, बंबई कावेरी एण्ड तेंदुलकर, 1952, पृष्ठ 98
46. कृपलानी जे. बी., ''गाँधी–द स्टेट्समैन'', रंजीत पब्लिशर्स, दिल्ली, 1951, पृष्ठ 95
47. महादेव प्रसाद, ''महात्मा गाँधी का समाज दर्शन'', हरियाणा हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 1973, पृष्ठ 126
48. संपूर्ण गाँधी वाङ्मय, खण्ड 17, फरवरी–जून 1920, पृष्ठ 441
49. बार्कर अर्नेस्ट, ''प्रिंसीपल्स ऑफ सोशियल एण्ड पॉलिटिकल थ्योरी'', दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1967, पृष्ठ 652
50. हरिजन, मार्च 28,1936

51. पाठक देवव्रत एन., ''गाँधीज विजन : ए सर्च फार लास्टिंग पीस एण्ड सिक्योरिटी'', गाँधीयन स्टडीज, जनवरी–जून 1997, पृष्ठ 94
52. हरिजन, अगस्त 2, 1942, पृष्ठ 249
53. सिंह रामजी, ''द रेलेवेन्स ऑफ गाँधीयन थॉट'', क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नईदिल्ली, 1983, पृष्ठ 79
54. वही, पृष्ठ 83
55. लाला रमन बिहारी, ''शिक्षा के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय सिद्धांत'', रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ
56. पचौरी डॉ. गिरीश, ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक'', लायल बुक डिपो, मेरठ
57. पाण्डेय डॉ. रामशकल, ''शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि'', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
58. गाँधी : कन्फेशन्स ऑफ ए लिंग्विस्ट, वर्ड प्रेस, जनवरी 21, 2010
59. नारायण डॉ. इकबाल, ''आधुनिक राजनीतिक विचारधाराएँ'', ग्रंथ विकास प्रकाशन, जयपुर, 2005, पृष्ठ 428
60. सक्सेना वन्दना, ''गाँधी जीवन और दर्शन'', बी. आर. पब्लिशर्स, जयपुर, 2006, पृष्ठ 100–101
61. कौशिक आशा, ''गाँधी नयी सदी के लिये'', रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2000, पृष्ठ 61
62. वही, पृष्ठ 69
63. ''द टेलीग्राफ'', कोलकाता, जनवरी 12, 2003, वॉशिंगटन से प्राप्त समाचार
64. न्यूयॉर्क टाइम्स, दिसंबर 25, 2003
65. एसोसिएटेड प्रेस, 11जनवरी, 2003
66. त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', विश्वभारती पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2013, पृष्ठ 430

67. लुइस फिशर, ''द लाईफ ऑफ महात्मा'', भाग 2, 1955, पृष्ठ 286
68. डॉ. राधाकृष्णन, मेमोरियल सेक्शन ऑफ गाँधीज 70th बर्थडे, 1949, पृष्ठ 360
69. त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', विश्वभारती पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2013, पृष्ठ 435
70. बहरवाल डॉ. मनोज कुमार, ''भारतीय राजनीतिक चिंतक'', हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर, 2014, पृष्ठ 438
71. वही, पृष्ठ 441
72. राजस्थान पत्रिका, कोटा संस्करण, फरवरी 23, 2015, पृष्ठ 16
73. त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', विश्वभारती पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2013, पृष्ठ 431
74. वही, पृष्ठ 432
75. वही, पृष्ठ 433
76. नारायण जयप्रकाश, ''व्हाय सोशलिज्म'', 1936, पृष्ठ 89
77. हॉरेस एलेक्जेण्डर, ''गाँधी थॉट वेस्टर्न आई'', 1969, पृष्ठ 179
78. राजस्थान पत्रिका, कोटा संस्करण, जून 12, 2011, पृष्ठ 1
79. वही
80. वही
81. जयतिलक अरविन्द, ''गाँधी की बढ़ती प्रासंगिकता'', आर्टिकल ऑन गाँधी, दैनिक जागरण, जनवरी 28, 2010

*****

निष्कर्ष एवं सुझाव

निष्कर्ष एवं सुझाव

वैश्वीकरण के दौर में वर्तमान विश्व में मानव जाति की आशाएँ बदली है, आकांक्षाएँ बदली है, समस्याएँ बदली है एवं उनके निराकरण के उपाय बदले है। वर्तमान युग अन्य युगों की तुलना में वैचारिक संघर्ष की गहनता और उत्कृष्टता की दृष्टि से भिन्नता रखता है। इस युग में मानव ने अपनी गहन बुद्धिमत्ता का प्रयोग करते हुए वैज्ञानिक अनुसंधानों, तकनीकी क्षैत्र, आणविक अस्त्र–शस्त्र के क्षैत्र में प्रगति तो बहुत की है परंतु इससे मानव समाज, सभ्यता और संस्कृति की समाप्ति का भय भी उत्पन्न हो गया है। चिन्तन की दृष्टि से तो मानवता का विकास हुआ है क्योंकि आज से पूर्व विश्व में समानता, स्वतंत्रता, भ्रातृत्व व विश्वशांति के आदर्श प्रत्यक्ष निखरकर नहीं आये थे, परंतु मानवीय मूल्यों एवं नैतिकता को बचाना भी हमारे लिये किसी चुनौती से कम नहीं है।

वर्तमान विश्व विकास के साथ–साथ विभिन्न समस्याओं का भी शिकार हुआ है। जिनमें हिंसा, आतंकवाद, गरीबी, भूखमरी, अशिक्षा, भ्रष्टाचार, सहनशीलता में कमी, आर्थिक केन्द्रीकरण, नैतिक अवमूल्यन, दया, प्रेम, सद्भाव का अभाव, वैचारिक दृढ़ता एवं आत्मबल की कमी आदि प्रमुख है। इन समस्याओं का लाभ उठाते हुए विश्व में प्रभावशाली राष्ट्र अपना प्रभाव बढ़ाते जा रहे है एवं निर्बल राष्ट्र जिनके पास संसाधनों की कमी है, दमन की भावना से दबे हुए है।

वर्तमान विश्व में राष्ट्रों के आपसी संबंध चाहे वे राजनीतिक हो या सांस्कृतिक सभी में कूटनीति की झलक दिखाई देती है। विभिन्न राष्ट्रों के मध्य अन्तर्सम्बन्धों में सहजता, शालीनता एवं निःस्वार्थता का अभाव देखा जाता है। कोई भी राष्ट्र बिना अपना स्वार्थ देखे अन्य राष्ट्र से संपर्क साधने का इच्छुक नहीं है। यहां तक कि किसी राष्ट्र के ऊपर प्राकृतिक संकट आने की स्थिति मे

दी जाने वाली मदद भी कूटनीति का ही हिस्सा होती है। जिसका कोई न कोई प्रतिफल वह राष्ट्र लेना चाहता है।

आज विश्व राजनीति का परिदृश्य अराजकता की ओर बढ़ रहा है तथा राजनीतिक मूल्यहीनता के अनेकानेक प्रश्न खड़े कर दिये गये है। राजनीति में बढ़ते जातीय उन्माद एवं हिंसा, सांस्कृतिक अवमूल्यन, अलगाववाद, चरित्रहीनता, सिद्धांतविहीन एवं वैचारिक परिपक्वता ने राजनीतिक परिदृश्य को चिंताजनक बना दिया है। राजनीतिक पतन के साथ ही आम व्यक्ति की आशाएँ कुंठित हो जाती है। भूख, बेकारी, गरीबी से त्रस्त जनता समस्याओं के समाधान की राह देख रही है। राजनीति का संपूर्ण परिदृश्य विकृत–भ्रष्ट होता जा रहा है। बढ़ती मूल्यहीनता के कारण अनेक अंतर्विरोध, विद्रुपताऐं एवं विसंगतियाँ तेजी से बढ़ रही है। कोलाहल एवं कलह से भरी राजनीति में सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तन, उत्कृष्ट नीति, नेतृत्व और नैतिकता के आधार पर आवश्यक रूप से किया जाना अपेक्षित है।

विश्व राजनीति एक गतिशील अवधारणा है इसमें अंतर्राष्ट्रीय संबंधो का परिप्रेक्ष्य यद्यपि बड़ी तीव्रता से बदलता है फिर भी निरंतरता की कुछ प्रवृत्तियाँ भविष्य के नवीन मोड़ो की तरफ संकेत कर जाती है। यथा चार दशक तक चला शीत युद्ध का पराभव जहां दो प्रमुख खेमों में बंटे विश्व में नवीन घटनाओं को जन्म दे गया वही भावी विश्व में अमेरिका की भूमिका की ओर भी संकेत कर गया। कालांतर में जन्मा नवीन युग परा–सैद्धांतिक युग कहलाया जिसे आल्विन टाफ्लर जैसै चिन्तक तृतीय लहर के रूप में देखते है तो कार्ल काटस्की जैसै विचारक परा–साम्राज्यवादी युग कहते हुए दोहरे शोषण का प्रतिबिम्ब तलाशते है। बर्लिंगर जहां शीत युद्धोत्तर विश्व को यूरो–साम्यवादी काल का नाम देते है तो डेविड हील्ड दोहरे लोकतंत्रीकरण का समय।

सिद्धांत की तरह अंतर्राष्ट्रीय संबंध भी बहुत जटिल है। इस जटिलता के पीछे अनेक विरोधाभासों का विद्यमान होना है। अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के स्वरूप को लेकर विद्वानों एवं सिद्धांतकारों में गहरे मतभेद है। उदाहरणार्थ कुछ विद्वान

विश्व को बहुध्रुवीय मानते है तो कुछ एक ध्रुवीय। एकध्रुवीय मानने का कारण जहां एकमात्र महाशक्ति अमेरिका का होना है जो अपनी प्रबल सैनिक, औद्योगिक एवं तकनीकी क्षमता के आधार पर संपूर्ण विश्व पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर सकती है। वहीं बहुध्रुवीयवादियों का तर्क है कि अमेरिका आर्थिक दृष्टि से जापान, यूरोप, एशिया व प्रशांत क्षैत्र के अनेक देशों से टकराने की दृष्टि से पीछे है।

सी. फ्रेड बर्गस्टन जैसै चिन्तक सुरक्षा व सैनिक मुद्दों को प्राथमिकता देते है। उनके अनुसार आज संसार का नियंता बनने के लिए आर्थिक संतुलनकर्ता होना जरूरी है। विश्लेषकों का एक वर्ग मानने लगा कि विश्व अर्थव्यवस्था का क्षैत्रीयकरण हो रहा है। इस परिप्रेक्ष्य में अंतर्राष्ट्रीय संबंध एकध्रुवीय या बहुध्रुवीय व्यवस्था द्वारा संचालित न होकर अन्तर्निर्भरता के सिद्धांत द्वारा प्रमुखता से संचालित होते है। अतः ऐसे में द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय संबंध अति महत्वपूर्ण होते है, जिनके चलते अमेरिका जैसी महाशक्तियाँ संपूर्ण विश्व के संदर्भ में प्रासंगिक बनती है।

वर्तमान समय में अणुशक्ति के उदय ने अंतर्राष्ट्रीय संबंधो के संचालन और व्यक्ति के अस्तित्व दोनों के लिये खतरा पैदा कर दिया है। अणुशक्ति का प्रयोगे राष्ट्रों ने अपनी शक्ति की वृद्धि व अपनी महत्वपूर्ण स्थिति बनाने के लिए किया। इसे संघर्ष निवारण या आत्मरक्षा के लिए भी बढ़ाया गया किंतु अणुशक्ति इन लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर सकी व इसने विश्व के समक्ष खतरा पैदा कर दिया और निःशस्त्रीकरण की मांग को बढ़ा दिया। वर्तमान विश्व में निःशस्त्रीकरण ने एक अधिक संयत प्रतिमान पर बल दिया है। विश्व राजनीति में अधिकांश राष्ट्र निःशस्त्रीकरण को युद्ध के खतरे को कम करने वाला उपाय मानने लगे है।

वर्तमान विश्व में युद्ध को पूर्ववत् मान्यता प्राप्त है और आज भी ऐसा महसूस किया जाता है कि, संघर्ष निवारण में युद्ध की निर्णायक भूमिका है।

शांतिपूर्ण संघर्ष निवारण, वार्ता का महत्व वर्तमान समय में चाहे बढ़ रहा है, किन्तु फिर भी उन्हें उतनी मान्यता प्राप्त नहीं है, जितनी आवश्यक है।

आज आणविक हथियारों से संपन्न राष्ट्रों के कारण विश्व के समक्ष युद्ध का भय प्रबल रूप से विद्यमान है। यह समझा जाने लगा है कि ऐसा कोई भी युद्ध समूची अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के लिए भयावह खतरा है।

वर्तमान विश्व राजनीति में एक मुख्य प्रवृत्ति क्षैत्रीय सहयोग के आर्थिक समूह बनाने की है। आज क्षैत्रीय संगठनों के रूप और प्रकृति में अंतर आया है। पूर्व में जहां इन संगठनों का आधारभूत तत्व केवल राष्ट्र की सुरक्षा था एवं इसलिये सैनिक संगठनों का निर्माण किया जाता था। वर्तमान विश्व के क्षैत्रीय संगठनों के समक्ष संपूर्ण विश्व के संदर्भ में अपना महत्व, संबंध एवं प्रभाव प्रमुख मुद्दा बनकर सामने आया है। इसके प्रमुख उदाहरण है– नाफ्टा, यूरोपीय आर्थिक समुदाय, एपेक, आसियान, हिमतक्षेस, एम–8, बिस्टेक, शंघाई–5, अफ्रीकी संघ, यूरोपीय इकॉनामिक कम्यूनिटी तथा सार्क आदि।

वर्तमान विश्व में साम्राज्यवाद तो अस्ताचल की ओर है लेकिन आर्थिक और राजनीतिक उपनिवेशवाद अपने कदम बढ़ा रहा है। जिसके कारण आर्थिक परतंत्रता की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता। आज वैश्वीकरण के कारण न केवल संपन्न राष्ट्र अपने तक ही सीमित है बल्कि विश्व के राष्ट्रों को अपनी आर्थिक गतिविधियों का बाजार बनाने का भी प्रयास कर रहे है। जो आर्थिक उपनिवेशीकरण की दिशा में एक कदम है।

वर्तमान विश्व में आतंकवादी घटनाएँ एक गंभीर चुनौती है। आज आतंकवाद से न केवल एक या दो राष्ट्र प्रभावित है वरन् संपूर्ण विश्व को इसका खतरा गंभीर रूप से प्रभावित कर रहा है। स्वयं आतंकी संगठनों को शरण देने वाला पाकिस्तान भी इसके दुष्परिणामों से नहीं बच पा रहा है। ईराक, लीबिया, सीरिया में अपना जाल बिछाकर यूरोप की ओर कूच करने वाले आतंकी संगठन आई. एस. का घिनोना रूप हमें आए दिन समाचार पत्रों की सुर्खियों के रूप में दिखाई देता है। किसी का अपहरण करना बम विस्फोट

करना, सिरकलम करना, महिलाओं से बलात्कार करना तो इसके लिये साधारण सी बात है। इस संगठन की स्वयं की अपनी सैनिक शक्ति इतनी मजबूत है कि इसने संपूर्ण विश्व की नांक में दम कर रखा है। यहाँ तक कहा जाता है कि इसके पास परमाणु बम भी बनकर तैयार है। अमेरिका तो इसका दुश्मन नम्बर एक है ही सही अब इसका अगला निशाना एशिया है। क्योंकि भारतीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को यह आतंकी संगठन धमकी दे चुका है।

वर्तमान विश्व में कई गंभीर समस्याएँ है जो विश्व राजनीति को प्रभावित कर रही है। राष्ट्रवाद एवं अंतर्राष्ट्रवाद के मध्य तालमेल स्थापित करना एक गंभीर चुनौती है, यदि इस गंभीर चुनौती का समाधान होता है तो विश्व बंधुत्व की दिशा में सकारात्मक कदम सिद्ध होगा। विश्व के राष्ट्रों में व्याप्त आर्थिक असमानताओं को समाप्त करना हमारे लिये एक चुनौती है। इसके फलस्वरूप सर्वोदय की प्राप्ति सुनिश्चित की जा सकेगी। आज विश्व में लोकतांत्रिक एवं प्रतिक्रियात्मक शक्तियों का संघर्ष दिखाई देता है। इनके कार्यो में उचित–अनुचित का ध्यान रखते हुए एक सर्वसुलभ एवं सर्वमान्य निर्णय की प्राप्ति की आधारशिला रखना भी हमारा लक्ष्य होना चाहिए। आज आणविक युद्ध पद्धति से पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी तंत्र को जो खतरा पैदा हुआ है उससे हमारी प्रकृति का अस्तित्व ही समाप्ति की ओर दिखाई देता है। गरीबी, भूखमरी, हिंसात्मक घटनाएँ, आतंकवादी क्रियाकलाप, साइबर क्राइम आदि समस्याएँ वर्तमान विश्व के समक्ष एक चुनौती के रूप में विद्यमान है। हिंसात्मक घटनाओं के विभिन्न रूप है जिनमें सांप्रदायिक हिंसा, राजनीतिक हिंसा, क्षैत्रीय हिंसा, घरेलू हिंसा आदि प्रमुख है। इन सभी के गंभीर परिणाम दिखाई देते है जिनमें घरेलू हिंसा ने तो महिलाओं की समाज में स्थिति पर ही प्रश्न चिह्न लगा दिया है। उनकी समाज में स्थिति क्या हो ? गरीबी एवं भूखमरी का समाधान नहीं होना मानवता के विरूद्ध अपराध है। विश्व में एशिया और अफ्रीका के कई राष्ट्र ऐसे है, जिनमें भूखमरी एक गंभीर समस्या है, आतंकवाद से भी बड़ी। आर्थिक सम्पन्न राष्ट्रों का सहयोग नहीं मिल पाना इनकी बड़ी समस्या है।

परिणामस्वरूप ऐसे राष्ट्रों में अधिकांश लोग मौत का शिकार भूखमरी से ही होते है।

वर्तमान विश्व की विभिन्न समस्याएँ विश्व राजनीति को कई तरीकों से प्रभावित कर रही है। आज एक राष्ट्र की राजनीतिक व्यवस्था के समक्ष समस्या यह है कि वह अपने स्वार्थ को पहले सिद्ध करे या विश्व कल्याण हेतु अंतर्राष्ट्रीयवाद को प्रमुखता प्रदान करे। इसी समस्या के कारण राष्ट्रीय सुरक्षा एवं अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के बीच सामंजस्य स्थापित करना भी महत्वत्वपूर्ण हो जाता है। विकसित राष्ट्रों के अपने हित होते है एवं अभिव्यक्ति या अल्पविकसित राष्ट्रों के समक्ष अपनी मूलभूत समस्याएँ भी कम नहीं होती परिणामस्वरूप विश्व राजनीति के समक्ष स्वयं की सुरक्षा और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के मध्य तालमेल बैठाना कठिन हो जाता है। किसी राष्ट्र को यदि कोई सहयोग प्रदान किया जाता है तो उसके साथ स्वयं की राष्ट्रीय सुरक्षा की भावना भी जुड़ी होती है।

आज आतंकवाद विश्व की सर्वप्रमुख समस्या है। आतंकवाद के प्रति अपना रूख स्पष्ट करना विश्व राजनीति को चुनौतिपूर्ण कदम है। इस चुनौतीपूर्ण कदम का सामना वे ही राष्ट्र प्रभावी रूप से कर पाते है जो इसका दंश निरंतर झेल रहे है। जिन राष्ट्रों का इससे सामना न के बराबर हुआ है उन्हें इसका आनुभविक ज्ञान नहीं है। अमेरिका, भारत इसके प्रत्यक्ष उदाहरण है। जिसमें भारत ने तो अपनी आजादी के बाद से ही आतंकवाद एवं हिंसात्मक गतिविधियों से सामना किया है। अमेरिका के न्यूयॉर्क स्थित विश्व व्यापार संगठन की इमारत पर आतंकी हमला भी दिल दहला देने वाली घटना है। जिसने अमेरिका को अलकायदा एवं इस्लामिक स्टेट जैसै आतंकवादी संगठनों को ध्वस्त करने को मजबूर कर दिया।

आज आतंकवाद की आड़ में कूटनीतिक दांव–पेच भी अपना रंग दिखला रहे है। किसी राष्ट्र के समक्ष अपने भौगोलिक क्षैत्र में यदि किसी प्रकार की चुनौती कोई अन्य राष्ट्र उत्पन्न करता है जैसै– अपनी सामरिक स्थिति मजबूत

करना, सैनिक शक्ति में वृद्धि करना, आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करना, तुलनात्मक रूप में अधिक शक्तिशाली दिखाई देना एवं विश्व पटल पर प्रबल शक्ति के रूप में उभरना आदि तो कूटनीतिक संबंधो की संभावना बढ़ जाती है। जैसै– विश्व में भारत की मजबूत स्थिति के कारण चीन–पाकिस्तान संबंधों में लगातार निकटता की स्थिति दिखाई दे रही है। विभिन्न आतंकवादियों द्वारा अपने मंसूबो को अंजाम देकर अपने रहनुमा राष्ट्र में शरण लेना भी कूटनीतिक राजनीति का हिस्सा है। मुम्बई हमलों के लिये जिम्मेदार दाऊद इब्राहिम को पाकिस्तान द्वारा शरण दिये रखना इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

गरीबी, भूखमरी से ग्रसित राष्ट्रों के प्रति विश्व राजनीति का प्रभावी प्रयास रहा कि ऐसे राष्ट्रों के प्रति अपनी नीति के निर्माण द्वारा इनके विकास एवं समस्याओं के निराकरण के प्रयास सुलभ हुए। संयुक्त राष्ट्र संघ ने यूनेस्को एवं यूनिसेफ के माध्यम से अफ्रीका, एशिया एवं अमेरिका के कई देशों में अपनी कल्याणकारी योजनाओं को मूर्त रूप दिया है जो गरीबी एवं भूखमरी से संबंधित है। वर्तमान में साइबर क्राइम एक तकनीकी वैश्विक समस्या के रूप में उभरा है। जिसके प्रभाव बड़े घातक है। किसी भी राष्ट्र की गुप्त सूचनाओं, आंकड़ों को आसानी से हासिल करना इसके लिये कोई असंभव काम नहीं है। पर्यावरण के विनाश ने पारिस्थितिकी तंत्र को असंतुलित कर दिया है, जिसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक आपदाएं बढ़ी हैं। अतः विश्व की राजनीति इस बिन्दु पर सोचने को मजबूर हुई है कि पर्यावरण संरक्षण कैसै किया जाये? पर्यावरण को क्षति पहुचाने वाले तत्व कौन–कौनसे है? इनसे कैसै बचा जाये? उपर्युक्त सवालों का निश्चित जवाब चाहने हेतु विभिन्न पर्यावरण सम्मेलनों की आवश्यकता महसूस हुई जिनका आयोजन समय–समय पर किया जाता रहा है।

आज विश्व में हिंसात्मक धटनाएँ विश्व राजनीति को मुख्य रूप से प्रभावित कर रही है। हिंसात्मक प्रवृत्तियाँ राजनीतिक नेतृत्व का ध्यान सकारात्मक कार्यो से हटाकर इतर कार्यो में लगाए रखती है। जिससे विश्व जनमत में हमेशा भय की स्थिति विद्यमान रहे। कई बार सत्तारूढ़ शासन तंत्र

भी जनता में भय की स्थिति पैदा करने के लिये हिंसा को अंजाम देते है। जिससे अपनी उपलब्धियों का हिसाब देने से बचा जा सके। हिंसा राजनीतिक इच्छापूर्ति का भी साधन है, इसका वीभत्स रूप चुनावों के समय देखा जाता है। जो राजनीतिक नेतृत्व का निर्धारण करता है। अपने हितो की पूर्ति करने के लिये स्वेच्छाचारी संगठन हिंसात्मक कार्यो द्वारा अपनी स्वार्थसिद्धि का प्रयास करते है। इस हेतु राजनीतिक तंत्र पर दबाव डाला जाता है। फलस्वरूप कई बार स्वेच्छाचारी संगठन सफल होते है एवं कई बार राजनीतिक तंत्र सफल।

आतंकवादियों द्वारा अपने निजी स्वार्थो की पूर्ति के लिये दबाव के रूप में जो कार्य किये जा रहे है, उनमें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व के लगभग सभी भागों में समानता आती जा रही है। आज फिरोती, अपहरण, आत्मघाती दस्ते, पकड़े जाने पर साईनाइड का प्रयोग, बम विस्फोट आदि विश्व के किसी भी आतंकी संगठन के लिये आम बात है। कहा जाता है कि आतंकी संगठन इस्लामिक स्टेट की एक दिन की कमाई एक मिलियन डॉलर (6.3 करोड़ रूपये) है। यह कमाई उसके कब्जे के क्षैत्रों में अवैध वसूली एवं फिरौती से हो रही है।

आतंकी गुटों द्वारा अपने निजी स्वार्थो की पूर्ति हेतु राजनीतिक तंत्र तक संदेश पहुचाने के लिये बम विस्फोट, अपहरण, मारकाट का सहारा लिया जाता है। इन घटनाओं का प्रभाव शासनतंत्र पर होता है एवं आतंकवादियों की मांगो पर सोचने को राजनीतिक तंत्र को विवश होना पड़ता है।

आतंकवाद अपनी दबाव की रणनीति के रूप में प्रत्यक्ष युद्ध न लड़कर छद्म युद्ध की रणनीति अपनाता है। जिससे राजनीतिक शासनतंत्र एवं आमजन में निरंतर भय व असुरक्षा की स्थिति व्याप्त रहे। आज के आतंकी संगठन इतने मजबूत हो चुके है जिनके पास अपनी स्वयं की सैनिक शक्ति विद्यमान है, उनके पास परमाणु हथियार विद्यमान है जिनका प्रयोग वे विश्व राजनीति के समक्ष दबाव बनाने में कर रहे है। इस्लामिक स्टेट नामक आतंकी संगठन के पास परमाणु बम होना इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

अंतर्राष्ट्रीय विश्व की समस्या को गाँधी ने साध्य–साधन के भेद के रूप में देखा व व्यक्ति के जीवन में साध्य–साधन के महत्व को स्थापित करने की चेष्टा की। गाँधी ने महसूस किया कि जिस प्रकार जीवन के उच्च लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए निम्न या अनुचित साधनों का प्रयोग नहीं किया जा सकता उसी प्रकार अंतर्राष्ट्रीय विश्व की स्थायी शांति के उच्च लक्ष्य को भी हिंसा से या युद्ध से प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

गाँधी नैतिक समग्रतावादी थे जिन्होनें अपने आधारभूत नैतिक सिद्धांतों से कोई समझौता नहीं कर सभी सिद्धांत अन्तःचेतना से संचालित होना स्वीकार किया। उन्होनें अपने जीवन के जो लक्ष्य निर्धारित किए उनमें स्वराज, सर्वोदय की अनुभूति, सत्य व ईश्वर के साथ एकीकरण एवं ईश्वर को प्राप्त करना प्रमुख थे। ये निश्चय ही बहुत उच्च कोटि के आध्यात्मिक लक्ष्य है। चूँकि उनके लक्ष्य की आध्यात्मिकता अत्यंत शुद्ध है, अतः वे साधनों की शुद्धि पर बल देते है। अच्छे साध्य अनुचित साधनों से प्राप्त नहीं हो सकते।

वर्तमान विश्व की जो स्थिति दिखाई दे रही है उसमें विभिन्न राष्ट्रों द्वारा साध्य की बात तो बड़ी विनम्रता पूर्वक रखी जाती है। परंतु साधन की बात आते ही अपनी स्वार्थसिद्धि ही प्रमुख होती है। साधन की पवित्रता गौण दिखाई देती है। अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए विश्व नेतृत्व साम, दाम, दण्ड, भेद, उचित–अनुचित, सही–गलत में से किसी भी साधन का प्रयोग करने से नहीं चूकता। बातें की जाती है दिखावे एवं आदर्शो की और उनकी प्राप्ति के साधन शून्य महत्व के दिखाई देते है। गाँधीजी ने लिखा था, ''साधन व साध्य मेरे जीवन में परिवर्तित होने वाली संज्ञाए है। साधन ही सब कुछ है। साध्य व साधन के मध्य किसी प्रकार का पृथक्करण संभव नहीं है।

यदि वर्तमान विश्व राजनीति आज साध्य–साधन की अवधारणा को व्यावहारिक रूप में अंतर्मन से लागू करने के प्रयास करे तो विश्व का स्वरूप बदल सकता है। क्योंकि विश्व के बड़े–बड़े राष्ट्र कहने को तो आदर्शात्मक साध्यों का निर्धारण कर लेते है परंतु उनकी प्राप्ति के प्रयास नाकाफी सिद्ध होते

है या इस प्रकार के होते है जो गाँधीजी की साधन के रूप में अहिंसा से दूर–दूर तक संबंधित ही नहीं होते। अतः गाँधीजी की अहिंसा को ही साधन के रूप में स्वीकार कर विश्व कल्याण के प्रयास किये जाये तो विश्व का स्वरूप ही कुछ ओर होगा।

वर्तमान विश्व में अन्याय के विरोध का तरीका हिंसात्मक, घृणित, तोड़फोड़, आगजनी आदि के रूप में देखा जाता है जिनके परिणाम भी विनाशक व द्वैष पैदा करने वाले होते है। किसी भी राष्ट्र का कोई आंतरिक संगठन हो या बाहरी संगठन निरंतर अपनी मांगो की पूर्ति के लिये सरकार पर दबाव डालते है एवं उनकी मांगो की पूर्ति नहीं होने की स्थिति में हिंसात्मक साधनों का प्रयोग आम बात हो गयी है। यह स्थिति शासनतंत्र के लिये भी परेशानी पैदा करती है और स्वयं व्यक्ति की मांग पूरी भी हो जाये यह भी सुनिश्चित नहीं है।

गाँधीजी के सत्याग्रह की खूबी यही है कि व्यक्ति को इसकी कहीं बाहर जाकर खोज नहीं करनी पड़ती वह उसके सामने स्वयं आ खड़ा होता है। स्वयं सत्याग्रह के सिद्धांत में ही यह गुण अंतर्निहित है। गाँधीजी ने कहा था, सत्याग्रह पर अमल करते हुए मुझे शुरू के चरणों में ही यह लग गया था कि सत्य के अनुकरण में विरोधी पर हिंसक वार करने की अनुमति नहीं है, बल्कि उसे धैर्य तथा सहानुभूति से अपनी गलती को दूर करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। सत्य को प्रमाणित करने के लिये आत्मपीड़न का रास्ता भी अपनाया जा सकता है।

गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका व भारत में सत्याग्रह के विज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग किया व युद्ध के एकमात्र विकल्प के रूप में सत्याग्रह को प्रस्थापित किया। सत्याग्रह का अनिवार्य परिणाम स्थायी शांति में देखा जा सकता है। अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में सत्याग्रह एवं निःशस्त्रीकरण के विचार कहीं–कहीं अव्यावहारिक जान पड़ते है। कहीं–कहीं गाँधीजी ने समय की आवश्यकता को भी आदर्श के सम्मुख महत्व नहीं दिया। जैसै–द्वितीय महायुद्ध

के समय गाँधीजी ने हिटलर का अहिंसक प्रतिरोध करने का सुझाव दिया। ऐसी स्थिति में इसके भयंकर परिणाम हो सकते थे। अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में सत्याग्रह या निःशस्त्रीकरण के संबंध में गाँधीजी द्वारा यदा–कदा अव्यावहारिक सुझाव संभवतया इस कारण रहा होगा कि गाँधीजी को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सत्याग्रह के प्रयोग का अवसर नहीं मिला।

इस प्रकार की कमियों को दूर कर सत्याग्रह की पद्धति को समयानुकूल बनाने का दायित्व वर्तमान पीढ़ी पर है। साथ ही आने वाली पीढ़ी का यह भी दायित्व है कि वे इस पद्धति को परिस्थितिनुकूल बनाए, किंतु आदर्श के स्तर पर कोई परिवर्तन ना हो। आधुनिक समय मे कुछ नेताओं ने सत्याग्रह का सफलतापूर्वक प्रयोग किया जिससे इस मार्ग की विश्वसनीयता और बढ़ी है। बीसवी सदी में मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने अमेरिका में अश्वेतों के लिये नागरिक अधिकार आंदोलन गाँधीवादी विचारधारा के आधार पर चलाया। मार्टिन लूथर ने स्पष्ट लिखा कि किस प्रकार सामाजिक रूपांतरण की अहिंसक क्रिया का प्रयोग उन्होनें अमरीकी अश्वेतों के लिये किया। इसके अतिरिक्त दक्षिण अफ्रीका में अश्वेतों द्वारा भी रंगभेद के विरूद्ध चलाया गया सत्याग्रह गाँधीजी से प्रभावित था, जिसके प्रभावी परिणाम दक्षिण अफ्रीका में दिखाई दिये।

भारत में गाँधीवादी सत्याग्रह का ताजा उदाहरण अन्ना हजारे के आंदोलन के रूप में देखा गया है। अन्ना के आंदोलन ने अब तक जो हासिल किया वह अमूल्य है एवं गौरवान्वित करने वाला है। इस आंदोलन से यह साबित हो गया कि महात्मा गाँधी के विचार आदर्श, संस्कार और उनके सत्य व अहिंसा के प्रयोग आज भी आम भारतवासी के दिल और दिमाग में गहरी जड़े जमाएं हुए है।

जन लोकपाल बिल को लेकर अन्ना हजारे के 16 अगस्त 2011 से चले आंदोलन को देखकर भारतवासी और विश्व के सभी मुल्कों के लोग अभिभूत थे। देश की राजधानी की सड़कों पर आंदोलित लेकिन अहिंसक लाखों देशवासियों की भीड़ को हिन्दुस्तान की दो–तीन पीढ़ियों ने पहली बार देखा था। उस दृश्य

को देखने के बाद किसी के पास कुछ कहने को शब्द नहीं थे। सभी अवाक थे। वास्तव में यह दृश्य साबित करता है कि सत्याग्रह में शांतिपूर्ण अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने की कितनी ताकत है। असहयोग, अवज्ञा, धरना, उपवास, हिजरत, निष्क्रिय प्रतिरोध आदि का प्रभाव विरोधी पर किसी भी हिंसात्मक मार्ग की अपेक्षा अधिक होता है।

गाँधीजी से पूर्व विश्व में अहिंसा की पारंपरिक धारणा प्रचलित थी, जिसका तात्पर्य था केवल हिंसा न करना। अब तक अहिंसा का व्यक्तिगत रूप ही दिखाई देता था परंतु गाँधीजी ने अहिंसा के व्यक्तिगत संदेश को जन आंदोलन की सफल तकनीक के रूप में देखा। महावीर, बुद्ध, नागसेन, धर्मकृति आदि ने अहिंसा को व्यक्तिगत क्रियाशीलता के सिद्धांत के रूप में देखा। किंतु गाँधीजी ने इसे एक सामाजिक तकनीक के रूप में बदल दिया।

गाँधीजी के अनुसार हिंसा एक विस्तृत वर्ग में आती है व व्यक्तिगत एवं संस्थागत दोनों स्तरों पर व्यक्त होती है। बुरे विचार, बदले की भावना, क्रूरता, धूर्तता, झगड़ा, छल–कपट, अत्यधिक वस्तुओं का संग्रह व्यक्तिगत हिंसा को प्रकट करते है। जबकि शारीरिक दण्ड, कारावास, संपत्ति दण्ड व युद्ध सरकार द्वारा की गई संस्थागत हिंसा को प्रकट करते है। हिंसा की तरह अहिंसा भी समान रूप से व्यापक है व हिंसा का सभी रूपों में निष्प्रभावना का द्योतक है। गाँधीजी के अहिंसात्मक समाज के स्वरूप संबंधी प्रमुख बिन्दु जो उभरकर आते है उनमें स्पष्ट है कि –

1. अहिंसा मानव जाति का नियम है और यह पशुबल से कहीं अधिक महान् है।
2. अहिंसा सामाजिक दृष्टि से उनके लिये उपयोगी नहीं है, जिन्हें ईश्वर एवं प्रेम में आस्था नहीं है।
3. अहिंसा मनुष्य के स्वाभिमान और आत्मसम्मान की तो पूरी तरह रक्षा करती है परंतु जमीन–जायदाद एवं चल संपत्ति के स्वामित्व को सदा संरक्षण प्रदान नहीं करती। अहिंसा का आभ्यासिक पालन संपत्ति की रक्षा

के लिये सशस्त्रधारी व्यक्ति रखने की अपेक्षा अधिक कारगर सुरक्षा प्रदान करता है।

4. अहिंसा समाज में गलत तरीके से कमाए गए लाभों और अनैतिक कृत्यों की रक्षा करने में कोई मदद नहीं करती।
5. अहिंसा के मार्ग पर चलने वाले व्यक्तियों एवं राष्ट्रों को अपनी प्रतिष्ठा के अलावा बाकी सब कुछ बलिदान करने के लिये तैयार रहना चाहिए।
6. अहिंसा सार्वदेशिक, सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक है। यह ऐसी सामाजिक शक्ति है जिसे सभी साध सकते है, चाहे बच्चे, युवा, स्त्री–पुरूष या प्रौढ़ व्यक्ति हर कोई। केवल शर्त यही है कि उन्हें प्रेम के ईश्वर में जीवित आस्था हो, वे समस्त मानव जाति को एक समान प्रेम करते हो।
7. यह मानना गलत है कि अहिंसा का नियम व्यक्तियों के लिये तो ठीक है परंतु मानव समूहों पर कारगर नहीं है। इतिहास के कई आंदोलन इसके उदाहरण है जिनमें बड़ी संख्या में मानव समूहों ने भाग लिया परंतु फिर भी आंदोलन अहिंसक रहे। हाल ही हुआ अन्ना हजारे का आंदोलन इसका उदाहरण है।

अहिंसा का सद्गुण केवल व्यक्तिगत सद्गुण नहीं बल्कि सामाजिक सद्गुण है। इसमें संदेह नहीं कि पारस्परिक व्यवहार में समाज प्रायः अहिंसा की अभिव्यक्ति से ही संचालित होता है। अतः इसका बड़े पैमाने पर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकास किया जाना चाहिए। जिस प्रकार पृथ्वी गुरूत्वाकर्षण के सिद्धांत द्वारा बंधी है उसी प्रकार संपूर्ण विश्व समाज अहिंसा के सूत्र में बंधा है। लेकिन जब गुरूत्वाकर्षण के नियम की खोज हुई तो इस खोज के अनेक ऐसे परिणाम सामने आये जिनका ज्ञान हमारे पूर्वजों को नहीं था। इसी प्रकार, जब समाज की रचना सोच–समझकर अहिंसा के नियमानुसार की जाएगी तो उसकी संरचना की भौतिक विशिष्टियाँ जैसी आज है, उनसे भिन्न होगी। लेकिन इस बात का पूर्वकथन नहीं किया जा सकता कि अहिंसा पर आधारित सरकार किस तरह की होगी।

आज हमारे चारों ओर जो घट रहा है, वह अहिंसा के नियम की उपेक्षा और हिंसा को सिंघासन पर बिठाना है, जैसै कि यही शाश्वत नियम हो। अहिंसा पर आधारित समाज गाँवों में बसे ऐसे व्यक्ति–समूहों के रूप में ही हो सकता है। जिनमें स्वैच्छिक सहयोग, गरिमामय और शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व की शर्त हो।

सशस्त्र संघर्ष की अपेक्षा अहिंसा किसी अन्यायी या अत्याचारी व्यक्ति या समाज को प्रभावित करने का सबसे प्रभावी साधन है। वर्तमान विश्व में कई उदाहरण हमारे समक्ष है जो धरना, प्रदर्शन, उपवास, असहयोग, हड़ताल आदि से संबंधित है। एक अहिंसक व्यक्ति या समाज के ये हथियार है जिनसे शक्ति प्रकट होती है। अहिंसा प्रचण्ड शस्त्र, परम् पुरूषार्थ, वीर–पुरूष की शोभा, मानव की सर्वोच्च शक्ति और ईश्वर का पर्याय है। अहिंसा आत्मा का विशिष्ट गुण एवं सृजनात्मक चेतना है। प्रेम अहिंसा की गत्यात्मक शक्ति है और यही उसे सत्य तक पहुचनें तक गतिशीलता प्रदान करता है।

अहिंसा मानवता की सर्वोच्च शक्ति है। इसके लिये किसी मजबूत शरीर की आवश्यकता नहीं होती। यह सर्वोच्च शक्ति दुबले से दुबले शरीर में भी अर्जित की जा सकती है। हथियार बंद सिपाही अपनी ताकत के लिये अपनी बंदूक या हथियार पर निर्भर रहता है। यदि उससे उसका हथियार छीन लिया जाये तो वह बेबस हो जाता है, लेकिन जिस व्यक्ति ने अहिंसा के सिद्धांत को सही अर्थो में हृदयंगम किया है, उसका हथियार यह ईश्वर प्रदत्त शक्ति होती है। जिसके तोड़ का हथियार दुनिया के पास आज तक नहीं है।

अहिंसा को एक शक्ति के रूप में प्रयोग में लाने के लिये व्यक्ति को आवश्यकता होती है अपने अंदर आत्मबल एवं आत्मानुशासन की शक्ति की स्थापना की। बिना आत्मबल के अहिंसा का प्रयोग लंबे समय तक नहीं किया जा सकता और आत्मानुशासन यदि नहीं हो तो आपकी अहिंसा एक हास्य उदाहरण प्रस्तुत करेगी। आत्मबल से व्यक्ति मजबूत होता है, वह साधारण दोषारोपण, धमकी, बदला, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा से प्रभावित नहीं होता है। आत्मबल

अहिंसा की मूल शक्ति है एवं आत्मानुशासन का पालन व्यक्ति तभी कर सकता है जब मनुष्य के अंदर अपने कार्य के प्रति अनुराग हो।

गाँधीजी ने हरिजन में लिखा है, हमें सत्य और अहिंसा को व्यक्तिगत आचरण की ही नहीं बल्कि समूहों, समुदायों और राष्ट्रों के आचरण की वस्तु बनाना होगा। कम से कम मेरा स्वप्न तो यही है और मैं इसकी प्राप्ति का प्रयास करते हुए ही जीऊँगा और मरूँगा।

सत्य–अहिंसा की अवधारणाएँ एक–दूसरे से इस तरह से जुड़ी हुई है कि, दोनों को एक–दूसरे से अलग करना व्यवहार में बहुत कठिन है। अहिंसा व सत्य पर्यायवाची व्याख्याएँ है। सत्य साधन है एवं अहिंसा उसकी प्राप्ति का एकमात्र साधन। अहिंसा के बिना सत्य का शोध एवं उसकी प्राप्ति असंभव है। सत्य और अहिंसा एक जैसै है, यह धारणा ठीक है। अहिंसक व्यक्ति सत्य बोले और असत्य का आचरण करे तो उसका व्रत भंग हो जाता है। सत्याचरण करने वाला व्यक्ति हिंसा करे तो उसका भी व्रत भंग हो जाता है। यदि कोई व्यक्ति भय के कारण उत्तर ना दे तो वह अहिंसा का व्रत तोड़ता है। सत्य की अनुभूति केवल अहिंसा के द्वारा ही संभव है। हिंसा की जड़ क्रोध, स्वार्थपरता, वासना आदि विभाजक प्रवृत्तियों में है। वर्तमान संदर्भ में यदि हम देखे तो हमें पवित्र साध्यों का निर्धारण करना होगा तत्पश्चात् अहिंसात्मक साधनों से उनकी प्राप्ति के प्रयास सुनिश्चित करने होंगे।

गाँधीजी के विचारों को विकसित करने का सर्वप्रथम बिंदु है अहिंसा का व्यक्ति की आत्मा में प्रादुर्भाव। जहाँ तक व्यक्ति का अंतर्मन अहिंसात्मक नहीं होगा वहाँ तक अन्य गुण जैसै सत्याग्रह, अपरिग्रह, न्यासिता, अस्तेय, आत्मबल, आत्मत्याग, दया, क्षमा, परोपकार आदि उसमें विकसित नहीं हो सकते। इसलिये सर्वप्रथम अहिंसा के प्रति मानव की भावना जाग्रत करने के लिये अहिंसा का प्रशिक्षण उचित प्रतीत होता है। इसके लिये व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में अहिंसा–धर्म का अनुसरण पूरी निष्ठा के साथ करे, निःशस्त्रीकरण को आत्मसात करे, अपने अंदर सहनशक्ति की भावना विकसित करे, सामाजिक अहिंसा के

प्रयास जारी रखे, विनम्र बने, धैर्य, पवित्रता पर बल दे, प्रतिशोध की भावना का अंत करे एवं अपना स्वयं का आत्मनिरीक्षण करता रहे।

आज गाँधीजी के विचारों का आकलन करते समय अंतर्राष्ट्रीय स्थिति को अनदेखा नहीं किया जा सकता। गाँधीजी ने युद्ध व शांति की समस्या को एक नवीन अंतर्दृष्टि प्रदान की। उन्होनें युद्ध को निरपेक्ष अहिंसा के आधार पर अस्वीकार किया है। अंतर्राष्ट्रीय क्षैत्र में न्याय युद्ध या रक्षात्मक युद्ध की दलील को भी उन्होनें अस्वीकार कर दिया। उनका मानना था कि युद्ध विजेता की भी सहायता नहीं करता वह उसे क्रूर या घमंडी बना देता है, इससे उसकी संस्कृति में क्या जुड़ पाता है ? युद्ध हारने वाले की भी सहायता नहीं करता क्योंकि उसका सब–कुछ समाप्त हो जाता है। अतः युद्ध का व्यावहारिक मूल्य क्या है ? किंतु फिर भी उन्होनें समाज में संघर्ष को अपरिहार्य माना है। यह विश्वास व्यक्त किया जाता है कि यदि हम किसी समस्या का हल एक क्रूर बल द्वारा करे तो उसी तरह के बल की प्रतिक्रिया होती है। यह बदले की भावना बदले के लिये शक्ति प्रयोग की एक श्रंखला बना देती है। प्रागैतिहासिक काल में यौद्धाओं ने तीर कमानों का प्रयोग किया जिसके बाद आग्नेय अस्त्रों का जन्म हुआ। इन अस्त्रों ने तोपों और तोपों ने अणु व हाइड्रोजन बमों को जन्म दिया। इस तरह इस अनैतिक वृत को तोड़ने का कोई रास्ता दिखाई नहीं देता और न ही तनावों के निवारण व बल प्रयोग का स्थान लेने वाली कोई शक्ति दिखाई देती है। ऐसी स्थिति में गाँधी की शांतिपूर्ण संघर्ष निवारण की प्रविधि आशा की किरण के समान है। आज यदि एक राष्ट्र कोई सैनिक, आर्थिक या राजनीतिक उपलब्धि प्राप्त करता है तो दूसरा राष्ट्र उससे एक कदम आगे बढ़कर अपना विकास करना चाहता है। इस प्रयास में वह इस बात को भूल जाता है कि उसके प्रयास विकास की ओर है या विनाश की ओर।

आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गाँधी चिंतन का प्रभाव है। विश्व के विभिन्न राष्ट्र गाँधीजी के विचारों पर स्वयं को रखकर परखना चाहते है। निश्चित रूप से विश्व का प्रत्येक कौना गाँधी चिंतन से जुड़ा है। आज अमेरिका महाद्वीप हो

या यूरोप या एशिया अथवा अफ्रीका सभी राष्ट्रों में गाँधी चिंतन का प्रसार हो चुका है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने तो गाँधी चिंतन को प्रभावशाली मानते हुए उनके जन्म दिवस 2 अक्टूबर को अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस घोषित कर दिया है। निःसंदेह गाँधीजी के मूल विचार यदि अंतर्राष्ट्रीय पृष्ठभूमि में काम में लिये जाये तो वे वैश्विक समस्याओं के निराकरण में सहायक हो सकते है।

वर्तमान विश्व एक अराजकता की स्थिति की ओर बढ़ रहा है इसमें संदेह नहीं है। आज शांतिपूर्ण विश्व समाज की स्थापना करना मानवीय अंतर्रात्मा की मूल आवश्यकता है। ऐसे में गाँधीजी के विचार इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध होते है। गाँधी के आदर्शो पर यदि विश्व के विभिन्न राष्ट्र विचार करें और उन्हे व्यावहारिक रूप में अपनाये तो एक शांतिपूर्ण विश्व राजनीतिक समाज की संकल्पना सिद्ध हो सकती है। इस हेतु कुछ सुझाव विश्व कल्याण के मार्ग में उपयोगी साबित हो सकते है–

➢ चूँकि कहा जाता है कि एक बालक का 90 प्रतिशत मानसिक विकास शैशवावस्था के अंत और बाल्यावस्था के प्रारंभ तक पूरा हो जाता है। अतः विश्व में विभिन्न राष्ट्रों के शासनतंत्र को यह प्रयास करना चाहिए कि बाल्यावस्था तक एक अबोध बालक को इस प्रकार की शिक्षा प्रदान की जाये कि वह बालक आगे जाकर एक सभ्य नागरिक बनें। इस दृष्टि से प्राचीन यूनान के एथेंस व स्पार्टा के उदाहरण उपयोगी साबित होंगे।

➢ आणविक युद्ध के भय की तीव्रता को कम करने के लिये पहला कदम परमाणु हथियार संपन्न राष्ट्र अपने–अपने परमाणु हथियारों को नष्ट करने के लिये आगे आये। यहां वे यह बात ध्यान रखे कि परमाणु हथियारों को नष्ट करने से उनकी वैश्विक प्रतिष्ठा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा क्योंकि विकास के कल्याणकारी मार्ग उनके लिये खुले हुए है।

➢ विश्व में इस अवधारणा का विकसित होना कि विश्व एकध्रुवीय है या द्विध्रुवीय है। नितांत आश्चर्यजनक है। क्योंकि विश्व का कोई भी एक राष्ट्र या

दो राष्ट्र सर्वसाधन संपन्न नहीं है। वे केवल यह दावा नहीं कर सकते है कि सभी संसाधन उनके पास पर्याप्त मात्रा में मौजूद है। अतः एकध्रुवीय या द्विधुव्रीय की धारणा को हमें भुलाना होगा।

➢ वैश्वीकरण के इस दौर में जहां सभी राष्ट्र लगभग मिले हुए से है वे अपने अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक संबंधों की शुरूआत से पूर्व यह बात ध्यान रखें कि एक–दूसरे के सांस्कृतिक संबंध सर्वप्रथम स्थापित हों। इसका लाभ होगा कि एक राष्ट्र के नागरिकों एवं दूसरे राष्ट्र के नागरिकों में आत्मीयता की भावना जाग्रत होगी।

➢ विश्व के किसी भी राष्ट्र में स्थानीय स्तर के संगठन से राष्ट्रीय स्तर एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक शांति संगठनों की स्थापना की जाये जो आपस में कड़ी के रूप में जुड़े हुए हो। स्थानीय स्तर की सूचना अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहुंचना अनिवार्य हो ताकि विश्व में घटित होने वाली कोई भी ऐसी स्थिति जो मानवता या किसी राष्ट्र की सुरक्षा के लिये अभिशाप है, के समाधान के प्रयास किये जा सके।

➢ विश्व में आतंकवाद का बड़ा रूप इस्लामिक आतंकवाद के रूप में दिखाई देता है। आतंकवाद के निराकरण हेतु कट्टर धार्मिक उपदेशों में से कल्याणकारी शिक्षाओं को जन साधारण में प्रवाहित किया जाये ताकि यदि आतंकवादी का मन परिवर्तित नहीं हो तो भी उसे जन सहयोग की कमी खलती रहे।

➢ आतंकवाद से निपटने के लिये विश्व के सभी राष्ट्रों को एकजुटता दिखानी होगी ताकि इस भयावह समस्या का निराकरण किया जा सके।

➢ विश्व के लगभग सभी राष्ट्र अपने–अपने शांति जत्थों का गठन करे जो बिना किसी द्वैषभाव के विश्व के सभी राष्ट्रों का भ्रमण कर आपसी सद्भाव का संदेश प्रसारित करे।

➢ सभी राष्ट्र अपनी सीमाओं पर सैनिक चौकियों के स्थान पर मित्रता चौकियाँ स्थापित कर एक भाईचारे की मिसाल कायम करे।

➢ विश्व में आतंकवादी संगठन जिन राष्ट्रों में विद्यमान है, वहां की सरकार को प्रेरित किया जाये कि वह उनके प्रति असहयोग की नीति अपनाये। उन्हें आवश्यक सामग्री की आपूर्ति को रोक दिया जाये जिससे उनकी ताकत कमजोर पड़े।

➢ आज विश्व के कई गरीब राष्ट्र भूखमरी और कुपोषण के शिकार है और अधिकांश राष्ट्र आर्थिक रूप से संपन्न है। इस हेतु सुझाव है कि विश्व के सभी संपन्न एवं अर्द्धसंपन्न राष्ट्र एक वैश्विक कोष की स्थापना करे जो इन पीड़ित राष्ट्रों की समस्या को दूर करने में राहत का काम कर सके।

➢ किसी भी बिन्दु पर सोच का दायरा स्थानीय या राष्ट्रीय स्तर से उठकर अंतर्राष्ट्रीयतावाद या विश्व का कल्याण होना चाहिए।

➢ प्रत्येक राष्ट्र अपने नागरिकों को मनोवैज्ञानिक उपचार प्रदान करे जिससे नागरिकगण क्रोध, हिंसा, घृणा, द्वेष, ईर्ष्या आदि भावनाओं पर नियंत्रण कर पाने में समर्थ हो और अपनी भावनात्मक उर्जा को सकारात्मक दिशा में प्रवाहित कर सके।

➢ औद्योगीकरण संबंधी निर्णय उन उद्योगों में काम करने वाले मजदूर वर्ग की कार्यदशाओं को देखते हुए लिये जाये।

➢ विभिन्न राष्ट्रों के मध्य होने वाली शिखर वाताओं का कोई ठोस परिणाम सामने आना चाहिए। केवल औपचारिक वार्ताएं विश्व शांति के लिये खतरा है।

➢ गाँधीजी के सत्य–अहिंसा संबंधी विचार भारतीय पृष्ठभूमि में ही विकसित हुए थे। वर्तमान में आवश्यकता है कि उनका प्रयोग विश्व स्तर पर किया जाये। इस दृष्टि से एक शंका यह पैदा होती है कि कहीं अहिंसा या निःशस्त्रीकरण के विचार कमजोर राष्ट्रों को ओर कमजोर नहीं बना दे।

➢ संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना अंतर्राष्ट्रीय शांति के लिये की गई थी परंतु संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में ही युद्धों की वैद्यता को स्वीकार किया गया है। पर क्या इस अणुयुग में युद्ध नैतिक रूप से न्यायोचित है। अगर मानव का विनाश युद्ध के परिणामस्वरूप ही हुआ है तो क्या युद्धों को किसी भी स्थिति में न्यायोचित कहा जा सकता है। संयुक्त राष्ट्र संघ को इस बारे में विचार करना होगा।

➢ तात्विक व धार्मिक दृष्टिकोणों की व्याख्या तथा सत्य को प्राप्त करने के सापेक्ष व निरपेक्ष मार्गो का स्पष्ट दर्शन कर लेने पर भी यह मान लेना आसान नहीं है कि सत्य की अनुभूति आसानी से हो जाएगी। सत्यानुभूति स्वप्रयास की एक सतत प्रक्रिया है, जिसके लिये साधक में नैतिक गुणों का होना आवश्यक है। व्यक्ति का आचरण सत्य प्रेरित होना आवश्यक है।

➢ शिक्षा के संबंध में ऐसी मान्यता है कि बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा अपने घर से ही मिलना प्रारंभ हो जाती है। उसे देने के लिये माता–पिता को शिक्षित एवं संस्कारी बना देने से बालक का भावी शैक्षिक स्वरूप निखरेगा एवं वह श्रेष्ठ सामाजिक प्राणी बन सकेगा।

➢ आज राजनीतिक क्षैत्र में उच्च मानवीय मूल्यों की संकल्पना गौण होती जा रही है। स्वार्थ, लोभ एवं स्वेच्छाचारिता का बोलबाला सर्वत्र दिखाई देता है। गाँधीजी की राजनीति के आध्यात्मिकरण की अवधारणा का प्रभाव भी दिखाई नहीं देता अतः आवश्यक है कि राजनीति में नैतिकता, ईमानदारी, दया, परोपकार की भावनाएँ विकसित की जाये।

➢ आमजन की शासन में भागीदारी सुनिश्चित की जाये ताकि नागरिक अपने को ठगा–सा महसूस नहीं करे और अपनी क्षमता के अनुरूप योगदान राष्ट्रीय विकास हेतु प्रदान करे।

➢ शक्तियों का केंद्रीकरण आमजन में शासनतंत्र के प्रति दुर्भावना पैदा करता है। अतः राजनीतिक व्यवस्था को इस प्रकार की कौशिश करना चाहिए कि निचले स्तर तक शक्तियों का विकेंद्रीकरण हो।

➢ वर्तमान समय में विरोध के तरीकों में शालीनता लाना भी एक चुनौतीपूर्ण काम है। आज भी धरना, प्रदर्शन के दौरान हिंसा आगजनी एवं चक्काजाम जैसी घटनाएँ आम बात है। अतः सत्याग्रह के गाँधीवादी तरीकों को जन–जन तक पहुँचाना भी विश्व समुदाय के समक्ष एक आवश्यक कार्य होना चाहिए।

➢ एक पूँजीपति का ध्यान न्यासिता की ओर दिलाने के लिये प्रयास करना होगा कि ऐसा वातावरण निर्मित किया जाये कि जिसमें श्रमिक व पूँजीपति में सहयोग की भावना बढ़े, भावनात्मक संबंध मजबूत हो तभी न्यासी के रूप में पूँजीपति वर्ग दिखाई देगा। विश्व के दानदाताओं की जानकारी जन–जन तक पहुँचाई जानी चाहिए। ताकि व्यक्तियों का मन परिवर्तित हो सके।

➢ अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में मध्यस्थता का विचार लाभदायक है, परंतु मध्यस्थ्ता करने वाला राष्ट्र यदि किसी एक पक्ष का हितेषी हो जाये तो वहां अन्याय की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसका विरोध विश्व के राष्ट्रों को करना चाहिए।

➢ जिस प्रकार की कूटनीति चीन द्वारा पाकिस्तान को समय–समय पर सहयोग देकर उसे भारत के विरूद्ध सैनिक सहायता देकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उसकी गलत नीतियों की तारीफ एवं समर्थन कर अपनायी जा रही है। विश्व के राष्ट्रों को ऐसी गलत नीतियों का पुरजोर विरोध करना चाहिए।

हमारी विश्व स्तर की सोच तभी विकसित होगी जब हम अपने दैनिक विचारों को गाँधीजी के जीवन संदेश के अनुरूप ढालने का प्रयास करे। इससे जुड़े कुछ प्रश्नों के उत्तर सुझाव स्वरूप प्रस्तुत है–

गाँधी के दर्शन को किसी भी विचारधारा से नहीं बांधा जा सकता है। उनके विचारों में इतने केंद्र बिंदु है, उनके चिंतन में इतनी सूक्ष्मता व ऐसी

व्यापकता है कि उनके विचार एक साथ कभी पूर्व आधुनिक, कभी आधुनिक तो कभी उत्तर आधुनिक प्रतीत होते है। परंतु वास्तविकता यह है कि गाँधी को किसी भी निश्चित वर्ग का विचारक कह पाना अथवा उनके विचारों को किसी निश्चित विचारधारा में वर्गीकृत करना कठिन है। अतः श्रेयस्कर तो यहीं होगा कि उन्हें प्रत्येक प्रकार के वर्गीकरण से परे रखा जाए।

विचारधाराओं का वर्गीकरण पश्चिमी चिंतन की देन है। पूर्वी ज्ञान परंपरा तो सतत् चलने वाली एक प्रक्रिया है। यहां नवीन विचारधारा का प्रादुर्भाव पूर्ववर्ती विचारधारा के विरोध में नहीं होता वरन् पूर्व स्थित धारणा को और अधिक संपुष्ट, परिपोषित व समृद्ध बनाने के लिए होता है। गाँधी चिंतन शैली में भी मानव–मानव की एकता एक सार्वभौमिक सत्य है किंतु यह सार्वभौमिकता एक रस नहीं है। वस्तुतः गाँधी चिंतन जिस आदर्श एकता का पक्षधर है, वह यथार्थगत भेदों के वास्तविक एकीकरण में प्राप्त न होकर उन भेदों में व्याप्त एक अनन्त साम्य के दर्शन से चेतना प्राप्त करता है। फलतः गाँधी के दर्शन को किसी भी निश्चित विचारधारा से बांधने का प्रयास उनके दर्शन की व्यापकता को संकीर्ण बना देना ही होगा। यह कहना असंगत नहीं होगा कि गाँधी का दर्शन सभी संस्कृतियों को बांधने वाली, हर संस्कृति के सकारात्मक पक्षों में आस्था प्रकट करने वाली प्रत्येक जाति व भाषा के प्रति समान सम्मान देने वाली एक अति अन्तरंग मानवीय विचारधारा है।

अपनी दैनिक समस्याओं का सामना करते हुए यह प्रश्न हमारे मन में आता है कि आज गाँधी होने का आसान तरीका क्या है ? आज गाँधी होने का सबसे आसान तरीका है, जो सच्चाई हम महसूस करते है, उस पर अमल करें। आज बाजारवाद के समय में हम दोहरी जिंदगी जीनें का अभ्यास कर रहे है। अगर कोई सत्य पर आरूढ़ रहकर, जीवन जीनें की कोशिश करेगा, तो उसे गाँधी होने का अहसास होगा। वर्तमान दौर में सच्चाई के रास्ते पर चलना गाँधी होने का सबसे आसान तरीका है। चूंकि ऐसा करने में हम अपने आप को विफल पाते है, इसलिये यह सबसे मुश्किल रास्ता भी है। आज हम विज्ञापनों के

दौर में जी रहे है, जो सही नहीं है, उसे झूठ के माध्यम से सही करके दिखाया जाता है। ऐसे माहौल में सत्य पर टिके रहना अपने आप में एक साधना है। भावी पीढ़ी के लिए गाँधीजी ने कहा था कि मेरा जीवन ही मेरा संदेश है।

आज लोग गाँधी बनना क्यों नहीं चाहते? इस प्रश्न का उत्तर इस रूप में दिया जा सकता है कि, आज जब उपभौक्तावादी संस्कृति ने व्यक्ति को अपनी गिरफ्त में ले लिया है। ऐसे दौर में व्यक्ति दोहरे मूल्यों के साथ जिंदगी जीनें की कोशिश कर रहा है। उसको सच का रास्ता ज्यादा कठिन लगता है, इसलिए अपने क्षुद्र स्वार्थो के लिए वह झूठ का दामन थाम लेता है। व्यक्ति अंदर से इतना कमजोर और टूटा हुआ है कि उसको सच्चाई का मार्ग ज्यादा जटिल और दुर्गम नजर आता है। अपने निहित स्वार्थो की पूर्ति में गाँधी अवरोध लगता है, जबकि हमें शैतानी सभ्यता के मार्ग ज्यादा आसान नजर आते है। यहीं कुछ कारण हैं, जिनकी वजह से हम गाँधी बनना नहीं चाहते।

क्या आज गाँधी जैसा बनने की संभावना है? इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक भावना के साथ दिया जा सकता है। भले ही आज बाजारवाद, उपभौक्तावाद और हिंसा समाज में बढ़ रही है, लेकिन यह भी सच है कि दुनियाँ गाँधी के उतनी ही नजदीक पहुंच रही है। इस वक्त पूरी दुनियाँ में हिंसा और अविश्वास का माहौल है। हर व्यक्ति और देश अपना वर्चस्व कायम करने में लगा हुआ है। लेकिन गाँधीजनों का विश्वास है कि व्यक्ति की चेतना न तो मरती है और न ही भविष्य में मरेगी। यह चेतना मुक्ति की तलाश में जब आगे बढ़ेगी, तो गाँधी ही उनके लिए सहारा सिद्ध होंगे। यह कोई मेरी कल्पना नहीं है, बल्कि मिश्र में हुई जनक्रांति इसका उदाहरण है। वर्तमान में भी गाँधी की विचारधारा वाले लोग जगह–जगह से निकल रहे है।

पूरा गाँधी चाहिए या थोड़े गाँधी से काम चल जायेगा? इस प्रश्न का उत्तर गाँधीजी के इस वक्तव्य से लिया जा सकता है कि, जब उनसे पूछा गया था कि आपके जाने के बाद आपका प्रतिनिधित्व कौन करेगा? तो गाँधीजी ने कहा था कि, मेरे जाने के बाद ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं होगा, जो मेरा

प्रतिनिधित्व करेगा। मैंने अपने जीवन में जो प्रयोग किए हैं, उसका कुछ न कुछ अंश अनेक लोगों में होगा। लेकिन उस अंश से काम नहीं चलेगा, हमें अंततः समग्र गाँधी चाहिए। हालांकि शुरूआत समग्र से नहीं होती, लेकिन इस दिशा में बढ़ाया गया कदम समग्र तक जरूर पहुंचा सकता है।

वर्तमान समय में रामदेव व अन्ना में से हम किसमें गाँधीजी की छवि देखते हैं ? इस प्रश्न का उत्तर इस रूप में दिया जा सकता है कि, बाबा रामदेव तो गाँधी का क, ख, ग भी नहीं जानते। गाँधी को समझने वाला अगर सत्याग्रह पर बैठेगा तो, गिरफ्तारी से बचने के लिए औंरतों की आड़ नहीं लेगा। गाँधीवादी तो सत्याग्रह के लिए दी जाने वाली कठिन से कठिनतम सजा के लिए तैयार रहता है, उससे भागता नहीं है। जबकि अन्ना हजारे के जीवन में गाँधी का प्रतिबिम्ब देखने को मिलता है। अन्ना ने अपना जीवन गाँधी के मूल्यों के आधार पर जिया है। अन्ना को जो समर्थन मिला, वह समाज का स्वतः स्फूर्त समर्थन था। यह समर्थन उनके जीवन में गाँधी तत्व की प्रधानता और उनकी विश्वसनीयता के कारण मिला। अन्ना के आंदोलन ने भविष्य के आंदोलनों की दिशा तय कर दी।

मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने कहा था, ''मानवता को बनाए रखने के लिए गाँधीजी के सिद्धांतों का अनुसरण अनिवार्य है।'' अतः इस मानवता को हम एक दिन, एक वर्ष या कुछ वर्षों में हासिल नहीं कर सकते। यह एक ऐसा लक्ष्य है जिसे हमें अपने दैनिक जीवन से प्रारंभ करना होगा। इसके लिए गाँधीजी के संकल्पों को अपनाने की प्रतिज्ञा हमें करनी होगी जो है– मैं पृथ्वी पर किसी से नहीं डरूंगा, मैं केवल ईश्वर से ही भय रखूंगा, मैं किसी के प्रति अपने मन में दुराभाव नहीं रखूंगा, मैं अन्याय के समक्ष सिर नहीं झुकाऊंगा, मैं असत्य को सत्य से जीत लूंगा और असत्य का प्रतिकार करने में हर कष्ट सहूंगा। तब कहीं जाकर हम गाँधी मार्ग पर चलने के हकदार होंगे।

*****

संदर्भ ग्रंथ सूची

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सन्दर्भ पुस्तकें

- अग्रवाल एस. एन., ''गाँधीवादी योजना के सिद्धांत'', शिवलाल अग्रवाल, आगरा, 1944
- बन्धोपाध्याय जे., ''सोशल एंड पॉलिटिकल थॉट ऑफ गाँधी'', एलाइड पब्लिशर, बॉम्बे, 1969
- बोदुराँ जान वी., ''कन्वेस्ट ऑफ वायलेंस द गाँधीयन फिलॉसफी कॉफिलिक्ट'', प्रिंसटन यूनिवर्सिटी, न्यूजर्सी, 1958
- बोस एन. के., ''स्टेडिज इन गाँधीज्म'', इंडियन एसोसियेटेड पब्लिशिंग कंपनी, कलकत्ता, 1947
- भंडारी चंद्रराज, ''गाँधी दर्शन'', गाँधी हिन्दी मंदिर, इंदौर, 1959
- भारत सरकार, ''संपूर्ण गाँधी वाङ्मय'',1959
- गौड़ वी. पी., ''महात्मा गाँधी, ए स्टडी ऑफ हिज मैसेज ऑफ नॉन वायलेंस'', स्टर्लिंग पब्लिशर्स, नईदिल्ली, 1977
- धवन जी. एस., ''द पॉलिटिकल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गाँधी'', नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1957
- धर्माधिकारी दादा, ''सर्वोदय दर्शन'', प्रगति प्रकाशन, नईदिल्ली, 1950
- एरिसन ई. एच., ''गाँधीज़ ट्रूथ : द ऑरिजन ऑफ मिलिटेन्ट नॉन वायलेंस'', डब्ल्यू. डब्ल्यू. नॉरटन एंड कंपनी, न्यूयॉर्क, 1969
- फिशर एल., ''द लाईफ ऑफ महात्मा गाँधी'', हार्पर, न्यूयॉर्क, 1983
- गांगुली बी. एन., '' गाँधीज सोशल फिलॉसफी पर्सपेक्टिव एंड रिलेवेन्स'', विकास पब्लिशिंग हाउस, न्यूयॉर्क, 1973
- गुप्ता एस. एन., ''द इकॉनॉमिक फिलॉस्फी ऑफ महात्मा गाँधी'', अशोक पब्लिशिंग हाउस, नईदिल्ली, 1968

- धर्माधिकारी दादा, ''सर्वोदय दर्शन'', अखिल भारतीय सर्व संघ, काशी, 1957
- धर्माधिकारी दादा, ''सर्वोदय दर्शन'', सस्ता साहित्य मंडल, नईदिल्ली, 1951
- धवन गोपीनाथ, ''सर्वोदय तत्व दर्शन'', नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 1963
- सिंह नारायण, ''मार्क्स और गाँधी का साम्यदर्शन'', हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1985
- रामरतन एवं शारदा शोभिका, ''महात्मा गाँधी की राजनैतिक अवधारणा'', कलिंगा प्रकाशन, नईदिल्ली
- सिन्हा भगवानदास, ''आधुनिक संदर्भ और गाँधी विचार'', लक्ष्मीनारायण महाविद्यालय प्रकाशन, विहार, 1970
- सेठी जयदेव, ''गाँधी की प्रासंगिकता'', राधाकृष्ण प्रकाशन, नईदिल्ली, 1979
- शर्मा बिशनस्वरूप, ''गाँधी इज पॉलिटिकल थिंकर'', इंडियन प्रेस, इलाहबाद, 1956
- सिंह रामजी, ''रिलेवन्स ऑफ गाँधीयन थॉट'', क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नईदिल्ली, 1983
- सिंह रामजी, ''गाँधी दर्शन मीमांसा'', बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1986
- उपाध्याय हरिभाऊ, ''गाँधी– व्यक्तित्व, विचार और प्रभाव'', नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1966
- कृपलानी जे. बी., ''गाँधी एक राजनीतिक अध्ययन'', सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 1981

- जैन प्रतिभा, ''गाँधी चिंतन'', राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी'', जयपुर, 1984
- मंगल एस. सी., ''गाँधीयन वे टू वर्ल्डपीस'', बोस एण्ड कंपनी, बंबई, 1960
- सेठी जयदेव, ''गाँधी की प्रासंगिकता'', राधाकृष्ण प्रकाशन, नईदिल्ली, 1979
- शर्मा जी. रंजीत, ''एन इंट्रोडक्शन टू गाँधीयन थॉट'', एटलांटिक पब्लिशर्स, नईदिल्ली, 1991
- दुबे डॉ. श्यामा प्रसाद, ''आधुनिक राजनीतिक विचारधारा'', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी
- दत्त डॉ. धीरेन्द्र मोहन, ''महात्मा गाँधी का दर्शन'', बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1973
- प्रसाद डॉ. उपेन्द्र, ''गाँधीवादी समाजवाद'', नमन प्रकाशन, नईदिल्ली, 2001
- पटेल एम. एस., ''एजुकेशनल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गाँधी''
- ''बुनियादी शिक्षा'', नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 1953
- ''विश्व शांति का अहिंसक मार्ग'', नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 1959
- संपूर्ण गाँधी वाङ्मय, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार नईदिल्ली, 1961–1980
- हिन्द स्वराज, नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद, 1973–1982
- हॉरेस एलेक्जेंडर, ''सोशल एण्ड पॉलिटिकल आइडियाज ऑफ महात्मा गाँधी'', इंडियन काउंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स, नईदिल्ली, 1949

- मिश्रा अनिल दत्ता, ''फंडामेंटल्स ऑफ गाँधीज्म'', मित्तल पब्लिकेशन्स, नईदिल्ली, 1995
- सूद चंद्रशेखर, बहुगुणा निरंजना, ''अंतर्राष्ट्रीय राजनीति'', राधा पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2002
- सुधा खुश्बू, ''धर्म, राजनीति एवं मूल्यहीनता'', पॉइंटर पब्लिशर्स, जयपुर, 1999
- सुथार डॉ. हुकमाराम, ''गाँधी और तिलक : धर्म एवं राष्ट्रवाद'', रितु पब्लिकेशन, जयपुर, 2005
- मिश्रा दामोदर, शुक्ला अखिल, ''मानवाधिकार दशा और दिशा'', पॉइंटर पब्लिशर्स, जयपुर, 2006
- बाथम मनोहर लाल, विश्वकर्मा शिवचरण, ''आतंकवाद चुनौती और संघर्ष'', मेघा बुक्स, 2003
- गुप्ता कमल नयन, ''चर्चित महिलाएँ'', बंशी प्रकाशन, जयपुर, 2009
- खण्डेला मानचंद, ''अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद'', आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, 2002
- शर्मा ए. के., ''गाँधी पर्सपैक्टिव ऑन पॉपुलेशन एण्ड डवलपमेंट'', कॉन्सेप्ट पब्लिकेशन कंपनी, नईदिल्ली, 1996
- पुरी बिन्दु, ''गाँधी एण्ड द मॉरल लाईफ'', मित्तल पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2004
- भारद्वाज अरूणा, भारद्वाज शिप्रा, ''भारतीय लोकतंत्र के विकास में गाँधी नैहरू का योगदान''
- पाल डॉ. विनोद कुमार, ''राजनीतिक विचारधारा'', डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि., नईदिल्ली, 2010

- चढ्ढा कुसुमलता, ''गाँधी : द मास्टर कम्यूनिकेटर'', कनिष्क पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2010
- त्रिपाठी विनायक, ''आधुनिक गाँधी अन्ना हजारे'', आर्या पब्लिकेशन, दिल्ली, 2012
- किगले, ''वर्ल्ड पॉलिटिक्स''
- शर्मा डॉ. प्रेम कुमार, ''वर्ल्ड टेरेरिज्म एण्ड स्ट्रेटेजिज ऑफ अटैक''
- बाला सरोज, ''अंतर्राष्ट्रीय राजनीति''
- यादव डॉ. डी. एस., ''अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक संबंध'', रजत प्रकाशन, नईदिल्ली, 2010
- परूथी डॉ. आर. के., ''आधुनिक उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद और राष्ट्रवाद''
- पाण्डेय उपासना, ''उत्तर आधुनिकतावाद और गाँधी'', रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2007
- त्रिखा राजेश्वर, ''गाँधी, गाँधीज्म एण्ड गाँधीयन''
- बार्थोनिया शेफाली, ''महात्मा गाँधी एवं विश्व'', ए बी डी पब्लिशर्स, जयपुर, 2008
- माथुर कीर्ति, ''गाँधी दर्शन में शक्ति''
- मांडोत डॉ. दिनेश, ''अंतर्राष्ट्रीय संगठन'', अंकित पब्लिकेशन, जयपुर, 2010
- मिश्रा अनिल दत्ता, तातेर सोहन राज, ''हिस्टोरिकल स्पीचेज ऑफ एम. के. गाँधी'', रीगल पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2014
- दाश निबेदिता, ''गाँधी एण्ड नैहरू'', विज्डम प्रेस, नईदिल्ली, 2012
- चढ्ढा कुसुमलता, ''गाँधी वाचन'', कनिष्क पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2009

- गर्ग दामोदर लाल, ''युगावतार महात्मा गाँधी'', अपोलो प्रकाशन, जयपुर, 2009
- गाँधी मोहनदास करमचंद, ''हिन्द स्वराज'', डायमंड पॉकेट बुक्स, नईदिल्ली, 2009
- गाँधी मोहनदास करमचंद, ''सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा'', डायमंड पॉकेट बुक्स, नईदिल्ली, 2009
- सिंह श्री भगवान, ''गाँधी और दलित भारत जागरण'', भारतीय ज्ञानपीठ, नईदिल्ली, 2008
- शर्मा रितुप्रिया, ''गाँधी और मानवाधिकार'', ज्योति प्रकाशन, जयपुर, 2008
- चतुर्वेदी सतीश, ''स्वदेशी और गाँधी चिंतन'', पॉइंटर पब्लिकेशन, दिल्ली, 2008
- शुक्ला प्रवीण, ''गाँधी एण्ड गाँधीगिरी'', डायमंड पॉकेट बुक्स, नईदिल्ली, 2007
- मोदी नृपेन्द्र प्रसाद, ''गाँधी दृष्टि'', माणक पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 2007
- टांक ओम प्रकाश, ''आधुनिक भारतीय चिंतन'', राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2006
- दारिया धरम, ''महात्मा गाँधी : अहिंसा की दमन पर विजय'', मनोज पब्लिकेशन, दिल्ली, 2005
- शर्मा राजेश कुमार, ''गाँधी और नैहरू राजनैतिक शक्ति एवं सामाजिक परिवर्तन'', रितु पब्लिशर्स, जयपुर, 2005
- नाथ राकेश, ''विश्व प्रसिद्ध प्रतिभाएँ'', विश्व बुक्स, नईदिल्ली, 2005
- कृपलानी कृष्ण, ''गाँधी एक जीवनी'', नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, 2005
- गौड़ वीरेन्द्र कुमार, ''विश्व में आतंकवाद'', सामयिक प्रकाशन, नईदिल्ली, 2004

- विवेक रामलाल, ''महात्मा गाँधी : जीवन और दर्शन'', पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2004
- वर्मा ताराचंद, ''युगपुरूष गाँधी'', चिन्मय प्रकाशन, जयपुर, 2004
- गिरिजाशंकर, ''भारत में लोकतांत्रिक समाजवादी आंदोलन'', विश्वभारती पब्लिकेशन्स, नईदिल्ली, 2004
- प्रभाकर विष्णु, ''गाँधी : समय, समाज और संस्कृति'', वाणी प्रकाशन, नईदिल्ली, 2000
- प्रभु आर. के., ''गाँधी नयी सदी के लिये'', रावत पब्लिकेशन्स, 2000
- प्रभु आर. के., ''महात्मा गाँधी के विचार'', नेशनल बुक ट्रस्ट, अहमदाबाद, 1997
- फड़िया बी. एल., ''अंतर्राष्ट्रीय संबंध'', साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 1997
- नागौरी एस. एल., ''भारत का मुक्ति संग्राम'', राजस्थान पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 1997
- भारती के. एस., ''द फिलॉसफी ऑफ सर्वोदय'', इन्दुज पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 1990
- माधवन ए. एस., ''गाँधी साधना का मार्ग'', अमरावती विद्यापीठ, भागलपुर, 1986
- वर्मा एस. एल., ''राजनीति विज्ञान में अनुसंधान प्रविधि'', राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1980
- नारायण डॉ. इकबाल, ''आधुनिक राजनीतिक विचारधाराएँ'', ग्रंथ विकास, जयपुर, 2005
- त्यागी पी. के., ''भारतीय राजनीतिक विचारक'', विश्वभारती पब्लिकेशन नईदिल्ली, 2013

- बहरवाल मनोज कुमार, ''भारतीय राजनीतिक चिंतक'', हिमांशु पब्लिकेशन, उदयपुर, 2014
- डॉ. राधाकृष्णन सर्वपल्ली, ''गाँधी अभिनन्दन ग्रंथ'', सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, 1955
- जैन माणक, ''गाँधी के विचारों की 21वी सदी में प्रासंगिकता'', आदि पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2010
- प्रधान आर. के., राव यू. आर., ''द माइंड ऑफ महात्मा'', 1945
- हॉरेस एलेक्जेंडर, ''गाँधी थ्रो वेस्टर्न आई'', 1969
- चतुर्वेदी ललित, ''राजनीतिक विचारक कोश'', रितु पब्लिकेशन, जयपुर, 2013
- भाटिया डॉ.शोभा, शर्मा डॉ. अर्पणा, ''गाँधीवाणी'', पारीक बुक डिपो, 2010
- लाल प्रो. रमन बिहारी, पलोड़ सुनीता, ''शैक्षिक चिंतन एवं प्रयोग'', आर लाल बुक डिपो, मेरठ, 2008
- वर्मा डॉ. रामपाल सिंह, ''शिक्षा एवं भारतीय समाज'', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
- मुकालेल जोसेफ, ''गाँधीयन एज्यूकेशन'', डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नईदिल्ली, 2007
- सिंह रामजी, ''गाँधी दर्शन मीमांसा'', बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1973
- श्रीवास्तव प्रतिभा, ''श्री अरविन्द और महात्मा गाँधी के दर्शन का समीक्षात्मक अध्ययन'', क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नईदिल्ली, 1993
- आढ़ा डॉ. आर. एस., ''हमारे युग प्रवर्तक महापुरूष'', शिव बुक डिपो, जयपुर

- गंगल एस. सी., ''दी गाँधीयन वे टू वर्ल्ड पीस'', वोरा एण्ड कंपनी, बंबई, 1960
- ढेबर यू. एन., ''गाँधी–ए प्रैक्टिकल आइडियोलोजिस्ट'', भारतीय विद्याभवन, बंबई, 1964
- गुप्त विश्व प्रकाश, गुप्त मोहिनी, ''महात्मा गाँधी–व्यक्तित्व और विचार'', राधा पब्लिकेशन, नईदिल्ली, 1996
- गाँधीजी, ''सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा'', नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद,
- वर्मा डॉ. एस. एल., मिश्रा डॉ. मधु, ''महात्मा गाँधी एवं धर्मनिरपेक्षता'', राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1999
- कोठारी रजनी, ''पॉलिटिक्स एण्ड द पीपुल'', अजन्ता पब्लिकेशन, दिल्ली, 1989
- कौशिक आशा, ''गाँधी नयी सदी के लिये'', रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2000
- कृपलानी जे. बी., ''गाँधी–द स्टेट्समैन'', रंजीत पब्लिशर्स, दिल्ली, 1951
- धावन गोपीनाथ, ''द पॉलिटिकल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गाँधी'', नवजीवन, अहमदाबाद, 1951
- तेंदुलकर डी. जी., ''महात्मा : लाईफ ऑफ एम. के. गाँधी'', प्रकाशन विभाग, दिल्ली, भारत सरकार, खण्ड–5
- वर्मा वी. पी., ''द पॉलिटिकल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गाँधी एण्ड सर्वोदय'', आगरा, 1965
- प्रभु आर. के., ''मेरे सपनों का भारत'', नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1960

- प्रसाद महादेव, ''महात्मा गाँधी का समाज दर्शन'', हरियाणा हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 1973
- सिंह रामजी, ''द रेलेवन्स ऑफ गाँधीयन थॉट'', क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नईदिल्ली, 1983
- लाला रमन बिहारी, ''शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार'', रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ
- पचौरी डॉ. गिरीश, ''उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक'', लायल बुक डिपो, मेरठ
- पाण्डेय डॉ. रामशकल, ''शिक्षा की दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय पृष्ठभूमि'', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
- सक्सेना वन्दना, ''गाँधी जीवन और दर्शन'', बी. आर. पब्लिशर्स, जयपुर, 2006
- जैन डॉ. पुखराज, ''राजनीति विज्ञान के मूल आधार'', साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
- मॉर्गेन्थो हँस जे., ''पॉलिटिक्स अमंग नेशन्स''
- आचार्य श्री महाप्रज्ञ, ''अहिंसा–तत्व दर्शन''
- खानकाही निश्तर, अग्रवाल डॉ. गिरिराज शरण, ''आतंकवाद जिम्मेदार कौन ?'', मनोज पब्लिकेशन, दिल्ली
- भारतीय नरेश, ''आतंकवाद'', साहित्य प्रकाशन दिल्ली, 2003
- रत्तू डॉ. कृष्ण कुमार, ''गाँधी दर्शन'', बुक एनक्लेव, जयपुर, 2002
- कोर्टराइट डेविड, ''गाँधी एण्ड बियोण्ड'', 2007
- मार्कोविट्स क्लाउड, ''द–अन गाँधीयन गाँधी'', 2003
- आचार्य नन्दकिशोर, ''सत्याग्रह की संस्कृति'', 2008

- किशोर डॉ. राघवेन्द्र, ''आतंकवाद एवं भारत के सम्मुख खतरे'', इंप्रेशन बुक्स, नईदिल्ली, 2009
- त्रिपाठी अरूण, पाण्डेय अरूण, ''मुस्लिम आतंकवाद बनाम अमेरिका'', वाणी प्रकाशन, नईदिल्ली, 2002
- डाल्टन डेनिस, ''गाँधीज़ पावर'', ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1993
- सेन अमर्त्य, ''हिंसा और अस्मिता का संकट'', राजपाल एण्ड संस, नईदिल्ली, 2006
- पाण्डे मलाबिका, ''गाँधीज़ विजन ऑफ सोशल ट्रांसफोर्मेशन'', रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2011

पत्र–पत्रिकाएँ

- गाँधी – हिन्दी तथा अंग्रेजी त्रैमासिक, गाँधी स्मारक निधि, देहली।
- भूदान यज्ञ – सर्वोदय हिन्दी साप्ताहिक, अखिल भारतीय सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी।
- यंग इंडिया – गाँधी विचार का अंग्रेजी साप्ताहिक, नवजीवन प्रेस, सन् 1919–1933
- विश्व भारती – अंग्रेजी त्रैमासिक, गाँधी मेमोरियल पीस, विश्व भारती प्रकाशन, शांतिनिकेतन।
- सर्वोदय – हिन्दी मासिक, सर्वोदय कार्यालय, मेरठ।
- हरिजन – गाँधी विचार का अंग्रेजी साप्ताहिक, नवजीवन, अहमदाबाद।
- हरिजन सेवक – गाँधी विचार का हिन्दी साप्ताहिक, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद।
- इंडियन ओपीनियन – डरबन, फीनिक्स, 1903–1914
- दी मॉडर्न रिव्यू – कलकत्ता, 1922–1930
- सत्याग्रह मीमांसा – जयपुर

लेख/लघु निबन्ध

- मिश्रा अनिल दत्त, ''सामाजिक न्याय एवं समावेशिक विकास : गाँधीवादी परिप्रेक्ष्य'', लोक प्रशासन, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नईदिल्ली, जुलाई–दिसंबर, 2013
- कुमार शशि भूषण, ''राजनीति का अपराधीकरण'', लोक प्रशासन, भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नईदिल्ली, जनवरी–जून, 2014
- मुनि गुलाबचंद, ''सत्याग्रह बनाम सत्याग्रही मनोभाव'', अभयदूत, अगस्त 14, 1968
- जय प्रकाश नारायण, ''गाँधी एण्ड सोशल रिवोल्यूशन'', गाँधी मार्ग, नईदिल्ली, अक्टूबर, 1969
- शेफाली बार्थोनिया, ''वर्तमान युग में गाँधी की प्रासंगिकता'', गाँधी मार्ग, सितंबर–अक्टूबर, 1990
- प्रभुदास पटवारी, ''फिर गाँधी की जरूरत है'', गाँधी मार्ग, जुलाई 1981
- पाठरी पाण्डे, ''लोकतंत्र और सत्याग्रह'', भारंस जर्नल, सितंबर 22, 1969
- वॉकर, ''गाँधीज मेसेज टू दी वर्ल्ड'', विश्वभारती त्रैमासिक, गाँधी मेमोरियल पीस, अक्टूबर, 1949
- एम. एस. जॉन, ''गाँधीयन कॉन्सेप्ट ऑफ वर्ल्ड ऑर्डर'', गाँधीयन पर्सपेक्टिव, 1992
- लियोनार्ड ए. गोर्डन, ''महात्मा गाँधीज डाइलोग्स विद् अमेरिकन्स'', इकॉनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, मुंबई, जनवरी 26, 2002
- सरकार सुमित, ''द लॉजिक ऑफ गाँधीयन नेशनलिज्म सिविल डिसओबिडियंस'', इंडियन हिस्टोरिकल रिव्यू
- मीणा डॉ. ओमप्रकाश, वर्मा सुरेन्द्र, ''गाँधी चिन्तन एवं कर्मण्यता'', मूल प्रश्न, नवम्बर 2009–जनवरी 2010

शोध पत्रिकाएँ एवं अन्य नियतकालीन पत्रिकाएँ

- इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, इंडियन पॉलिटिकल साइंस एसोसिएशन, पटना।
- पॉलिटिकल साइंस रिव्यू।
- मॉडर्न एशियन स्टडीज।
- एशियन सर्वे।
- एशियन रिकार्डर, नईदिल्ली
- नेशन एण्ड द वर्ल्ड, नईदिल्ली
- द इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, अक्टू–दिसंबर, 2014
- इंडियन सोशल साइंस रिव्यू।
- जर्नल ऑफ इंडियन स्कूल ऑफ पॉलिटिकल इकॉनॉमी।
- ए जर्नल ऑफ पॉलिटिकल एण्ड एडमिनिस्ट्रेटिव डवलपमेंट पॉलिटिकल थ्योरी।
- पॉलिटिकल साइंस एनुअल–1966, सुब्रता मुखर्जी एण्ड सुशीला रामास्वामी।
- दि इकॉनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, समीक्षा, ट्रस्ट पब्लिकेशन, मुंबई।
- इंडिया टुडे, लिविंग मीडिया इंडिया प्रा. लि., नईदिल्ली।
- कादम्बिनी, हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस, नईदिल्ली।
- संस्थान पत्रिका, लोकसभा सचिवालय।
- विधान बोधनी, हिन्दी अंग्रेजी त्रैमासिक पत्रिका, राजस्थान विधानसभा सचिवालय, जयपुर,

समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ

- नवभारत टाइम्स
- हिन्दुस्तान टाइम्स
- राजस्थान पत्रिका
- दैनिक भास्कर
- दैनिक नवज्योति
- इंडियन एक्सप्रेस
- अमर उजाला
- नेशनल हेराल्ड
- जनसत्ता
- राजस्थान वार्षिकी
- प्रतियोगिता दर्पण
- तथ्य भारती, जयपुर
- क्रॉनिकल, हिन्दी मासिक पत्रिका, जयपुर

Websites

- **www.mkgandhi.org**
- **www.hi.wikipedia.org**
- **www.gandhiashramsevagram.org**
- **www.gandhiserve.org**
- **www.gandhipeacefoundation.org**
- **www.nonviolence.org**
- **www.youthgandhi.org**

*****